चित्रकला का इतिहास

लेखक

मुहम्मद असग़र अली क़ादरी

एम० ए० (डिप इन आर्ट) बी० ए० (डाइङ्ग व पेण्टिंग के साथ) सी० टी०

भूतपूर्व कला तथा क्राफ्ट प्राध्यापक

एस० एन० कालिज पीलीभीत, यू० पी०



रामप्रसाद एण्ड संस · आगरा-३

प्रथम संस्करण 1954
द्वितीय संस्करण 1957
तृतीय संस्करण 1965

मूल्य दो रुपये मात्र

विनोद प्रिंटिंग प्रेस आगरा

तृतीय संस्करण के सम्बन्ध में

पुस्तक का तृतीय संस्करण आप के सामने प्रस्तुत करते हुए मुझे हर्ष हो रहा है कि इसका द्वितीय संस्करण इतनी जल्दी समाप्त हो गया है इस को मैं अपनी सफलता नहीं समझता, बल्कि सब कुछ आप सब की कृपा दृष्टि का फल है।

मैंने द्वितीय संस्करण के उन सभी दोषों को सुधार दिया है जो किसी कारण द्वितीय संस्करण में रह गये थे। साथ ही साथ कुछ नवीन साभग्यर उपयोगी विषयों पर भी प्रकाश डाला गया है जो चित्रकला के इतिहास के दृष्टिकोण से बहुत ही महत्वपूर्ण हैं।

—लेखक

दो शब्द

कुछ ही वर्ष पूर्व तक कला चित्रशालाओं एवं कलाकार तक ही सीमित थी। जनता का कला से कोई सम्बन्ध न था। चित्रकार को अपनी आजीविका के लिए या तो किसी धनवान का सहारा लेना पड़ता था, या फिर भूखा मरना होता था, परन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद देश के सामाजिक विचार बदले, कला के मूल्याङ्कन में जनता के दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ। अब हमारा प्रथम कर्तव्य है कि बालकों तथा बालिकाओं को चित्रकला के इतिहास का परिचय दें।

बहुत दिनों से हमारे सहयोगी लेक्चरार इन आर्ट इस बात की कठिनाई अनुभव कर रहे थे कि अब तक कोई ऐसी पुस्तक चित्रकला के इतिहास की प्रकाशन में नहीं आई जिसमें कला के पूर्ण विभागों का वर्णन किया गया हो। इस कारण अध्यापकों को कई पुस्तकों की सहायता लेनी पड़ती थी।

इस कमी को पूरा करने के लिए मैंने 'चित्रकला का इतिहास' पेंटिङ्ग के विद्यार्थियों तथा जन-साधारण के लिए लिखा है।

पाठ्यक्रम में जिन विषयों का उल्लेख है, उन सभी विषयों का वर्णन सरल भाषा में किया है ताकि उर्दू तथा हिन्दी दोनों भाषाएँ जानने वाले विद्यार्थियों को इससे लाभ पहुँचे। यह पुस्तक उन बातों को ध्यान में रखकर लिखी गई है जो मुझे चित्रकला के इतिहास को पढ़ाते समय सामने आती हैं। चित्रकला की प्रत्येक शैली को रोचक बनाने के लिए चित्र भी दिए गए हैं ताकि बालक तथा बालिकाएँ प्रत्येक शैली का सही अभ्यास कर सकें।

इस पुस्तक के लिखने का प्रथम उद्देश्य यह है कि विद्यार्थियों को अपने देश का पढ़ने योग्य चित्रकला का इतिहास प्राप्त हो जाय, ताकि विद्यार्थी प्रत्येक शैली की विशेषताओं को समझ सकें।

साथ ही मैं निम्नलिखित महानुभावों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट

करना अपना कर्तव्य समझता हूँ जिन्होंने अपने उत्तम चित्रों को इस पुस्तक में प्रकाशित करने की आज्ञा प्रदान करके मुझे विशेष सहायता पहुँचाई है।

(1) आर्कलौजिकल विभाग, हैदराबाद
(2) इलाहाबाद म्यूजियम
(3) भारतीय पुरातत्व विभाग नई देहली
(4) श्री अवनीन्द्रनाथ ठाकुर
(5) श्री नन्दलाल बसु
(6) श्री यामिनी राय
(7) श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर
(8) सुश्री लीला आडन माहिया
(9) रानी चन्दा माहिना

मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक उन विद्यार्थियों के लिए लाभदायक सिद्ध होगी जिनके लिए मैंने इसको लिखा है। मैं उन सब विद्वानों का भी आभारी हूँ जिनके लेख इस पुस्तक में लिए गए हैं।

अन्त में मैं अपने प्रकाशक के प्रति कृतज्ञ हूँ जिन्होंने इस पुस्तक को सुन्दरतम बनाने और सजाने में पूरा प्रयत्न किया है, और इस प्रकार कला के विद्यार्थियों को एक उपयोगी भेंट देने में मेरी सहायता की है।

—लेखक

विषय-सूची

अध्याय 1

मनुष्य की उत्पत्ति और चित्रकला

यह विवादास्पद है कि यह संसार, जिसमें हम सब रहते हैं कितना प्राचीन है? इसकी प्रत्येक छोटी-बड़ी वस्तु मनुष्य के लिए बड़ी उपयोगी है। मनुष्य अपने बुद्धि बल से इस संसार की प्रत्येक वस्तु को अपने उपयोग में लाता है। आज जो हम अपने चारों ओर हजारों वस्तुएँ देखते हैं एक समय ऐसा भी था जब ये सब उपलब्ध न थीं। आज मनुष्य हाथी जैसे विशाल जानवर पर चढ़ कर घूमता फिरता है गगन में उड़कर विचरता है मीलों सागर के वक्षस्थल को चीरता हुआ चला जाता है। एक समय था जब यह सब कुछ न था।

पृथ्वी पहले अग्नि के एक विशाल गोले के समान था। यह शनैः-शनैः ठंडी होने लगी, चारों ओर बादल उमड़ आए घने बादल बरसने लगे दिन रात पानी बरसा और पृथ्वी के चारों ओर बड़े-बड़े सागर बन गए। रात दिन की घनघोर वृष्टि से यह लाभ हुआ कि पृथ्वी ठंडी होने लगी और उस पर जीव जन्तु पैदा हो गए। सब प्रथम पौधे जन्मे फिर जल-जीव पैदा हुए।

लाखों-करोड़ों वर्ष बाद दुनियाँ बदली और बराबर बदलती ही रही। विशाल मैदानों में हरे भरे पौधे लहलहाने लगे। करोड़ों वर्ष व्यतीत होने के बाद कुछ ऐसे जल-जीवों का जन्म हुआ जो मछली की भाँति लम्बे तो थे, परन्तु उनके छोटे-छोटे पाँव थे जिनके द्वारा वह सरक सकते थे। इस प्रकार वे अपने शरीर का बोझ पैरों पर सहने लगे। ये जीव आकार में बड़े विशाल थे, वर्तमान काल के हाथी और ऊँट इत्यादि जैसे बड़े जानवर भी उनके सामने बौने जैसे प्रतीत होते थे।

करोड़ों वर्ष व्यतीत होने पर भी वे अपने स्थूल शरीर के कारण तीव्रता से न दौड़ पाते थे। धीरे धीरे इन जीवों में यह अन्तर होने लगा, कि वे अपने स्थूल शरीर को आवश्यकतानुसार छोटा-बड़ा कर लेते थे।

जलवायु के प्रभाव से प्रकृति ने भी उनकी सहायता की। जहाँ पर ठण्ड अधिक थी वहाँ के जानवरों की मोटी खाल के अतिरिक्त बड़े बड़े लम्बे बाल भी निकल आए। धीरे धीरे जानवर दौड़ना सीख गये, इससे उनके बदन में फुर्ती आई। अब चीते, बिल्ली, शेर, बन्दर, ऊँट और हाथी इत्यादि भी पैदा हो गए। इन जानवरों की संख्या दिन प्रति दिन बढ़ने लगी और इनकी वाणी से वन, पहाड़ और मैदान गर्जने लगे। कहा जाता है कि मनुष्य का जन्म इस समय में भी नहीं हुआ था। बड़े बड़े खोजकर्त्ताओं का कथन है कि मनुष्य से पहले बन्दर तथा वन मानुष की उत्पत्ति हुई।

पृथ्वी का उत्तरी भाग चारों ओर हिमाच्छादित था, सिवाय बर्फ के कुछ भी दिखाई नहीं देता था। असह्य ठण्ड के कारण कुछ जानवर दक्षिण की ओर चले गये और कुछ बर्फ में दब कर मर गये। पचास वर्ष हुए बर्फ में दबे हुए एक हाथी का शरीर एक शिकारी को मिला है जो वर्तमान समय में लेनिनग्राड के अजायबघर में रखा हुआ है। यह आजकल के हाथियों से दो गुना बड़ा है। एक प्राचीन पेड़ अमरीका में है जिसकी परिधि लगभग १ किलोमीटर है। बर्फ के कारण वृक्षों का जीवन संकट में था और पृथ्वी पर शेर, चीते इत्यादि जानवरों के भय से रहना असम्भव था। फलतः हजारों बन्दर मर गये।

वन मानुष बन्दरों की अपेक्षा अधिक चतुर थे। वे खड़े भी हो सकते थे। शेर, चीते इत्यादि हिंसक जानवरों से बचाव के कुछ उपाय भी जानते थे। बन्दरों का समय अभी शेष थी इस कारण वे अधिक उन्नति न कर सके और न हिंसक जानवरों से अपनी ज्यादा रक्षा ही कर पाये।

इन्हीं जानवरों से भिन्न गुण वाले एक जीव ने जन्म लिया जिसने अपनी बुद्धि के बल से पृथ्वी तथा सागर पर अपना प्रभुत्व जमा लिया। यह सीधा खड़ा हो सकता था और भयंकर जानवरों से अपने शरीर की रक्षा भी कर सकता था।

जानवर और मनुष्य

जब जानवरों के रूप की हेरा फेरी से मनुष्य रूप हुआ, तो मनुष्यों ने जानवरों की सब क्रियाओं को सीखा और अपनी बुद्धि द्वारा उनको अपना दास बना लिया। यह नव आगन्तुक जीव हमारे पुरखों के रूप में इस पृथ्वी

में अवतरित हुआ और आधुनिक मनुष्य कहलाया। यह जीवधारी अपने हाथ तथा पैरों को स्वेच्छानुसार मोड़ सकता था। हाथों में अँगूठा होने के कारण यह अपने हाथों से जानवरों की अपेक्षा अधिक भारी बोझ उठा सकता था। अपनी बुद्धि से आवश्यकतानुसार नई खोज भी कर लेता था।

सहस्रों वर्ष पूर्व मनुष्य की आकृति वनमानुष जैसी थी। वह अपनी उदरपूर्ति के लिए छोटे तथा बड़े जानवरों का शिकार किया करता था। अभी तक अग्नि प्रयोग में लाने की विधि अज्ञात थी। ये मनुष्य अग्नि से डरते थे। शिकार करने का केवल लाठी ही एक मात्र साधन था। शत्रु का सामना करने में भी लकड़ी उनकी सहायक थी। अभी तक मनुष्य नग्न इधर उधर घूमता फिरता था। उसके शरीर पर बड़े-बड़े बाल थे। इस प्रकार के मनुष्य में इतना परिवर्तन अवश्य हो गया था कि वह एक-दूसरे की आपत्ति काल में सहायता करते थे और सब मिल जुलकर आखेट करने जाते थे। इस काल के मनुष्यों ने पेड़ों को काट-काट कर लकड़ी के भाले इत्यादि तथा अन्य उपयोगी अस्त्र शस्त्र बनाये जिनके द्वारा जानवरों को मारने में बड़ी सुगमता मिली।

उस काल में उनको भोजन मिलना कठिन था। वे मनुष्य जानवरों की भाँति अकेले नहीं थे। उनके पास उनकी सहायता के लिए उनकी बुद्धि थी। मनुष्यों ने आखेट को सरल बनाने के लिए पेड़ों को काटकर उनकी डालियों से तीर कमान, भाले इत्यादि अन्य उपयोगी हथियार बनाए। इन अस्त्र शस्त्रों द्वारा वे बड़े से बड़े और छोटे जानवरों का शिकार किया करते थे। मरे हुए हाथी से उन मनुष्यों ने अधिक काम लिया। अन्य आवश्यक वस्तुओं के अतिरिक्त उन्होंने हाथी दाँत से अपने को सजाने के लिये अच्छे-अच्छे आभूषण बनाए।

जब मनुष्य ने इस संसार में जन्म लिया था, उसको किसी प्रकार के मानसिक विचार व रूप, गन्ध, स्पर्श आदि के विचार प्राप्त न थे। वातावरण ने धीरे धीरे उसको सब बातें सिखा दीं, परन्तु अब तक कोई भाषा नहीं थी।

आरम्भ में जब भाषा का प्रचार नहीं हुआ था, मनुष्य के पास अपने भावों को व्यक्त करने के लिए चित्रकला ही एक साधन था। भावों का चित्रकला में बहुत ऊँचा स्थान है। जितना सुन्दर चित्र होगा उतनी ही अच्छी भावनाएँ होंगी।

धीरे धीरे चित्रों ने भाषा को जन्म दिया और मनुष्य बोलना सीख गया। भाषा ने चित्रकला को वह उन्नति दी जिससे भारत की सभ्यता में चार चाँद लग गये।

यह ठीक है कि कला की कृतियों में कलाकार की अनुभूति या सहानुभूति अभिव्यक्त रहती है। कवि और चित्रकार ऐसे महान् व्यक्ति हैं जो संसार के निवासियों में हलचल मचा सकते हैं। कभी हँसा सकते हैं तो कभी कभी आठ-आठ आँसू रुला भी सकते हैं। हमें इस बात का गौरव है कि भारत में ऐसे ऐसे महान् कवि और चित्रकार जन्म ले चुके हैं जिनकी कीर्ति और नाम सदा सूर्य के समान चमकते रहेंगे।

मार्ग में एक भिखारी बैठा हुआ भिक्षा माँग रहा है। अनेक व्यक्ति उधर से आ जा रहे हैं। बहुत से उसकी ओर ध्यान तक भी नहीं देते और सीधे चले जाते हैं। कुछ मनुष्य ऐसे भी होते हैं जिनका ध्यान तो अवश्य ही उसकी ओर फिर जाता है परन्तु देखते ही मुँह सिकोड़कर चल देते हैं। एक चित्रकार उसके पास आता है उसके भिक्षा पात्र में कुछ पैसे डाल देता है और उसका अभ्यास करने बैठ जाता है। चित्रकार उस भिखारी की प्रत्येक रेखा को अपने हृदय में रंग लेता है और उसका चित्र बनाकर जनता के सम्मुख प्रस्तुत करता है। वही जनता जो भिखारी के प्रति घृणा की दृष्टि से देखती थी चित्र की सराहना करती है क्योंकि चित्रकार की इस रचना में रस होता है। दृष्टिगत कला रसात्मक एवं रमणीय अर्थ की प्रतिपादक है। चित्रकार के लिए यह आवश्यक नहीं कि वह किसी वास्तविक दृश्य का ही अनुकरण करे। यदि उसकी मनोवृत्ति में उच्च विचारधारायें हैं तो वह अधिकतर कल्पना जगत से ही अपनी वस्तु ले लेता है। इस विशेषता को हम चित्रकार की आँखों से देखना पड़ता है क्योंकि कला भी एक प्रकार की भाषा है। कला के ही प्रभाव से बौद्ध धर्म संसार में उन्नति के शिखर पर पहुँचा।

एक कवि अपने हृदय की भावनाओं को काव्यमय शब्दों के द्वारा अभिव्यक्त करता है और एक कलाकार कला की भिन्न भिन्न शैलियों के अनुसार अपने हृदय की भावनाओं को चित्र रूप में अंकित करता है।

कभी-कभी हम चित्रकार के चित्रों पर साधारण रूप से यह प्रश्न करते हैं कि अमुक चित्र का अंग ऐसा क्यों बना है और इस अंग को मोड़ा गया क्यों है? इसका पृष्ठ क्यों बनाई गई है? आदि आदि। इस प्रकार के प्रश्न स्वा

भाविक हैं। इन प्रश्नों पर जब हम ध्यानपूर्वक विचार करते हैं तो जान पड़ता है कि जनता का चित्रकला का सही अभ्यास नहीं है। चित्रकार के चित्रों में यह देखना अनिवार्य है कि चित्रकार जो बात चित्रों द्वारा प्रकट करना चाहता है उसे वह चित्र में अंकित कर सका है अथवा नहीं? यदि वह अपनी अभिव्यक्ति में सफल हुआ तो बस वह कृतार्थ हो चुका और कला की सीमा के पार पहुँच गया।

यहाँ पर भारतवर्ष की चित्रकला, जिसका संसार की चित्रकला में उच्च स्थान है, के इतिहास का वर्णन करते हैं ताकि हमारे देश के बालक तथा बालिकाएँ भारतीय चित्रकला की विशेषताएँ समझ सकें।

भारत की चित्रकला जिसमें इस देश की युग-युग की सम्पत्ति की छाप दिखाई देती है भारतवर्ष के प्रत्येक भाग के कोने कोने में उपलब्ध है। खेद है कि आज यह हमारी उपेक्षा की वस्तु हो चुकी है। हमारा सर्वप्रथम कर्तव्य है कि हम उन चित्रों की रक्षा करें जिनको हमारे पूर्वज चित्रकारों ने अपनी तूलिका से अंकित किया है।

प्रश्न

1 मनुष्य ने किस प्रकार जन्म लिया?

2 'ईश्वर ने मनुष्य को चित्रकला की भावनाएँ जन्म से ही दी हैं।' इस पर अपनी राय दो।

3 'भारतीय चित्रकला की छाप दूसरे देशों की चित्रकला की शैलियों पर पड़ी।' इस पर अपनी राय दो।

अध्याय 2

पूर्व-ऐतिहासिक काल की चित्रकला

भारतवर्ष का इतिहास अत्यन्त प्राचीन माना जाता है। कुछ प्रसिद्ध लेखकों का मत है कि मनुष्य का जन्म सर्वप्रथम भारत में ही हुआ। यदि यह सत्य है तो हमारे देश का इतिहास उसी काल से आरम्भ होता है जब से मनुष्य ने पृथ्वी पर जन्म लिया है।

मनुष्य सर्वप्रथम भारत में पैदा हुआ या नहीं ? इस पर विचार करना व्यर्थ है क्योंकि इसको सिद्ध करने के लिए कोई प्रमाण नहीं हैं। यह ठीक है कि हमारा देश प्राचीन सभ्यता का एकमात्र केन्द्र रहा है जिसका प्रभाव हमारे अन्य देशों पर पड़ा।

पूर्व ऐतिहासिक काल ईसा से 3500 शताब्दी पूर्व तक रहा। इसका प्रमाण शिला-लेखों, धातु के अस्त्र-शस्त्रों, गहनों, मिट्टी के बर्तनों, आदमी तथा जानवरों के उन अस्थि पिंजरों जो भूगर्भ में प्राप्त होते हैं से मिलता है। कन्दराओं की चित्रकारियाँ भी इसका प्रमाण हैं।

प्रस्तर काल

इस काल में मनुष्य को भोजन बड़ी कठिनाई से प्राप्त होता था। भोजन प्राप्त करने के लिए मनुष्यों ने छोटे जानवरों को मारकर खाना आरम्भ कर दिया। आवश्यकताएं ही आविष्कार की जननी हैं।' जब जानवरों के मारने में कठिनाई प्रतीत होने लगी तब मनुष्यों ने पत्थर के अस्त्र-शस्त्र बनाए और उनके द्वारा बड़े-बड़े जानवरों का आखेट भी सरल हो गया। इस काल का मनुष्य समाज में रहना सीख चुका था। अब मनुष्य अग्नि का भी प्रयोग में लाने लगा था। प्रस्तर काल के मनुष्य बड़े साहसी, उद्योगी एवं कलाकार थे। यह काल पच्चीस सहस्र वर्ष पूर्व का अनुमान किया जाता है।

प्रस्तर काल की चित्रकला—मनुष्य हाथी जैसे बड़े और विशाल जानवरों का शिकार करते और उनके दाँतों पर बड़ी सुन्दर चित्रकारी करते थे। हाथी दाँत के सुन्दर से सुन्दर आभूषण बनाकर उनको ऊँट, बैल, घोड़ा आदि जानवरों के चित्रों द्वारा सजाते थे। इससे प्रतीत होता है कि इस काल के मनुष्य बहुत से जानवरों का ज्ञान रखते थे। इन चित्रों के बनाने में बड़ी अच्छी अच्छी रेखाओं का प्रयोग करते थे। उनकी रेखाओं में कोमलता तथा बल का आभास होता था।

नवीन काल

प्राचीन प्रस्तर काल के बाद इस काल का आरम्भ होता है। इस काल के मनुष्य पहले से अधिक सभ्य हो गये थे। इन मनुष्यों ने सिंध तथा गंगा जैसी बड़ी बड़ी नदियों के किनारे पर अपने खेत बनाए और खेती करना आरम्भ कर दिया। परिवार के रूप में निवास करना सीख लिया। खेती को अधिक सफल बनाने के लिए वनों तथा पहाड़ों से जानवर पकड़ कर उनको पालतू बनाते थे। मनुष्यों ने अच्छी संख्या में गाय, बैल, भेड़, और बकरी इत्यादि जानवरों को पकड़ कर न केवल अपनी खेती का सहायक बनाया बल्कि उनका दूध भी अपने प्रयोग में लिया। इस काल के मनुष्यों ने पत्थर की इतनी तीक्ष्ण कृपाणें प्रस्तुत कीं जिनके द्वारा पत्ता को छीला भी जा सकता था।

नवीन काल की चित्रकला—इस काल के चित्रकारों ने हाथी दाँत पर प्रस्तर काल की अपेक्षा कुछ अच्छे चित्र बनाए और आभूषणों तथा वस्तुओं पर सुन्दर जानवरों की आकृतियों से सजावट की। इस काल के चित्रों में रेखाओं का अच्छा प्रयोग हुआ है जिसके जोड़ अच्छे हैं।

प्रस्तर काल तथा नवीन काल की चित्रकला की तुलना

समय के परिवर्तन के कारण इन दोनों कालों के एक-आध चित्र ही पूरी दशा में देखने को मिलते हैं परन्तु जो चित्र इन दोनों समय के गहनों पर बने हुए देखने को मिलते हैं उनसे पता चलता है कि नवीन काल के चित्र प्रस्तर काल के चित्रों से कुछ अच्छे तथा सजीव हैं और उनमें वह भद्दापन नहीं है जो हम को प्रस्तर काल के चित्रों में देखने को मिलता है। इस समय के चित्रों में जानवरों की आकृतियाँ सुन्दर बनी हैं बर्तनों पर तो उनके शरीर के भागों में अनुपात भी ठीक रखा गया है हालांकि इस काल के

चित्रकारों का अनुपात क्या होना है तथा चित्रों में रंग का क्या महत्त्व है ? बिल्कुल पता नहीं था। वह स्वयं उनके हाथों जन्म लेता है।

इस समय के चित्रकारों ने जानवरों के रेखाचित्र बनाए। आधुनिक काल में चित्रकार इन को रेखाचित्र ही बनाते हैं। प्रस्तर काल के चित्रों में जो कमियाँ दिखाई देती हैं उनको इस काल का चित्रकार पूर्ति करता हुआ दिखाई पड़ता है। रेखाओं के साथ आकारों को भरने लगते हैं और कहीं-कहीं पर उनमें भद्दापन उत्पन्न हो गया है फिर भी नवीन काल के चित्र प्रस्तर काल से कुछ हद तक कुछ अच्छे ही दिखाई देते हैं।

धातु काल

इस काल में मनुष्यों ने भूगर्भ से सर्वप्रथम ताँबा प्राप्त किया। इस काल को ताम्र काल भी कहते हैं। ताँबे के औजार पत्थर के अस्त्र शस्त्रों की अपेक्षा अधिक सुन्दर टिकाऊ और तीक्ष्ण होते थे। अन्य धातुओं का मिश्रण करके काँसे का आविष्कार किया गया। इस काल का नामकरण इसी धातु पर किया गया। इस काल के मनुष्य बड़े चतुर थे। वे एक स्थान से दूसरे पर जाते और अपने प्रयोग में आने वाली वस्तुएँ भी अपने साथ ले जाते और ले आते थे।

यातायात के साधन सराहनीय थे। सब लोग सुख से अपना जीवन व्यतीत करते थे। ग्रामों की रक्षा करना अपना कर्तव्य समझते थे। सेना की उन्नति के लिए सड़कें तथा पुल बनाए जिससे सेना की चढ़ाई अति सरल हो गई थी।

कहा जाता है कि नवीन प्रस्तर काल आज से दस हज़ार वर्ष पूर्व समाप्त हो चुका था। इस नवीन काल को ताम्र का काल कहना ही अति उत्तम होगा। इस काल का इतिहास बहुत प्राचीन है। इसका अभी तक पूर्णतः पता नहीं लग सका है। यह सब विद्वानों का कथन है कि भारत निवासियों का इतिहास भी उतना ही प्राचीन है जितना भारतवर्ष का है। इस मत से यह स्पष्ट है कि भारतीय अन्य देशों के निवासियों की अपेक्षा अधिक सभ्य थे और उनमें वे गुण थे जो एक सभ्य मनुष्य में होने चाहिए।

जब चित्रकला की खोज की जाती है तो ज्ञात होता है कि भारतीय चित्रकला का इतिहास भी उतना ही पुराना है जितना कि भारत निवासियों का

है। अतः यह सत्य तो यह है कि भारत निवासियों की चित्रकला में प्रेम एक दृढ़ विचार है। हमारे पूर्वजों में चित्रकारी की प्रवृत्ति आरम्भ में ही विद्यमान रही है। इस कथन की पुष्टि भारतवर्ष की अनेक गुफाएं करती हैं, जिनकी चित्रकारी वर्तमान समय में भी नव जैसी प्रतीत होती है।



चित्र 1– कन्दराओं की कला आकृति

जब मनुष्य ने राक्षसी प्रवृत्ति को छोड़ा तब उसने अपना निवास स्थान पेड़ की डालों में पहाड़ों की सुन्दर कन्दराओं को बनाया। उस समय सब मनुष्यों को घर बनाने का ज्ञान नहीं था।

उन्होंने इन गुफाओं को ठीक किया और साफ करके उनमें रहने लगे। यह मनुष्य का प्रथम कदम माना जाता है कि जिस स्थान पर वह निवास करता है उसको रमणीय बनाये। हमारे पूर्वजों ने इन कन्दराओं को अपनी कला से अत्यन्त सुन्दर बना लिया। इनके कुछ नमूने आज तक मिलते हैं। विद्वानों का मत है कि ये चित्र आज से अनुमानतः दस हजार वर्ष अथवा इससे भी अधिक वर्ष पूर्व के हैं।

धातु काल की चित्रकला—धातु काल के चित्र समय के परिवर्तन के कारण नष्ट हो चुके हैं। कहीं कहीं पर कुछ चित्रों के भाग देखने को मिलते हैं जिनके आधार पर इस काल के चित्रों पर कुछ लिखा जा सकता है। धातु काल के चित्रकारों ने रेखाचित्र बनाए जिनमें मनुष्यों को भागते दौड़ते तथा शिकार करते हुए या शिकार करने के पश्चात मनुष्यों की खुशियों की भावनाओं को व्यक्त करते हुए बड़े ही सुन्दर रूप में दर्शाया है। इस काल के

चित्रकारों ने शिकार करने के दृश्य भी चित्रित किये हैं जिन की रेखाओं के जोड़ बहुत ही सुन्दर हैं।

धातु काल के चित्रकारों ने अपने समय के धातुओं से बने हुए हथियारों के चित्र भी बहुत ही सुन्दर विधि से बनाये हैं जो देखने योग्य हैं। हथियारों की जो रेखाएँ हैं वे सुन्दर हैं और उनमें गति है। रेखाओं के जोड़ आँखों को भले लगते हैं।

धातु काल की चित्रकला की विशेषताएँ

धातु काल के चित्रों की मुख्य विशेषता उनकी रेखाएँ हैं जिनमें गति है और वे सुन्दर भी हैं। इन रेखाओं में वह भद्दापन नहीं है जो हम नवीन काल के चित्रों में देखते हैं। इस काल के चित्रों में चित्रकारों ने रेखाओं के जोड़ों को इस विधि से बनाया है कि उनके जोड़ नहीं दिखाई पड़ते हैं। इस समय के चित्रकारों ने शिकारी जीवन के चित्र इतने सुन्दर बनाये हैं जो आज भी अच्छी दृष्टि से देखे जाते हैं। अन्न उपजाने का ज्ञान उनको अधिक नहीं था। खेती बाड़ी का ज्ञान उनको कम था। अधिकतर शिकार ही उनका भोजन साधन था।

इस समय के चित्रकार अपने हृदय की भावनाओं को रंग तथा तूलिका से प्रकट करते थे जिन की आकृतियाँ सुन्दर हैं और भावों से पूर्ण हैं। इन चित्रों की खूबी क्या है? इसका ज्ञान हम चित्रों को देखने से नहीं होता है। इनकी रेखा यथार्थतापूर्ण तथा प्राचीन है जो अपने समय के सामाजिक जीवन का अच्छा ज्ञान है। इनको देखने से इस समय के सामाजिक जीवन की झाँकी सी रूपरेखा हमारी आँखों के सामने आ जाती है।

प्रागैतिहासिक भारत

जब हम भारतीय चित्रकला के इतिहास के पृष्ठ उलटते हैं तो सब प्रथम हमारी दृष्टि प्रागैतिहासिक काल पर पड़ती है। भारत में प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला के कुछ उदाहरण मिलते हैं। इनको देखने से हृदय प्रसन्न हो जाता है। इस काल की कुछ चित्रकला मध्य प्रान्त की कैमूर पहाड़ियों की गुफाओं के भित्ति चित्रों में मिलती है। जब इन चित्रों को ध्यानपूर्वक देखते हैं तो ज्ञात होता है कि इन चित्रों में अधिकतर चित्र शिकार करते हुए दृश्यों के हैं। ये चित्र अधूरे और बेढंगे हैं जिनमें किसी नियम का पालन नहीं किया गया। इस समय के चित्रकारों ने जो चित्र बनाए हैं उनका रंगा चित्र गहरा

जा सकता है। उन्होंने शिकार करते हुए मनुष्यों की हर मुद्रा (पोज) को बड़ी सुन्दरता से बनाया है। यद्यपि उन चित्रों में किसी नियम का पालन नहीं किया गया है परन्तु फिर भी रेखा चित्र के अत्यन्त सुन्दर उदाहरण हैं। इसमें यह स्पष्ट है कि पूर्वज चित्रकारों का रेखा चित्रण का अच्छा ज्ञान था।

जब विन्ध्याचल की पहाड़ियों की खुदाई हुई तो उस समय की चित्रकला में कुछ उदाहरण मिले, जिनको देखने से ज्ञान होता है कि उस काल के मनुष्यों का जीवन किस प्रकार का था। इन चित्रों के देखने से पता लगता है कि उस काल के मनुष्यों के मनोरंजन का एक मात्र साधन शिकार खेलना था। वह इसके इतने प्रेमी थे कि उन्होंने इन दृश्यों को चित्र द्वारा भी दिखाया है।

रिमायन मिर्जापुर नामक ग्राम के पास जो मंदिर नदी के पूर्व में स्थित है वहाँ प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला के सर्वोत्तम उदाहरण प्राप्त हुए हैं जो अत्यन्त प्राचीन काल के जान पड़ते हैं। इन चित्रों को बनाने में कलाकारों ने गेरू तथा कालिख का प्रयोग किया है। इन गुफाओं के अब भाग में कुछ चित्र अब तक बने हुए पाये जाते हैं। चित्रों का कुछ भाग कहीं-कहीं पर मिट चुका है।



चित्र 2—प्रागैतिहासिक काल के मनुष्य का चित्र

इस समय के अधिकतर चित्र मनुष्यों और पशुओं के हैं, और उनके साथ कुछ चिन्ह भी हैं। इस समय के चित्रकारों ने बारहसिंगा, हाथी और खरगोश के चित्रों को बड़े सुन्दर ढंग से बनाया है जिनको देखने से चित्त प्रसन्न होता है। इन पशुओं का हृदयग्राही और सजीव अंकन हुआ है।

प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला—इस समय के चित्रों में एक चित्र अत्यन्त सुन्दर है जिसमें कुछ मनुष्य एक जंगली सुअर का शिकार कर रहे हैं। शिकारियों में से कुछ गिर पड़े हैं और कुछ शिकारियों के घावों से खून बह रहा है। इन चित्रों में दूसरा चित्र भैंसे का है जो दम तोड़ रहा है जिसको देखने से इस बात का पता चलता है कि वह बहुत जल्दी ही मर जायगा। इसके चारों ओर मनुष्य खड़े हैं जो अपने शिकार को दम तोड़ते देख कर प्रसन्न हो रहे हैं।

कहीं-कहीं भद्दापन दिखाई पड़ता है। ऐसा दिखाई पड़ता है कि समय के परिवर्तन के कारण इस काल के चित्रकारों के चित्रों की रेखाएँ कहीं कहीं पर खराब हो गई हैं। प्रथम दृष्टि में इस प्रकार का दोष इस समय चित्रकारों के ऊपर जाता है परन्तु गहरी दृष्टि से इन चित्रों को देखने से पता चलता है कि यह दोष इस काल के चित्रकारों का नहीं है बल्कि प्रकृति के कारण ऐसा हुआ है।

धातु काल तथा प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला की तुलना

इन दोनों कालों के चित्रों में निम्नलिखित समानताएँ हैं —

(1) दोनों कालों के चित्रों की रेखाएँ सुन्दर हैं।

(2) दोनों कालों के चित्र रेखाचित्र हैं।

(3) दोनों कालों के चित्रों का मुख्य विषय शिकार है तथा वे अपने काल के सामाजिक दर्पण भी हैं।

(4) दोनों कालों के चित्रों में एक प्रकार की रेखाओं का प्रयोग हुआ है।

(5) दोनों कालों के चित्रों का विषय तथा रंग विधान एक समान है।

(6) दोनों कालों के चित्रों में षडंग के सिद्धान्तों का पालन नहीं हुआ है।

दोनों कालों के चित्रों में इतनी समानताएँ होने पर भी दोनों में निम्नलिखित असमानताएँ हैं —

(1) प्रागैतिहासिक काल के चित्र धातु काल के चित्रों से सुन्दर तथा भावपूर्ण दिखाई देते हैं और उनमें वे दोष नहीं हैं जो इस धातु काल के चित्रों में दीखते हैं।

(2) प्रागैतिहासिक काल के चित्रों की भावनाएँ धातु काल के चित्रों से अच्छी हैं तथा उनको अच्छे ढंग से भी दर्शाया गया है।

(3) प्रागैतिहासिक काल के चित्रों की रेखाएँ भावपूर्ण हैं तथा उनमें गति भी है।

(4) प्रागैतिहासिक काल के चित्र मनुष्य तथा पशुओं के हैं और उनके साथ कुछ चिह्न भी हैं परन्तु धातु काल के चित्रों में कुछ चिह्न अधिक हैं।

(5) जानवरों के चित्र जो प्रागैतिहासिक काल के हैं वे धातु काल से बहुत ही अच्छे तथा सुन्दर हैं।

थे। उनकी कृतियाँ प्राचीन भारत की चित्रकला की गौरव हैं। इनको देखकर वर्तमान समय के चित्रकार दाँतों तले अँगुली दबा लेते हैं। इन चित्रकारों ने अपनी कृतियों में सब प्रकार की ध्वनियों को अपनी तूलिका से भली प्रकार दर्शाया है।

जब हम प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला का दर्शन करते हैं तो ज्ञात होता है कि इस काल में कला-कृतियों को अधिक उन्नति मिली। वर्तमान काल के चित्रकार इन कला-कृतियों को ज्यामितिक अलंकार कहते हैं। कुछ भी क्यों न हो लेकिन यह कहे बिना नहीं रहा जा सकता कि प्रागैतिहासिक काल के चित्रकारों को रेखाओं का अच्छा ज्ञान था। इनको बनाने में कोण, आयत और वृत्त आदि का प्रयोग इस ढंग से किया गया है कि उनको देखते ही हृदय खिल उठता है कि इनमें केवल आत्मा डालना और रह गया है। यदि ईश्वर उस काल के चित्रकारों को यह शक्ति प्रदान कर देता, तो ये कलाकार आत्मा भी डाल देते। इस समय की कला-कृतियों में ज्यामितिक आकारों की संख्या अधिक है। वर्तमान चित्रकार इनको ज्यामितिक अलंकार कहते हैं और इनको कला-कृति से पृथक् कर दिया है।



चित्र 3—प्रागैतिहासिक काल का ज्यामितिक आकारों का चित्र

कभी-कभी पर इन कलाकारों ने रिक्त स्थान को आभूषित करने में पशु पक्षियों तथा फूल पत्तियों को बनाया है जिनको वर्तमान काल में प्राकृतिक अलंकारों के नाम से पुकारा जाता है।

अलंकारों को देखने से भली प्रकार प्रतीत हो जाता है कि प्राचीन चित्रकारों को ज्यामितिक आकारों का अच्छा अभ्यास था जिनको इन्होंने अपनी कृतियों में सुन्दरता से दिखाया है।

(6) धातु काल के चित्र समय के परिवर्तन के कारण मिट चुके हैं, परन्तु प्राचीन प्रागैतिहासिक काल के चित्र स्थान को मिलते हैं। (मिर्जापुर)

(7) धातु काल के चित्रों की रेखाएँ सुन्दर नहीं हैं परन्तु प्रागैतिहासिक काल के चित्रों की रेखाएँ सुन्दर तथा सजीव हैं।

(8) प्राचीन काल के चित्रों की शैली यथार्थतापूर्ण है, परन्तु धातु काल के चित्रों की शैली यथार्थतापूर्ण बिल्कुल नहीं है।

(9) प्रागैतिहासिक काल के चित्र जिन भावनाओं को लेकर अंकित किए गए हैं वे प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हैं परन्तु धातु काल के चित्रों में यह बात देखने को नहीं मिलती है।

(10) प्रागैतिहासिक काल के चित्रों को देखने से उस समय का सामाजिक जीवन साफ-सुथरा दिखाई पड़ता है परन्तु धातु काल के चित्रों से सामाजिक जीवन की एक धुंधली रूपरेखा आँखों के सामने खिंच जाती है।

सिन्धु घाटी की सभ्यता का काल

इतिहासकारों ने भारतवर्ष के इतिहास में इस काल को सर्वोच्च स्थान दिया है। यह काल भारत के इतिहास में एक नवीन अध्याय जोड़ता है। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में मिली हुई चीजों को देखकर एक ऐसी सभ्यता का पता चलता है जो वैदिक काल की सभ्यता से भी अधिक प्राचीन थी। इस काल की बनी हुई वस्तुएँ वैदिक काल की वस्तुओं से कई मानों में अधिक बढ़ी-चढ़ी थीं। इतिहासकारों का मत है कि यह काल 3250 ई० पू० से 2750 ई० पू० तक रहा होगा।

मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में जो वस्तुएँ प्राप्त हुई हैं वे भारत के इतिहास पर एक नवीन प्रकाश डालती हैं। इन सब उदाहरणों को प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला में गिना जाता है। इस समय के चित्रकार अपनी कृतियाँ मिट्टी के बर्तनों तथा पत्थर व लकड़ी पर बनाते थे। इस प्रकार के बने हुए बहुत से चित्र अब तक पत्थरों तथा मिट्टी के बर्तनों पर पाये जाते हैं। खुदाई में जो बर्तन प्राप्त हुए हैं वे इसके साक्षी हैं। इस समय के बर्तनों पर जो चित्र बने हैं उनसे यह स्पष्ट है कि इस काल के चित्रकारों को प्राचीन कलाकारों से कला का अच्छा अभ्यास था और वे कला में अधिक प्रवी

थे। उनकी कृतियाँ प्राचीन भारत की चित्रकला का गौरव हैं। इनको देखकर वर्तमान समय के चित्रकार दाँतों तले अँगुली दबा लेते हैं। इन चित्रकारों ने अपनी कृतियों में सब प्रकार की कहानियों को अपनी तूलिका से भली प्रकार दर्शाया है।

जब हम प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला को देखते हैं तो ज्ञात होता है कि इस काल में कला-कृतियों को अधिक उन्नति मिली। वर्तमान काल के चित्रकार इन कला कृतियों को ज्यामितिक अलंकार कहते हैं। कुछ भी क्यों न हो लेकिन यह कहे बिना नहीं रहा जा सकता कि प्रागैतिहासिक काल के चित्रकारों को रेखाओं का अच्छा ज्ञान था। इनको बनाने में कोण, आयत और वृत्त आदि का प्रयोग इस ढंग से किया गया है कि उनको देखते ही हृदय कह उठता है कि इनमें केवल आत्मा डालना और रह गया है। यदि ईश्वर उस काल के चित्रकारों को यह शक्ति प्रदान कर देता तो ये कलाकार आत्मा भी डाल देते। इस समय की कला-कृतियों में ज्यामितिक आकारों की संख्या अधिक है। वर्तमान चित्रकार इनको ज्यामितिक अलंकार कहते हैं और इनको कला-कृति से पृथक कर दिया है।



चित्र 3—प्रागैतिहासिक काल के ज्यामितिक आकारों का चित्र

कहीं-कहीं पर इन आकारों में रिक्त स्थान की आपूर्ति करने में पशु पक्षियों तथा फूल पत्तियों को बनाया है जिनको वर्तमान काल में प्राकृतिक अलंकारों के नाम से पुकारा जाता है।

अलंकारों को देखने से भली प्रकार प्रतीत हो जाता है कि प्राचीन चित्रकारों को ज्यामितिक आकारों का अच्छा अभ्यास था जिनको इन्होंने अपनी कृतियों में सुन्दरता से दिखाया है।

(6) धातु काल के चित्र समय के परिवर्तन के कारण मिट चुके हैं, परन्तु प्राचीन प्रागैतिहासिक काल के चित्र देखने को मिलते हैं। (मिर्जापुर)

(7) धातु काल के चित्रों की रेखाएँ सुन्दर नहीं हैं परन्तु प्रागैतिहासिक काल के चित्रों की रेखाएँ सुन्दर तथा सजीव हैं।

(8) प्राचीन काल के चित्रों की शैली यथार्थतापूर्ण है, परन्तु धातु काल के चित्रों की शैली यथार्थतापूर्ण बिल्कुल नहीं है।

(9) प्रागैतिहासिक काल के चित्र जिन भावनाओं को लेकर अंकित किए गए हैं वे प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हैं परन्तु धातु काल के चित्रों में यह बात देखने को नहीं मिलती है।

(10) प्रागैतिहासिक काल के चित्रों को देखने से उस समय का सामाजिक जीवन साफ-साफ दिखाई पड़ता है परन्तु धातु काल के चित्रों से सामाजिक जीवन की एक धुंधली रूपरेखा आँखों के सामने खिंच आती है।

सिन्धु घाटी की सभ्यता का काल

इतिहासकारों ने भारतवर्ष के इतिहास में इस काल को सर्वोच्च स्थान दिया है। यह काल भारत के इतिहास में एक नवीन अध्याय जोड़ता है। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में मिली हुई चीजों को देखकर एक ऐसी सभ्यता का पता चलता है जो वैदिक काल की सभ्यता से भी अधिक प्राचीन थी। इस काल की बनी हुई वस्तुएँ वैदिक काल की वस्तुओं से कई मानों में अधिक बढ़ी-चढ़ी थीं। इतिहासकारों का मत है कि यह काल 3250 ई० पू० से 2750 ई० पू० तक रहा होगा।

मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में जो वस्तुएँ प्राप्त हुई हैं वे भारत के इतिहास पर एक नवीन प्रकाश डालती हैं। इन सब उदाहरणों को प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला में गिना जाता है। इस समय के चित्रकार अपनी कृतियाँ मिट्टी के बर्तनों तथा पत्थर के स्तम्भों पर बनाते थे। इस प्रकार किए हुए बहुत से चित्र अब तक पत्थरों तथा मिट्टी के बर्तनों पर पाये जाते हैं। खुदाई में जो बर्तन प्राप्त हुए हैं वे [illegible] हैं। इस समय के बर्तनों पर जो चित्र बने हैं उनसे यह स्पष्ट है कि इस काल के चित्रकारों को प्राचीन कलाकारों से कला का अच्छा अभ्यास था और वे कला के अधिक प्रेमी

थे। उनकी कृतियाँ प्राचीन भारत की चित्रकला का गौरव हैं। इनको देखकर वर्तमान समय के चित्रकार दाँतों तले अँगुली दबा लेते हैं। इन चित्रकारों ने अपनी कृतियों में सब प्रकार की शैलियों को अपनी तूलिका से भली प्रकार दर्शाया है।

जब हम प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला को देखते हैं तो ज्ञात होता है कि इस काल में कला कृतियों को अधिक उन्नति मिली। वर्तमान काल के चित्रकार इन कला कृतियों को ज्यामितिक अलंकार कहते हैं। कुछ भी क्यों न हो लेकिन यह कहे बिना नहीं रहा जा सकता कि प्रागैतिहासिक काल के चित्रकारों को रेखाओं का अच्छा ज्ञान था। इनको बनाने में कोण आयत और वृत्त आदि का प्रयोग इस ढंग से किया गया है कि उनको देखते ही हृदय कह उठता है कि इनमें केवल आत्मा डालना और रह गया है। यदि ईश्वर उस काल के चित्रकारों को यह शक्ति प्रदान कर देता, तो वे कलाकार आत्मा भी डाल देते। इस समय की कला-कृतियों में ज्यामितिक आकारों की संख्या अधिक है। वर्तमान चित्रकार इनको ज्यामितिक अलंकार कहते हैं और इनको कला-कृति से पृथक कर दिया है।



चित्र 3—प्रागैतिहासिक काल का ज्यामितिक आकारों का चित्र

कहीं-कहीं पर इन कलाकारों ने रिक्त स्थान को आभूषित करने में पशु पक्षियों तथा फूल पत्तियों को बनाया है जिनको वर्तमान काल में प्राकृतिक अलंकारों के नाम से पुकारा जाता है।

अलंकारों को देखने से भली प्रकार ज्ञात हो जाता है कि प्राचीन चित्रकारों को ज्यामितिक आकारों का अच्छा अभ्यास था जिनको इन्होंने अपनी कृतियों में सुन्दरता से दिखाया है।

(6) धातु काल के चित्र समय के परिवर्तन के कारण मिट चुके हैं, परन्तु प्राचीन प्रागैतिहासिक काल के चित्र देखने को मिलते है। (मिर्जापुर)

(7) धातु काल के चित्रों की रेखाएँ सुंदर नहीं है परन्तु प्रागैतिहासिक काल के चित्रों की रेखाएँ सुंदर तथा सजीव है।

(8) प्राचीन काल के चित्रों की शैली यथार्थतापूर्ण है परन्तु धातु काल के चित्रों की शैली यथार्थतापूर्ण बिल्कुल नहीं है।

(9) प्रागैतिहासिक काल के चित्र जिन भावनाओं को लेकर अंकित किए गए है वे प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हैं परन्तु धातु काल के चित्रों में यह बात देखने को नहीं मिलती है।

(10) प्रागैतिहासिक काल के चित्रों को देखने से उस समय का सामाजिक जीवन साफ सुथरा दिखाई पड़ता है परन्तु धातु काल के चित्रों से सामाजिक जीवन की एक धुंधली रूपरेखा आँखों के सामने खिंच जाती है।

सिन्धु घाटी की सभ्यता का काल

इतिहासकारों ने भारतवर्ष के इतिहास में इस काल को सर्वोच्च स्थान दिया है। यह काल भारत के इतिहास में एक नवीन अध्याय जोड़ता है। मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में मिली हुई चीजों को देखकर एक ऐसी सभ्यता का पता चलता है जो वैदिक काल की सभ्यता से भी अधिक प्राचीन थी। इस काल की बनी हुई वस्तुएँ वैदिक काल की वस्तुओं से कई मानों में अधिक बढ़ी चढ़ी थी। इतिहासज्ञों का मत है कि यह काल 3250 ई० पू० से 2750 ई० पू० तक रहा होगा।

मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई में जो वस्तुएँ प्राप्त हुई हैं वे भारत के इतिहास पर एक नवीन प्रकाश डालती हैं। इन सब उदाहरणों को प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला में गिना जाता है। इस समय के चित्रकार अपनी कृतियाँ मिट्टी के बर्तनों तथा पत्थर के टुकड़ों पर बनाते थे। इनके प्रस्तुत किए हुए बहुत से चित्र अब तक पत्थरों तथा मिट्टी के बर्तनों पर पाये जाते हैं। खुदाई में जो बर्तन प्राप्त हुए हैं वे इसके साक्षी है। इस समय के बर्तनों पर जो चित्र बने हैं उनमें यह स्पष्ट है कि इस काल के चित्रकारों को प्राचीन कलाकारों से कला का अच्छा अभ्यास था, और वे कला के अधिक प्रेमी

थे। उनकी कृतियाँ प्राचीन भारत की चित्रकला का गौरव हैं। इनको देखकर वर्तमान समय के चित्रकार दाँतों तले अँगुली दबा लेते हैं। इन चित्रकारों ने अपनी कृतियों में सब प्रकार की शैलियों को अपनी तूलिका से भली प्रकार दर्शाया है।

जब हम प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला को देखते हैं तो ज्ञान होता है कि इस काल में कला-कृतियों को अधिक उन्नति मिली। वर्तमान काल के चित्रकार इन कला-कृतियों को ज्यामितिक अलंकार कहते हैं। कुछ भी क्यों न हो लेकिन यह कहे बिना नहीं रहा जा सकता कि प्रागैतिहासिक काल के चित्रकारों को रेखाओं का अच्छा ज्ञान था। इनकी बनावट में कोण आयत और वृत्त आदि का प्रयोग इस ढंग से किया गया है कि उनको देखते ही हृदय कह उठता है कि इनमें केवल आत्मा डालना और रह गया है। यदि ईश्वर उस काल के चित्रकारों को यह शक्ति प्रदान कर देता, तो ये कलाकार आत्मा भी डाल देते। इस समय की कला-कृतियों में ज्यामितिक आकारों की संख्या अधिक है। वर्तमान चित्रकार इनको 'ज्यामितिक अलंकार' कहते हैं और इनको कला-कृति से पृथक कर दिया है।



चित्र 3—प्रागैतिहासिक काल का ज्यामितिक आकारों का चित्र

कहीं-कहीं पर इन कलाकारों ने रिक्त स्थान को आभूषित करने में पशु-पक्षियों तथा फूल पत्तियों को बनाया है जिनको वर्तमान काल में प्राकृतिक अलंकारों के नाम से पुकारा जाता है।

अलंकारों को देखने से भली प्रकार प्रतीत हो जाता है कि प्राचीन चित्रकारों को ज्यामितिक आकारों का अच्छा अभ्यास था जिसका दृष्टान्त अपनी कृतियों में सुन्दरता से दिखाया है।

प्राकृतिक कला कृतियों को जब ध्यान से देखते हैं तो इस बात का पता चलता है कि इस समय के चित्रकारों ने पत्ती, फूल, बेली, पशु तथा पक्षियों का अच्छा अभ्यास किया होगा। प्रत्येक वस्तु के चित्र को जब हम भली भांति देखते हैं तो उसमें सब छोटी बड़ी वस्तुएं मिलती हैं। जब इन चित्रों की आकृतियों की उनके प्राकृतिक आकार से तुलना करते हैं तो दोनों में किसी प्रकार का अन्तर नहीं पाते। यही कारण है कि यह सब अब तक भारत की कला के बहुमूल्य रत्न हैं। इस समय के चित्रों पर इतिहास के विद्वानों ने अपना कोई मत प्रकट नहीं किया है।

सिंधु घाटी सभ्यता काल की गुफायें

प्राचीन काल में अरण्यवासी मनुष्य अपनी गुफाएं बड़े विचित्र ढंग से बनाते थे। मिर्जापुर से रीवा जाने वाली ग्रेट डक्कन रोड पर मिर्जापुर से लगभग 45 किलोमीटर पर लहारीयादह नामक ग्राम के समीप प्रागैतिहासिक काल की अनेक गुफाएं सड़क के किनारे ही देखने को मिलती हैं।

मदुवन्या पथरा, मारहना पथरी, योगी पथरी तथा लक्कड़ पथरा नामक पहाड़ियों में ऐसी सौ गुफाएं मिलती हैं जिनको कि प्रागैतिहासिक काल की गुफाएं अनुमान किया जाता है। इन गुफाओं के भीतर लाल, पीले तथा अन्य रंगों में चार-पांच सहस्र वर्ष प्राचीन चित्रकारी वर्तमान काल में भी देखने को मिलती है। इनके अध्ययन से प्राचीन काल की कला का अच्छा ज्ञान हो सकता है। कुछ विशेषज्ञों का मत है कि इन चित्रों में अधिकतर चित्र जादू के लिए बनाए गये थे।

एक स्थान पर सुसज्जित द्वार के भीतर चारपाई पर पुरुष बैठा हुआ बनाया गया है। यह हो सकता है कि प्राचीनतम काल में गुफा मन्दिर इसी प्रकार के बनाए जाते होंगे।

इन गुफाओं के बाद कश्मीर की सुप्रसिद्ध अमरनाथ गुफा का नाम लिया जाता है। भारत में सबसे प्राचीन गुफाएं गया में पाई जाती हैं जो कि रेलवे लाइन पर बेला स्टेशन से लगभग 12 किलोमीटर पूर्व स्थित हैं। इस स्थान की गुफाएं बड़े बड़े कमरों की भांति बनाई गई हैं। कहीं कहीं पर तो ये दो कमरों के रूप में बनी हैं। इस प्रकार की गुफाओं की संख्या 7 अथवा 8 है। इनमें चमक इतनी की गई है कि मुंह देखा जा सकता है। इन सब गुफाओं में प्राचीन लिपि में लेख भी लिखे हैं।

प्रागैतिहासिक काल के चित्र

हमें खेद है कि इस काल के अधिकतर चित्र नष्ट भ्रष्ट हो चुके हैं। इन चित्रों को देखकर इस युग की चित्रकला का ठीक-ठीक पता नहीं चल सकता। सम्भव है प्राचीन काल की गुफाओं में जो चित्र बने थे उनको मौसम के परिवर्तन ने नष्ट कर दिया हो। लकड़ी के ऊपर की कृतियों को दीमक इत्यादि कीटाणुओं ने चट कर लिया हो परन्तु चित्र-कला की जो पुस्तकें प्राप्त हैं उनमें इस काल की चित्रकला के उच्च-कोटि के विकास का पता चलता है।

1 इस काल के चित्र बहुत कम प्राप्य हैं, परन्तु जो मिलते हैं वे बड़े मनोहर हैं। उनको देखकर बड़ी प्रसन्नता होती है।

2 रामगढ़ रियासत के सिंहनपुर ग्राम में जो चित्र गुफाओं को अलंकृत करते हैं उनमें अधिकांश जानवरों तथा कंगारू के चित्र हैं।

3 होशंगाबाद में दो चित्र मिलते हैं। उनमें एक चित्र एक अश्वारोही का और दूसरा एक दौड़ते हुए हिरन का है।

4 बिहार के चक्रधरपुर के चित्रों में एक चित्र में एक मनुष्य लेटा हुआ है और कुछ उसके समीप बैठे हुए उस व्यक्ति का शिकार रहे हैं।

5 मिर्ज़ापुर जिले के लिखुनिया कोहबार और भलदरिया स्थानों के चित्रों में एक चित्र में कुछ मनुष्य हाथों में भाले लिए हुए बनाये गए हैं। यहीं पर घोड़सवार मनुष्य भी बनाया गया है।

6 विन्ध्याचल की पहाड़ियों में भी इस काल के कुछ चित्र हैं।

7 विजयगढ़ की गुफाओं के एक चित्र में तीन मनुष्य चलते हुए दिखाये गये हैं।

8 मध्य प्रान्त की महादेव पहाड़ियों की दीवारों पर जो चित्र प्राप्त हैं वे अधिकांश शिकार खेलते हुए मनुष्यों के हैं।

9 जम्बू द्वीप के चित्रों का विषय भी इसी काल का अनुमान किया जाता है।

प्रागैतिहासिक काल के रंग

इस काल के चित्रकारों ने अपनी कृतियों में लाल, पीले तथा सफ़ेद रंगों का प्रयोग किया है फलतः चित्रों की सुन्दरता बहुत बढ़ गयी है।

प्रागैतिहासिक काल के चित्रकारों की शैली

इस काल के चित्रकारों की शैली व्यक्ति के आन्तरिक उल्लास और आवेश से परिपूर्ण कही जाती है। यह शैली संसार के अन्य देशों की भाँति भारत में भी देखने को मिलती है। इस काल के चित्र अधिकतर सामाजिक जीवन के दर्पण हैं। इस काल के मनुष्य प्रायः अपनी उदर पूर्ति जानवरों का शिकार करके करते थे। इसी कारण उन्होंने शिकारी जीवन से सम्बन्धित दृश्यों का चित्रण किया है। इसके अतिरिक्त इस काल के चित्रकारों ने अपने आस पास की वस्तुओं तथा जानवरों के चित्र बड़ी सुन्दरता से बनाये हैं। भालों के चित्र बनाने में इस काल के मनुष्यों को बड़ा उल्लास प्राप्त होता था।

प्रागैतिहासिक काल के चित्रों का विषय

इस काल के चित्रों का मुख्य विषय सामाजिक जीवन है। इसके अतिरिक्त उन घटनाओं के चित्र हैं जो इस काल के निवासियों के दिन प्रति दिन के जीवन में सम्बन्ध रखती थीं। इन चित्रकारों ने उन पशुओं के चित्रों का भी चित्रण किया है जिनको वे जंगल से पकड़ कर ले आये थे (हाथी, बकरी, गाय, बैल, भैंसा, ऊँट तथा हिरन आदि-आदि) इनके अतिरिक्त कला-कृतियों को भी अच्छा स्थान दिया था। इनको आधुनिक कलाकार ज्यामितिक रूपाकृति (डिजाइन) के नाम से पुकारते हैं।

प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला

इस काल की चित्रकला में मानव और पशु-युद्ध के विषयों का विस्तृत उल्लेख मिलता है। जैसा पहले कहा जा चुका है। (1) एक चित्र में यह दिखाया गया है कि मनुष्य जंगली बैलों का शिकार कर रहे हैं। शिकारियों में से कुछ गिर पड़े हैं और कुछ के घावों से रक्त बह रहा है (2) इसी प्रकार दूसरा एक चित्र भैंसे के शिकार का है जिसे बर्छों तथा भालों से जख्मी कर दिया गया है और सभी शिकारी चारों ओर खड़े हुए हैं (3) एक बाघ के शिकार का चित्र है। (4) एक अन्य चित्र में हिरन तथा बारहसिंगा दौड़ रहे हैं और शिकारी उनका पीछा कर रहे हैं। (5) होशंगाबाद के एक चित्र में बड़ा ही

निर्मम दृश्य अङ्कित है। हाथी पर से जगली भैसे का शिकार हो रहा है और अनेक व्यक्ति पैदल तथा घोड़ों पर शस्त्र लेकर दौड़ रहे हैं। कहीं-कहीं पर भैसे के ऊपर भयानक आक्रमण हो गया है। अन्य पशु भी इधर-उधर जान बचाकर भाग रहे हैं और उन्हें चारों ओर से घेर लेने का अथक प्रयत्न हो रहा है।



चित्र 4—प्रागैतिहासिक काल का एक शिकारी

प्रागैतिहासिक काल में शिकार खेलने का बड़ा महत्व था। विभिन्न दलों के अन्तर्गत अपने-अपने भोजन एवं शिकार के क्षेत्रों की सीमा के निमित्त भी युद्ध हुआ करते थे। जम्बू द्वीप का एक चित्र बड़ा ही आकर्षक है। उस चित्र में कुछ पैदल सैनिक अश्वारोहियों से युद्ध कर रहे हैं। एक सैनिक विपरीत पक्ष के सेना नायक के सम्मुख आत्म-समर्पण कर रहा है। उसने अपने शस्त्र फेंक दिये हैं और घुटने टेक रखे हैं। विजेता सैनिक उसे कुछ आज्ञा दे रहा है। विजेता पक्ष के सैनिक धनुष बाण तथा ढाल-तलवार लेकर आक्रमण करते दिखाई देते हैं। एक चित्र में एक हाथी पर दो व्यक्ति बैठे हैं और उनके पीछे ढाल लिए एक अंग रक्षक खड़ा है।

प्रागैतिहासिक काल के चित्रों में सम्पूर्ण चित्रों के अतिरिक्त अधिकतर चित्र खण्डित अवस्था में प्राप्त हुए हैं। इसीलिए उनमें विषय सम्बन्धी तारतम्य का पता नहीं चलता, किन्तु प्रत्येक भाग युद्ध की विशेषताओं को व्यक्त करता है।

प्रागैतिहासिक चित्रों में पशुओं के भी उदाहरण मिलते हैं जिनमें कुछ विषय अत्यन्त उल्लेखनीय हैं। एक मोर अपने पंख खुजला रहा है, कुछ बन्दर पेड़ पर बैठे हैं। यह जान कर और भी आश्चर्य होता है कि उस काल में भी भालू का नाच होता रहा होगा क्योंकि एक नाचते हुए भालू का भी चित्र मिला है। एक बैल का ऐसा चित्र है जिसके गले में घण्टी बँधी हुई है। एक घोड़े के पास दो महिलाएँ सिर पर कुछ वस्तुएँ लेकर जा रही हैं। चित्र का कुछ भाग मिट गया है। इससे यह प्रतीत होता है कि घोड़े को माल लादने के काम में लिया जाता रहा होगा।

कुछ नाग न्य एव मूर्ता का वेश भूषा म दिखाई पड़ते हैं। इनको देख कर जगनी नागा जाति की नृत्य कला का स्मरण हो आता है। युद्ध नृत्य के समय नाना प्रकार की मायाविनी वेष भूषा को धारण किया जाता था अथवा विचित्र रंग एवं आकृतियों द्वारा योद्धाओं के मुख को अलकृत किया जाता था। प्राचीन काल में एक ऐसी भी प्रथा प्रचलित थी कि मनुष्य पशुओं को मारकर उनका मस्तक सुरक्षित रखते थे। पशुओं के मुख को इस प्रकार लगाते थे और उनके चर्म को इस प्रकार ओढ़ते थे कि उनसे पशु का आभास होता था। ऐतिहासिक दृष्टिकोण से प्रत्येक चित्र का सम्पूर्ण उल्लेख होना चाहिए जिसमें यह ज्ञात हो कि अमुक चित्र अमुक स्थान पर किस हेतु अङ्कित किया गया है। अध्ययन की दृष्टि से यह बड़ा विस्तृत विषय रहा है किन्तु रचनात्मक दृष्टि से प्रागैतिहासिक चित्रों की प्रतिलिपियाँ तथा तत्कालीन चित्रकला की रूप रेखा समझने में अधिक कठिनाई नहीं होनी चाहिए।

चित्रकला के विद्यार्थियों को रचनात्मक दृष्टि से विचार करना अधिक आवश्यक हो जाता है। चित्रों का विषय वेश भूषाएं कार्य शैली तथा रंगों का ज्ञान यह कुछ ऐसी बातें है, जिनका सम्बन्ध चित्रकला के रचनात्मक विषय से रहा है। अतः यदि हम प्रागैतिहासिक काल के चित्रों में कोई विशेषता दिखाई पड़ती है तो वह यह है कि इनकी मूल रेखाएं और साधारण रंगों का उपयोग विषय की दृष्टि से भी एक ही विचारधारा का सूत्र मिलता है।

प्रागैतिहासिक काल के चित्रों की विशेषता

इन चित्रों की विशेषता इस काल के मनुष्यों के प्रयोगात्मक विषय और राष्ट्रीय विचारधाराएँ हैं। यह प्रकृति की यथार्थ रूप रेखाएं नहीं हैं प्रत्युत काल्पनिक हैं। रंगों की दृष्टि से प्रागैतिहासिक चित्रों में यह विशेषता रही है कि इन चित्रों में साधारण रंगों का प्रयोग किया गया है। ये रंग आज भी साधारण प्रतीत होते हैं।

मिर्जापुर के पास एक गुफा में रंग पीसने का सिल-बट्टा भी मिला है। इससे यह प्रत्यक्ष है कि उस समय के चित्रकार स्वयं रंग तैयार कर लेते थे। यद्यपि कला की यह कला अपनी प्रारम्भिक अवस्था में यथास्थिति नहीं रहा, किन्तु प्रागैतिहासिक काल जिसका समय पचास सहस्र वर्षों के अन्तर्गत रहा है, में नित्य प्रति नवीन आविष्कार होते रहे होंगे। चित्रकला के समस्त

साधन भी धीरे धीरे विकसित हुए होंगे। रंग और तूलिकाओं की भी उन्नति हुई होगी।

प्रागैतिहासिककालीन चित्र केवल पर्वतीय गुफाओं तक ही सीमित नहीं, बल्कि कागज, वस्त्र तथा चमड़े पर भी रहे हैं, किन्तु यह सब सामग्री हमें उपलब्ध नहीं है। इससे यह अनुमान लगाया जाता है कि प्रागैतिहासिक काल की इस कला के पूर्व एक विशेष समय रहा होगा जबकि मनुष्य कलाकारी भी नहीं जानता था अर्थात् मानव जीवन की गति-विधि पशुओं के तुल्य ही थी।

प्रागैतिहासिक काल के रेखा चित्र

रेखा चित्र कम ही भद्दे प्रतीत होते हैं पर उनमें सचाई की व्याख्या केवल इतनी ही होती है कि वे आँखों में जचने पर अच्छे मालूम पड़ते हैं। रेखा चित्रों की रूप रेखा नियमित और आवश्यकतानुसार अङ्कित की जाती है। मोहनजोदड़ो के चित्रों में ऐसी ही आकृतियाँ पाई जाती हैं जो देखने पर अच्छी लगती हैं। इस प्रकार के चित्रों की कसौटी यह रही है कि साधारण व्यक्ति की दृष्टि में अच्छे और ठीक जान पड़ें।

मिट्टी के बर्तनों में इस समय की कला का परिचय मिलता है। बर्तनों पर अनेक प्रकार के चित्र अङ्कित किये हुए हैं। कुछ मुद्राएँ प्राप्त हुई हैं जिन पर पशु-पक्षियों के चित्र बने हुए हैं।

मोहनजोदड़ो की कला में अक्षर एवं लेखन लिपि की कला का सुन्दर विकास प्रतीत होता है। अनेक अक्षर लिपियों में भिन्न भिन्न प्रकार की ऐसी आकृतियाँ हैं जो पशु-पक्षियों के रूपान्तर जान पड़ते हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि यह चित्र लिपि है।

प्रश्न

1 नवीन काल में चित्रकला ने किस प्रकार उन्नति की ?
2 भारतीय चित्रकला की प्रारम्भिक दशा का वर्णन करो ?
3 भारतीय चित्रकला के प्रारम्भिक चित्र कहाँ बनाए गए ? हमारे पूर्वज चित्रकारों को यह स्थान क्यों पसन्द हुआ ?
4 प्रागैतिहासिक काल में चित्रकला ने किस प्रकार उन्नति की ?

5 सिन्धु घाटी की खुदाई में जो वस्तुएं मिली हैं उनसे चित्रकला के इतिहास पर क्या प्रकाश पड़ता है ?
6 प्रागैतिहासिक चित्रों का क्या विषय है ?
7 प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला का वर्णन करो।
8 प्रागैतिहासिक काल की चित्रकला की विशेषताओं का वर्णन करो।
9 प्रागैतिहासिक काल के रेखा चित्र क्यों अच्छे लगते हैं ?
10 प्रागैतिहासिक काल की शैली पर अपनी राय प्रकट करो।

अध्याय 3

प्राचीन काल की चित्रकला

प्रागैतिहासिक काल के इस धुंधले काल के बाद हम भारतीय चित्रकला के उस काल में प्रवेश करते हैं जो अधिक प्रकाश में है। इस काल के चित्रों के विषय में अपेक्षाकृत अधिक निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है।

आर्यों की चित्रकला का ज्ञान वेदों से मिलता है। वेद चार हैं। ऋग्वेद सबसे प्राचीन है। ऋग्वेद की रचना पाश्चात्य विद्वानों के मतानुसार ईसा से दो अथवा तीन सहस्र वर्ष पूर्व की अनुमान की जाती है। भारतीय इतिहास के विद्वान लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक और श्री सम्पूर्णानन्द आदि ने कुछ वेद मंत्रों के आधार पर यह बताया है कि ऋग्वेद के कुछ मंत्र अनुमानतः दस सहस्र वर्ष से अठारह सहस्र वर्ष के प्राचीन हैं। श्री ए० सी० दास ने ऋग्वेद का पच्चीस-तीस सहस्र वर्ष पूर्व तक का अनुमान किया है।

यदि भारतीय विद्वानों का कथन सत्य है, तो वैदिक काल की सभ्यता कम से कम अठारह सहस्र वर्ष प्राचीन है। बहुत से ऐतिहासिक मतदाताओं का कथन है कि हम कोई निश्चित समय नहीं मानते परन्तु यह सत्य है कि ऋग्वेद सबसे प्राचीन है। ऋग्वेद से उस समय की चित्रकला का पता लगता है।

इतिहास के विद्वानों ने यह बात स्वीकार की है कि चित्रकला के जन्मदाता विश्वकर्मा ब्रह्मा हैं जो वैदिक काल के देवता माने जाते हैं। इस युग के जो चित्र मिलते हैं उनकी शैली के विषय में केवल इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि वे अनगढ़ हैं और इनकी कला अपनी अधपकी अवस्था में ही है। किन्तु इतने से ही इस युग की कला की परख नहीं हो सकती।

जब हम अपनी दृष्टि को चित्रकला सम्बन्धी वर्णनों और उल्लेखों की ओर ले जाते हैं तो ज्ञात होता है कि उस काल में भी चित्रकला अपनी उन्नति

के शिखर की ओर जा रही थी। केवल इतना ही नहीं कि वह चित्रकला में दक्ष थे बल्कि उन्होंने चित्रकला को अपने जीवन का एक अंग बना लिया था।

ब्रह्माजी ने एक राजा की अपूर्व भक्ति से प्रसन्न होकर उसके पुत्र के मृत शरीर का चित्र बनाकर उसमें प्राण डाल दिये थे, जिससे वह राजपुत्र जी उठा था। संक्षेप में यह कि विश्वकर्मा ब्रह्मा को कला का आदि गुरु माना गया है। आर्यों के प्राचीन ग्रंथ ऋग्वेद में चमड़े पर बने हुए 'अग्नि देव' के चित्र का उल्लेख किया गया है। महाभारत में एक स्थान पर उषा और उसकी सखी चित्रलेखा का वर्णन आता है। चित्रलेखा ने कृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध का चित्र स्मृति में बनाकर उषा के हृदय को शान्ति प्रदान की थी।

वैदिक काल के आर्यों का जीवन उस समय के चित्रकारों ने अपने चित्रों में दिखाया है। वैदिक काल के इतिहास से मालूम होता है कि आर्यों का जीवन साधारण था। प्रत्येक मनुष्य देवताओं की आराधना करता था। उस काल के मुख्य देवता इन्द्र, अग्नि, सूर्य, वरुण और वायु थे।

इस समय की चित्रकला के कुछ उदाहरण सरगुजा रियासत की रामगढ़ पहाड़ी की जोगीमारा गुफा में मिले हैं। इन चित्रों की निश्चित तिथि अभी तक अज्ञात है परन्तु यह ठीक है कि इस गुफा में वैदिक काल से बौद्ध काल तक के चित्रकारों ने अपने अपने चित्र अंकित किए हैं क्योंकि प्राचीन काल में गुफाएं ही चित्र बनाने का मुख्य स्थान थीं।

जैसा पहले वर्णन किया जा चुका है इस काल के चित्रकारों का रेखाओं का अच्छा अभ्यास था। रेखाओं के द्वारा कलाकारों ने चित्रों को बहुत अच्छा प्रकार अलंकृत किया है।

कलाकारों ने देवताओं के चित्र बड़े सुन्दर ढंग से बनाए हैं जिनको देख कर हृदय प्रसन्न हो जाता है। कुछ चित्रों में ऋषियों के आश्रमों का दृश्य अंकित किया गया है। एक ओर ऋषि बैठे हुए कुछ आनन्द मग्न हुए प्रतीत होते हैं चारों ओर उनके शिष्य ध्यान मग्न बैठे हैं। इससे मालूम होता है कि प्राचीन काल में विद्याध्ययन आश्रमों में किया जाता था।

रामायण काल के चित्रों से स्पष्ट हो जाता कि इस काल तक चित्रकला बड़ी उच्च श्रेणी को प्राप्त हो चुकी थी। इन चित्रों में नियमों का पालन किया गया है। कुछ में चित्रों में दैनिक जीवन की वस्तुओं के भी चित्र बनाए गए हैं। इन चित्रों से उस काल की सभ्यता का भी आभास होता है।

महाभारत काल की चित्रकला

महाभारत के समय चित्रकला उन्नति कर रही थी। इस काल में स्मृति चित्रण ने बड़ी उन्नति कर ली थी। महाभारत में चित्रलेखा का नाम आता है जिसने अपनी सखी उषा को उस काल के सब राजकुमारों के स्मृति से चित्र बनाकर दिखाये थे।

इस समय चित्रकला का अच्छा प्रचार था। चित्रकार चित्र बनाने में निपुण थे। इस युग के चित्र जोगीमारा की गुफाओं में मिलते हैं। इनको गच्च तथा भित्ति में बनाया गया है। इनकी असली आकृति तो नष्ट हो गई है, परन्तु कुछ रेखाएं इसका सूचक हैं कि उस समय के चित्रकारों ने इनको बड़े सुन्दर ढंग से बनाया था। इन चित्रों में पशुओं और मनुष्यों के चित्र बड़े अच्छे ढंग से बने हैं। ये चित्र अप्राप्य मिलते हैं फिर भी इनकी शैली और तत्कालीन वस्तुओं में जो समानता है वह ध्यान देने योग्य है। किनारों पर मकर आदि जल-जीवों के चित्र बने हैं।

पहाड़ियों को काटकर बनाई हुई दीवारों पर भी इस अनेक चित्र अंकित हैं। इन भित्ति चित्रों में से कुछ चित्र किसी कारणवश नष्ट हो गये हैं। इस काल के जो चित्र उपलब्ध हैं वे अपने समय के सामाजिक जीवन के दर्पण हैं। इनको देखकर उस समय की वेष भूषा तथा अस्त्र-शस्त्रों का सही आभास हो जाता है।

यह सत्य है कि बौद्ध-शैली के अजन्ता के चित्र इससे उत्तम रूप हैं। कुछ उल्लेख भी प्राप्त हुए हैं जिनके पढ़ने से ज्ञात होता है कि इस समय भारतवर्ष में चित्रकला का अच्छा प्रचार था। इन चित्रों को वर्तमान काल में भी मान्यता दी जाती है। इस समय के नियमों का पालन वर्तमान काल के चित्रकार भी करते हैं। कुछ चित्रों में इस काल की सभ्यता का ज्ञान होता है।

चित्रकला पर पुस्तकें तथा चित्र ✓

चित्रों के अतिरिक्त कुछ पुस्तकें भी प्राप्त हुई हैं जिनको अच्छे ढंग से लिखा गया है। इनके नाम 'काम-सूत्र', 'चित्र लक्षण' तथा 'चित्र नाट्य' हैं।

'काम-सूत्र' चित्रकला की एक प्रसिद्ध पुस्तक है। इस पुस्तक में चित्रकला के छः अङ्गों का वर्णन किया गया है। उन अङ्गों के नाम इस प्रकार हैं—

वात्स्यायन ने कलाओं को दो भागों में बाँटा — ललित कला

2 उपयोगी कला

(1) रूपभेद—सब प्रकार की आकृतियों और उनकी विशेषताओं की पहचान। इसका सम्बन्ध प्रकृति के अध्ययन, भवन निर्माण तथा प्रकृति की विशेषताओं के ज्ञान से है।

(2) प्रमाण—इसको आजकल 'पर्सपेक्टिव' कहते हैं। इसमें अनुपात, शरीर रचना, निकट और दूर स्थित वस्तुओं की लघुता होती है।

(3) भाव—मस्तिष्क और हृदय के शरीर पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन और विश्लेषण तथा उनका स्पष्टीकरण। चित्रकार केवल शरीर का ही चित्रण नहीं करता, मन का भी अध्ययन करता है। यथार्थ तो यह है कि चित्रकार की तूलिका में भाव प्रधान है। वह भावों द्वारा हृदय का भी चित्रण करता है और स्थूल शरीर का भी।

(4) लावण्य—चित्रों में भावों के साथ-साथ लावण्य की योजना भी होनी चाहिए। लावण्य का अर्थ है बाह्य सौन्दर्य। चित्र में बाह्य सौन्दर्य के लिए चित्र का संयोजन परम आवश्यक है।

(5) सादृश्य—चित्र चाहे जैसा भी हो देखने वाला भ्रम में न पड़ जाय। घोड़े को देखकर गधे का भ्रम न हो।

(6) वर्णिका भङ्ग—इस सिद्धान्त के अन्तर्गत तूलिका और रंगों का प्रयोग आता है।

दूसरी पुस्तक 'चित्र लक्षण' है। इसमें चित्र के लक्षण दिये हुए हैं। एक अध्याय में अनुपात का भी विषय आता है। इसमें लिखा है कि जन साधारण के चित्रों को राजाओं के चित्रों से छोटा बनाना चाहिए। देवता तथा मानवों के चित्रों का अन्तर भी किया है। इस पुस्तक में मुखाकृति के सम्बन्ध में सविस्तार लिखा है।

तीसरा प्राचीन पुस्तक 'शिल्प शास्त्र' है। इस पुस्तक में चित्ररचना की विधि (टैकनिक) पर लिखा है। यह पुस्तक अपने वास्तविक रूप में अब भी मिलती है।

जोगीमारा के चित्र

जोगीमारा गुफा की लम्बाई 3 मीटर, चौड़ाई और ऊँचाई लगभग 2 मीटर बताई जाती है। इस गुफा में लगभग सात आठ चित्र हैं। सात चित्र तो अच्छी दशा में हैं और आठवें चित्र का अधिक भाग नष्ट हो चुका है। कुछ

विद्वानों का मत है कि इस गुफा में कुल मान ही चित्र हैं। इन चित्रों का वर्णन इस प्रकार है—

चित्र नं० 1—इस चित्र में कुछ मनुष्य एवं हाथी और एक मगर का चित्र बना हुआ है। नदी की गति रंगीन रेखाओं में दिखाई गई है। रेखाओं से इस चित्र की सुन्दरता में चार चाँद लग गये हैं।

चित्र नं० 2—इस चित्र में एक वृक्ष के नीचे कुछ मनुष्यों के चित्र अङ्कित हैं। पेड़ की लता, तीन चार शाखियों में एक दो पत्तियाँ लाल रंग से बनाई गई हैं।

चित्र नं० 3—श्वेत भूमि पर काली रेखाओं में एक बाग का चित्र बड़ा ही चित्ताकर्षक है। पुष्पों का रंग लाल है। इस चित्र में दम्पत्ति नृत्य करते हुए दिखाये गये हैं।

चित्र नं० 4—इस चित्र में चित्रकार ने अनुपात का भी ध्यान रखा है। एक स्थान पर इन मनोरंजक आकृतियों में से एक के ऊपर पक्षी की एक चोंच बना दी है।

चित्र नं० 5—इस चित्र में एक नारी पालथी मारे हुए है और कुछ नारियाँ आस-पास खड़ी हुई हैं।

चित्र नं० 6, 7 और 8—नष्टप्राय हो चुके हैं। इस कारण इन चित्रों के विषय अज्ञात हैं।

इन चित्रों के सम्बन्ध में इतिहासकारों के मत भिन्न भिन्न हैं। डा० ब्लौख इन चित्रों का विषय ग्रीक बताते हैं। राय कृष्णदास के मत के अनुसार जैन हैं। श्री हलधर ने अपना मत दिया है कि यह चित्र रायगढ़ के प्राचीन मन्दिरों की दुवारियों से मिलता जुलता है।

जोगीमारा चित्रों की शैलियाँ

यदि इन चित्रों को ध्यानपूर्वक देखा जाय तो ये चित्र बड़े भद्दे और बेतुके प्रतीत होते हैं और ऐसा जान पड़ता है कि इनको अनाड़ी हाथों ने बनाया है। जब एकाग्र चित्त से इन चित्रों का निरीक्षण किया जाता है तो तुरन्त स्पष्ट हो जाता है कि इन चित्रों को सुरक्षित रखने के लिए अकुशल चित्रकारों ने अपनी तूलिका से ऊपर उभारने का असफल प्रयत्न किया है। इस असफल प्रयत्न ने इन चित्रों की समस्त विशेषताओं पर पानी फेर दिया है। कुछ चित्रों की शैलियाँ अजन्ता में मिलती हैं परन्तु इनमें अजन्ता के समान

सुन्दरता नहीं है। रचना कृति की दृष्टि से यहाँ के चित्र अजन्ता की कलाकृतियों के अनुरूप समान हैं। प्राचीन वस्तु और शिल्पकला की शैलियों में जो समानता है उस पर भी ध्यान रखना आवश्यक है।

इस काल के चित्रकारों ने चित्रों में रंगों का भी प्रयोग किया है। चित्र में काले लाल और सफेद रंगों का प्रयोग किया गया है। सफेद रंग मिट्टी से बनाया गया है जो पहाड़ों की चोटियों पर मिलती थी। अनुमानतः काले रंग को किसी फल के छिलके से बनाया जाता होगा परन्तु इसका यथार्थ प्रमाण नहीं मिलता। हो सकता है कि खनिज को ही प्रयोग में लाते हों। किसी किसी स्थान पर पीले रंग का भी प्रयोग किया गया है। उपरोक्त रंगों के प्रयोग से चित्रों की सुन्दरता अधिक बढ़ गई है।

इस युग का विषय अति सङ्कुचित दिखाई पड़ता है। यहाँ केवल मनुष्यों पशुओं तथा भवनों का चित्रण हुआ है। इस युग के चित्रों का विषय कुछ अस्पष्ट सा प्रतीत होता है। जोगीमारा के चित्र अनुभवहीन व अकुशल चित्रकारों के हाथों की रचना कहे जाते हैं। रंग भी फीके मालूम पड़ते हैं। इनकी विधि (टेकनीक) में भी अकुशलता लक्षित होती है। कहीं कहीं पर तो चित्रों को गुफा की खुरदरी दीवारों पर ही अंकित कर लिया है।

इन चित्रों को अधिक स्पष्ट करने तथा अधिक सुरक्षित बनाने में सफलता मिलना कठिन है।

प्रश्न

1 प्रागैतिहासिक काल के बाद हम किस युग में प्रवेश करते हैं? इस युग की चित्रकला का वर्णन करो।
2 रामायण तथा महाभारत के समय की चित्रकला पर प्रकाश डालो।
3 प्राचीन काल की चित्रकला की पुस्तकों का वर्णन करो।
4 जोगीमारा के चित्रों का वर्णन करो।

अध्याय 4

बौद्ध तथा जैन धर्म काल की चित्रकला

ईसा से लगभग 600 वर्ष पूर्व से भारतवर्ष का इतिहास क्रमबद्ध होता है परन्तु चित्रकला का इतिहास इस तिथि से बहुत पहले से ही आरम्भ हो जाता है।

इस समय के आर्य लोग बड़े समृद्धिशाली और धार्मिक प्रवृत्ति वाले थे। इस काल में छोटे छोटे गृहों के स्थान पर गगनचुम्बी प्रासाद (महल) बन गये थे। आर्य लोग ब्राह्मणों का आदर करते थे। कुछ अनार्य इससे अप्रसन्न भी थे। आर्यों की सभ्यता का केन्द्र पंजाब से हटकर गंगा तथा यमुना का मैदान हो गया था। बौद्ध तथा जैन धर्म की ओर जनता बढ़ रही थी। उस काल के नरेशों ने भी बौद्ध तथा जैन धर्म को अपनाया और उन्नति के लिए भरसक प्रयत्न किये। जैन धर्म की अधिक उन्नति नहीं हो सकी लेकिन बौद्ध धर्म भारतवर्ष के अतिरिक्त सुदूर लंका, ब्रह्मा, स्याम, जावा, चीन, तिब्बत और खुतन तक प्रचलित हो गया था। इस कथन की पुष्टि इतिहास तथा खुदाई में प्राप्त वस्तुएँ करती हैं। अन्य वस्तुओं के अतिरिक्त मूर्तियाँ व चित्र भी मिलते हैं। श्री तारानाथ, जो इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान् हैं लिखते हैं कि जहाँ बौद्ध धर्म फैला वहाँ चित्रकार भी बस गये। यथार्थ में श्री तारानाथ जी का कथन सत्य प्रतीत होता है क्योंकि बौद्ध धर्म को अपनी पराकाष्ठा पर पहुँचाने में चित्रकला बड़ी सहायक थी। जब बौद्ध धर्म के प्रचारक अन्य देशों में धर्म प्रचार के लिए गये तब वे अपने साथ धार्मिक चित्रों का संग्रह ले गये। प्रचारकों ने धर्म को चित्रों द्वारा अन्य देश निवासियों को समझाया। इस काल की वेश भूषा, रहन-सहन और चाल-ढाल भारतवासियों से भिन्न थी। जहाँ-जहाँ बौद्ध धर्म का प्रचार था वहीं वहीं प्रतिभा सम्पन्न चित्रकार और कलाकार वर्तमान थे। वास्तव में बौद्ध धर्म चित्रण योग्य है। इसके प्राचीन इतिहास को, जिसे 'जातक' कहते हैं और जिसमें महात्मा बुद्ध के पूर्व जन्म की

गाथाएँ हैं जितना सफलतापूर्वक चित्रों द्वारा व्यक्त किया जा सकता है उतनी सफलता लेखनी को नहीं मिल सकती है। जब बौद्ध धर्म का प्रचार एशिया में फैल गया तो बौद्ध धर्म धुरीण भिक्षुओं के पास चित्रकला के अतिरिक्त और कोई साधन नहीं था।

जब जापान के होरियुजी मन्दिर की चित्रकला को देखते हैं तो तुरन्त अजन्ता चित्रों का दृश्य सामने आ जाता है जो हमारे इस कथन की पुष्टि का एक जीता जागता प्रमाण है।

बौद्ध काल की कला के सबसे उत्तम नमूने अजन्ता की गुफाओं में प्राप्त हैं। अजन्ता की गुफाएं निजाम राज्य के फरदापुर ग्राम में हैं। फरदापुर का निकटतम स्टेशन पहूर ग्राम है जहाँ से फरदापुर लगभग 10 किलोमीटर है। यहाँ एक नदी बहती है जिसको वाघोर नदी कहते हैं। गुफाओं के समीप पहुँचने के लिए इस नदी को पार करना पड़ता है। ये गुफाएं ईसा से 200 वर्ष पूर्व से नवीं छठवीं शताब्दी तक की अनुमान की जाती हैं। ये गुफाएं पहाड़ों के बीच स्थित हैं।

अजन्ता की गुफाएँ दो प्रकार की है —एक चैत्य (जिनमें आराधना करते थे) और दूसरी विहार (जिनमें निवास करते थे)।

इन चित्र द्वारा अपने समय की गुफाओं की दशा बनाई गई है। प्रथम इन गुफाओं को मिट्टी और भूसे से लेपन किया गया है तत्पश्चात् 'जातक' कथाओं के चित्र रंगों से बनाए गए हैं। यदि इन चित्रों की तुलना संसार के अन्य प्राचीन चित्रों से की जाय तो प्रत्युत्तर वहीं नहीं मिलता। अजन्ता में प्रमानाप के भी चित्रों का अंकन किया हुआ है।

मनुष्यों के चित्रों के अतिरिक्त फूल तथा पशुओं के चित्र भी बड़े सुन्दर हैं। फूल के चित्रों में कमल के फूल का चित्र बड़ा सराहनीय है। अजन्ता की कला का मध्य एशिया की कला पर गहरा प्रभाव पड़ा है।

चित्रकारों का कथन है कि अजन्ता के चित्रों का स्थान अब भी सर्वोच्च है। गुफा नं० 1 2 9 10 16 17 21 और 26 के चित्र देखने योग्य हैं। इनके चित्रकारों की शिल्पकला और मूर्तिकला संसार में अद्वितीय गिनी जाती है।

चैत्य गुफाएं विहार गुफाओं से बड़ी हैं और उनके अंतिम सिरे पर स्तूप

बना हुआ है। अजन्ता की सब गुफाओं में गुफा नं० 19 सब से अधिक बड़ी गुफा है।

अजन्ता की कुल गुफाओं की संख्या 29 है। गुफा नं० 1 2 9 10 16 17 21 और 26 की दीवारों के कुछ चित्र बच गये हैं जिनको अवधि ने नष्ट नहीं किया है। शेष गुफाओं के चित्र मिट गये हैं। कुछ गुफाओं की दीवारों और स्तम्भों पर भी चित्रों का अंकन किया हुआ है।

अजन्ता की चित्रकला की निश्चित तिथि बताना कठिन है क्योंकि जो चित्र प्राप्त हुए हैं उनका इतिहास में कोई सम्बन्ध प्रतीत नहीं होता। अधिकतर चित्र महात्मा बुद्ध के जीवन से सम्बन्धित हैं। कुछ इतिहासज्ञों का मत है कि इनका समय 500 ई० से 700 ई० तक है। कुछ विद्वानों का कथन है कि इन चित्रों का समय 200 वर्ष ईसा से पूर्व से लेकर छठवीं शताब्दी तक है। कुछ भी हो परन्तु यह सब विद्वान स्वीकार करते हैं कि गुफा नं० 9 और 10 सबसे प्राचीन हैं क्योंकि इन गुफाओं में अंकित चित्र अमरावती और सांची की मूर्तिकला से मिलते-जुलते हैं।

अजन्ता की चित्रकला

अजन्ता की कृतियों का ध्यानपूर्वक दर्शन से ज्ञात होता है कि ये चित्र सुन्दर कलाकारों के हाथों के द्वारा अंकित किये गये हैं। ये चित्र अति उत्तम और प्रशंसा करने योग्य हैं। यदि हम इनको उस काल के नवीन कलाकारों के अनमोल रत्न कह दें तो अत्युक्ति न होगी। इन चित्रों में भारतीय चित्रकला का इतिहास छिपा हुआ है। इस समय के कुशल चित्रकारों की रचनाएँ जिनका अंकन अजन्ता के भित्ति चित्रों के नाम से पुकारा जाता है उनकी शैली सरल और अकुण्ठित है। मानचित्र पुष्ट और मनोहर हैं। रंग का संयोजन सुन्दर है। हाथों का भावपूर्ण चित्रण देखते ही बनता है। इतिहास से पता चलता है कि मौर्य साम्राज्य धीरे-धीरे शिथिल हो रहा था, फिर भी कला की उन्नति हो रही थी। शुङ्ग एवं कुषाण वंश के राजाओं के समय में भी चित्रकला की उन्नति होती रही।

मौर्यकालीन भवन अति सुन्दर तथा अद्भुत थे। उनमें वर्तमान समय के सदृश रंगीन हुई कला-कृतियाँ नहीं थीं। इस काल में मूर्तिकला की बड़ी उन्नति मिलती है। सुन्दर हुई मूर्तियाँ बनाई जाने लगीं। उन मूर्तियों के कुछ उदाहरण रियासत ग्वालियर में, अमरावती में और मद्रास के जिले मद्रूर में पाये जाते

हैं। भरहुत के स्तूप की निर्माण तिथि ईसा से 200 वर्ष पूर्व की बताई जाती है। इनके अतिरिक्त हाथी हिरण आदि पशुओं के चित्र बहुत सुन्दर बनाये गये हैं। मूर्तियों से रिक्त स्थान को अलंकृत करने का कार्य बड़ी सुन्दरता से किया गया है।

चित्रकला के कुछ नमूने अजन्ता की गुफा नं० 9 और 10 में बने हुए हैं। कुछ आकृतियाँ जोगीमारा की गुफाओं में प्राप्य हैं।

जब हम विद्वान् ब्राउन महोदय के वर्गीकरण को सामने रखते हैं तो ज्ञात होता है कि समय निम्नांकित था—

1 9 और 10 नम्बर की गुफाएं—100 ई०

2 10 नम्बर की गुफा में खम्भे—350 ई०

3 16 और 17 नम्बर की गुफाएँ—500 ई०

4 1 और 2 नम्बर की गुफाएं—626 ई० से 628 ई०

उपरोक्त तिथि सूची देखने से स्पष्ट हो जाता है कि गुफा नं० 9 और 10 की चित्रकारी के बाद लगभग 250 वर्ष के बाद फिर चित्रकारी का आरम्भ हुआ।

गुफा नम्बर 9 के चित्र अस्पष्ट हैं। जो कुछ धुंधले प्राप्य हैं उनमें अधिकतर महात्मा बुद्ध से सम्बन्धित कथाएँ चित्रित हैं।

गुफा नम्बर 10 के चित्रों का चित्रकला के दृष्टिकोण से बड़ा महत्व है। इस गुफा में प्राचीन काल की जातियों के मनुष्यों के चित्रों का बड़ा ही मनोहर चित्रण हुआ है। इन चित्रों का मुख्य विषय राज दम्पत्ति, उनके पुत्र और आस पास खड़े हुए अंग रक्षकों का संयोजन है। इन चित्रों से हमको प्राचीन काल के सामाजिक जीवन का ठीक ठीक पता चलता है।

महाराजा कनिष्क के सिंहासनारूढ़ होने से पहले भारतवर्ष के राज्य की बागडोर कई राजाओं के हाथ में रह चुकी थी। इस काल में यूनानी भी भारत में आने लगे थे, इस कारण यूनानी और भारतीय सभ्यता का पारस्परिक मेल जोल बढ़ गया। कुछ इतिहासकारों का मत है कि महाराजा कनिष्क के सिंहासनारूढ़ होने की तिथि 128 ई० है। उसने एक भवन निर्माण कराई जिसको देखकर मनुष्य अचम्भित हो गये थे। इस भवन के द्वारों को सुन्दर चित्रों से अलंकृत किया गया था। इन चित्रों में कुछ चित्र जहाजों के भी हैं। इनसे मालूम होता है कि उस समय में जहाज भी यातायात का एक साधन था।

गुप्त काल की चित्रकला

गुप्त काल में गुफा नं० 10, 16 और 17 अनुमान की जाती हैं। गुफा नं० 16 और 17 में बौद्ध शैली के नमूने हैं। इस काल के सर्वोत्तम अच्छे नमूने गुफा नं० 17 में हैं। इस गुफा की शैली को विद्वान् लोग 'कथात्मक' कहते हैं। इन चित्रों में भगवान बुद्ध के जीवन-मरण की कथाओं का बड़े सुन्दर ढंग से अंकन हुआ है। इन चित्रों को मनुष्यों को बौद्ध धर्म की ओर आकर्षित करने के हेतु बनाया गया है। इस गुफा के सब चित्र सजीव और व्यापारपूर्ण हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इन चित्रों को बौद्ध धर्म के पतन के समय बनाया गया है क्योंकि सूक्ष्म अवलोकन से इस बात की झलक दिखाई देती है कि कलाकार धर्मधुरीण भिक्षुओं ने बौद्ध धर्म के पतन को रोकने के लिए जनता से माँग की है।

गुफा नं० 16 में दो चित्र बड़े आकर्षक हैं। एक चित्र महात्मा बुद्ध के गृह-त्याग का और दूसरा एक राजकुमारी का है।

पहले चित्र में बुद्ध जी गृह त्याग कर जा रहे और उनकी पत्नी यशोधरा अपने प्रिय पुत्र राहुल के संग सो रही है। दासियाँ भी घोर निद्रा में मग्न हैं। बुद्ध जी की मुख मुद्रा पर तनिक भी मोह-माया नहीं है। उनके मुख से त्याग का शान्त भाव प्रकट हो रहा है। द्वितीय चित्र मरणासन्न राजकुमारी का है, जिसको देखने से मालूम होता है कि उसकी आगामी आशाएँ नष्ट हो चुकी हैं। उसकी मुद्राओं के व्याकुल भाव दर्शक को रुला देते हैं।

अजन्ता की 17 नं० की गुफा में सभी चित्र एक से एक भाव, सुन्दरता और रंगों के कारण अद्वितीय हैं। इन चित्रों को देखने से यह अनुमान होता है कि गुप्त काल के प्रसिद्ध तथा प्रवीण कलाकारों ने अपनी तूलिका एवं कला का प्रमाण के रूप में रखने के लिए इन चित्रों का अंकन किया है। इन चित्रों में एक चित्र माता-पुत्र का है। माता-पुत्र यशोधरा और राहुल हैं। इस भाव पूर्ण चित्र का क्या कहना? बुद्ध जी का एक मानव आकार से अधिक बड़ा चित्र हाथ में एक भिक्षापात्र लिए हुए है। बुद्धत्व प्राप्त करने के पश्चात् महात्मा बुद्ध कपिलवस्तु में उपस्थित हुए दिखाये गये हैं। यशोधरा राहुल से कहकर उनको क्या भिक्षा दे सकती है? यही इस चित्र का विषय है।

चि० 3

इसी गुफा में छद्दन्त जातक की सुन्दर चित्रावली है। यहीं हाथियों की एक दूसरी चित्रावली है जिसमें गज जातक कथाओं का चित्रण किया गया है। गज जातक चित्रावली में गजराज के मिलन का बड़ा ही सुन्दर तथा हृदय-ग्राही चित्रण हुआ है। इन सभी चित्रों में प्रेम तथा वात्सल्य रस कूट कूट कर भरा गया है। जो चित्रकार इन पशुओं के चित्रों में भाव भर सकते हैं उनकी कला प्रवीणता कितनी उच्च कोटि की रही होगी।



चित्र 5—अजन्ता की 17 नं० की गुफा का एक चित्र

एक युद्ध का दृश्य बड़ी कुशलतापूर्वक दिखलाया है। इस चित्र की अब भी 300 मुखाकृतियाँ शेष रह गई हैं। प्रत्येक मुखाकृति में युद्ध के विभिन्न भाव प्रकट होते हैं।

इसी गुफा में एक चित्र वृद्ध राजदूत का है जो अपनी लाठी के सहारे खड़ा हुआ है। उसकी मुखाकृति कह रही है कि वह दुखद समाचार प्रकट कर रहा है।

गुफा नं० 17 में महाहंस जातक की कथा चित्रों द्वारा दिखाई गई है। इस भित्ति चित्र को विद्वान लोग रंग योजना का सर्वमान्य चित्र मानते हैं। इस चित्र में सभी रंगों का प्रयोग में लाया गया है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि पूर्व के कलाकारों को रंगों का भी अच्छा ज्ञान था।

वर्द्धन राज्य की चित्रकला

ब्राउन महोदय के काल विभाजन के अनुसार अजन्ता की गुफा नं० 1 और 2 इस काल का माना जाता है। नं० 1 और 2 की गुफाओं के चित्र बाद के बने हुए प्रतीत होते हैं। इस काल की शैली में जो त्रुटियाँ थीं वे इन गुफाओं में प्रत्यक्ष दिखाई देती हैं। इन गुफाओं में दो प्रकार के चित्र हैं—एक तो वे जिनमें गति और जीवन का अभाव है, दूसरे वे जिनमें संयोजन की समानता का अभाव है।

इन गुफाओं के एक चित्र में पुलकेशिन द्वितीय फारस के सम्राट खुसरो परवेज के राजदूत का स्वागत करता दिखाया गया है। इन गुफाओं के चित्र जावा द्वीप की मूर्तियों से मिलते जुलते हैं। यह ज्ञात होता है कि अजन्ता की चित्रकला का जावा की कला पर अधिक प्रभाव पड़ा।

पहली गुफा की एक दीवार पर सिद्धार्थ की तपस्या और शैतान के आक्रमण का चित्र अङ्कित है। अपनी सेना (मंगलामुखियों) के साथ कामदेव भगवान् बुद्ध की तपस्या को भंग करना चाहता है। भगवान बुद्ध के एक ओर भयानक मुख वाली मूर्तियाँ हैं, और दूसरी ओर पथ भ्रष्ट करने वाली सुन्दर नारियों के चित्र हैं। भगवान् बुद्ध बीच में ध्यान मग्न, शान्त चित्त विराजमान हैं। उनकी मुख मुद्रा से टपक रहा है कि यह सब कृत्रिम है और ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ हो ही नहीं रहा है। इस भाव का संसार में यह अद्वितीय चित्र है। इस चित्र की ऊँचाई लगभग 3.60 मीटर और चौड़ाई 2.40 मीटर है।

इसी गुफा में मण्डप की दीवार पर 'बोधिसत्व' का बड़ा-सा चित्र बना हुआ है। यह उस समय का बना है जब कुमार सिद्धार्थ गृह-त्याग की सोच रहे थे। यह चित्र मनुष्य के आकार से कुछ बड़ा है। इस चित्र का आगे के चित्रों पर प्रभाव पड़ रहा है ([illegible] के चित्र पर)। इस चित्र को देखने से ज्ञात होता है कि दर्शक एक महान आत्मा के सामने खड़ा है जो जटिल समस्याओं में लिप्त है। कंधों और बाहुओं को तनिक झुका दिखाकर अति सुन्दर बना दिया है। मुख पर गम्भीरता है। यह सब कुछ रेखाओं द्वारा ही व्यक्त किया गया है।

भौंहों को तूलिका की एक ही रेखा में बनाया गया है। इस एक ही रेखा में

इतनी जान डाल दी है कि यह कहे बिना नहीं रहा जा सकता कि इनको व्यक्त करने वाला एक बड़ी उच्चकोटि का कलाकार रहा होगा।

इनके अतिरिक्त पशु और पक्षियों के चित्र अङ्कित हैं। कई स्थानों पर हाथी और खरगोश के चित्र बड़े सुन्दर बने हैं। एवं रिक्त स्थान की पूर्ति करने के लिए दो मयूरों के भी चित्र बने हैं। उपरोक्त चित्रों को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि पूर्व कलाकार केवल मनुष्यों के ही चित्र बनाने में पारंगत नहीं थे बल्कि उनको पशु पक्षियों के चित्रण का भी अच्छा ज्ञान था।

अजन्ता की गुफाओं के प्रसिद्ध चित्र

गुफा नं० 1 के चित्र तथा उसकी चित्रकारी

अजन्ता की पहली गुफा में जैसे ही हम कदम रखते हैं हमें उसमें निम्नलिखित प्रसिद्ध चित्र दिखाई देते हैं —

(1) शिवि जातक का चित्र—यह चित्र हमें गुफा नं० 1 की बाईं दीवार पर दिखाई देता है। जिसका कथानक पौराणिक रूप में अलग नहीं दिखाई देता है। इस चित्र को देखते ही हमारे दिमाग में यह बात समा जाती है कि इस गुफा के स्तम्भ तथा चित्र गुप्त काल के अन्तिम प्रहर में बने होंगे। इस चित्र में वस्तुओं पर यत्र तत्र मोटी लिखाई में मध्यकालीन तरह बने हुए हैं। जिन की उत्पत्ति व उदय सातवीं सदी के पूर्व नहीं हुई होगी। इतना ही नहीं इस चित्र की आकृतियों के चेहरे लम्बाकार हैं तथा उनकी लम्बी नाक, भावपूर्ण नेत्र और शिखर जैसे मुकुट, हमें पल्लव मूर्तियों के समान दिखाई देते हैं। इस चित्र में आकृतियों की भीड़ भाड़ है पर संतुलन का अभाव हमें दिखाई देता है। हाथों की मुद्राओं की विशेषताओं को इस चित्र में चित्रकार बना नहीं पाया है। इस चित्र की जो विशेषताएँ हैं वे सब हमें मामल्लपुर के पल्लव वस्तुओं के समान दिखाई देती हैं।

(2) कामक्रोध एवं पीड़ा से विह्वल एक सुन्दरी का चित्र—मिथिल जातक के पश्चात् इसी गुफा में हमें दूसरा चित्र कामक्रोध एवं पीड़ा से विह्वल एक सुन्दरी का मिलता है जिसकी विरह-व्यथा को कई सखियाँ दूर करने का प्रयत्न कर रही हैं इस चित्र को जब हम ध्यानपूर्वक देखते हैं तो हमें पर्याप्त सजावट दिखाई पड़ती है। विशेष रूप से इसके मुखों, आँखों तथा केश पाश

में जो अपनी कोमलता में कमानी को भी मात करते हैं। हम इस में विशेष चातुर्य अकन देखते हैं।

(3) राजस्त्रियों की एक गोष्ठी का चित्र—दूसरे दृश्य में हम राजस्त्रियों की एक गोष्ठी देखते हैं जो वार्तालाप में मग्न है। द्वार पर एक भिक्षु उपस्थित है। जिसको देखकर हृदय में यह अनुमान उत्पन्न होता है कि यह बुद्ध जी का आगमन है। कुछ अप्रत्याशित सा जान पड़ता है—क्योंकि यह आकृति सादा होते हुए भी मानुषी अनुपात में बनी हुई है और उसके पीछे प्रभा मण्डल भी नहीं है जो अजन्ता चित्र शैली की प्रत्येक बुद्ध आकृति में हम देखने को मिलता है।

(4) नाग राज की सभा का चित्र—इसी गुफा में हमें नाग राज की सभा का चित्र भी देखने को मिलता है। इस में हम सजीवता, चहल-पहल और सर्वोपरि की छाप दिखाई देती है। इस में हो रहे नृत्य के आयोजन के कारण यह चित्र और भी सुन्दर व सजीव दिखाई देता है। अपनी इसी विशेषता के कारण यह चित्र अजन्ता के बहुत ही प्रसिद्ध चित्रों में गिना जाता [redacted]। अनेक कारणों से इस चित्र को परवर्ती गुप्त काल में रखना पड़ता है फिर भी इस में आँखें भावपूर्ण हैं तथा मुख मुद्रा भावहीन दिखाई पड़ती है। नर्तकी के वक्ष अत्यन्त भारी हैं और कटि क्षीण। फिर भी इस चित्र में हमें राजसभा जैसी चहल-पहल के दर्शन होते हैं तथा इस चित्र की कई आकृतियाँ बहुत ही सजीव रूप में अंकित हुई हैं जो देखने योग्य हैं। खासतौर से इनमें राजदम्पति के पीछे चामरग्राहिणी की आकृति भी अपनी सुन्दर और कोमल मुद्रा के कारण प्रसिद्ध हो उठी है। इसके बाद एक विचित्र आकृति वाला व्यक्ति है, प्राचीन राज सभाओं में ऐसे लोगों की कमी हम नहीं देखते हैं। उसके बाद कुछ फल फूल लिए हुए दासी [redacted]। दूसरी तरफ भी एक प्रमदा हो परिचारिका दीखती है। दरबार के दूसरे भाग में अनेक नर-नारी अंकित हैं। जिनका संयोजन बड़ा ही सुन्दर एवं स्वाभाविक हुआ है। उन सब के बीच जो केन्द्रीय आकृति है वह फूलदार बिछावट पर नृत्य की मुद्रा में बनाई गई है जिस की मुद्रा भावपूर्ण है।

(5) शतपाद जातक की कथा का एक चित्र—इसी गुफा में शतपाद जातक की कथा का चित्र है। इस चित्र की गिनती अजन्ता के अच्छे चित्रों

म होती है। इस चित्र म शिला है जिसे चौकोर टुकड़ों से सजाए हुए खण्डो से अंकित किया है, इसी के ऊपरी भाग पर राजा और नागराज का वार्तालाप दीखता है। यहाँ शखपाल व उनके पीछे राज महिला की मुद्राएँ बडी सुष्ठु हैं। इन म सामने बैठी नारी का एक चित्र जो दर्शकों की ओर पीठ किए है अपनी मुद्रा के कारण बहुत ही प्रसिद्ध हो चुकी है। इस का उल्टा हाथ भूमि पर टिका हुआ है सीधा हाथ घुटने पर होता हुआ किंचित मुड़े हुए मुख तक पहुंच गया है जो किसी वार्तालाप को सुनने के लिए सब से सहज मुद्रा है। उसके उल्टे पैर की सनिक मुद्रा भी देखने योग्य है और उस के कोमल शरीर का अंग भी जिस की तुलना किसी लता से ही की जा सकती है।

(6) महाजनक जातक का चित्र—पहली गुफा की उल्टी भित्ति के मध्य भाग पर हम चित्रों की एक लम्बी परम्परा देखने को मिलती है। अब इस के आगे आने दृश्य म महाजनक जातक के दृश्य दिखाई देते हैं। यहाँ हम चहल पहल से भरी राजसभा भी दिखाई देती है जिसम एक तरफ गर्भ गृह के भीतर मंच पर राजा रानी विराजमान हैं जिनकी मुद्राएं तथा नेत्रों को बनाने म चित्रकार ने बहुत ही होशियारी दिखाई है। यह राजदम्पत्ति अनेक दास-दासियों व मंत्रियों म घिरा हुआ है। सामने की तरफ नृत्य के दृश्य म हम पूर्ण रूप से सजीवता की झलक दिखाई देती है। इस नर्तकी की कोमल बाहुलता की प्रवाहपूर्ण लिखाई भी दर्शनीय है। नृत्य के अन्तिम भाग के कारण उसम हम अस्वाभाविकता तो नहीं दिखाई देता है इसमें नर्तकी की थिरकन म गति फूट निकली है जिस को उड़ते हुए वस्त्रों, अधो वस्त्र की घूमी हुई धारियों का अंकित करके चित्रकार ने और भी सजीवता व सुन्दरता पैदा कर दी है। उसके प्रत्यक ओर वेणु ताल मंजीरे वादकों पर भी संगति का नशा छाया हुआ है।

(7 व 8) हाथी पर एक राजा तथा महाजनक के घोड़े का चित्र—इसी गुफा म हाथी पर एक राजा का दृश्य भी बहुत ही सुन्दर ढंग से बना हुआ है। हाथी पर आसीन एक राजा सदल बल निकल रहा है। उसके आगे अनेक अश्वारोहियों का खड्गधारियों की मुद्रा म चारित्रिक दर्प स्पष्ट लक्षित होता है। समस्त समाज बडी आन बान तथा सजधज के साथ आगे बढ़ता

जाता है। कई जगह पर अजन्ता में महाराजा के कई सुन्दर दृश्य हम देखने को मिलते हैं। ऊपर की ओर एक आश्रम में भक्ति व ध्यान की लगन में मग्न समाज का दृश्य स्फुट हुआ है। उसमें तपस्वियों की शान्त मुद्रा दर्शनीय है जो देखने वालों को अपनी ओर खींच लेती है। चित्रकार ने पृष्ठ भाग में दो मृगों को बनाकर आश्रम के शान्त वातावरण का अच्छा चित्रण किया है जो देखने योग्य है। इसी दृश्य से सम्बन्धित चित्र में हम महाजनक को घोड़े पर बाहर जाते हुए भी देख सकते हैं। यहाँ पर भी वही समाज है। घोड़े के आगे शंख बजाने वाले की मुद्रा देखने योग्य है।

(9) समुद्र यात्रा के चित्र—इसी गुफा में समुद्र-यात्रा के चित्र भी देखने को मिलते हैं जो भावपूर्ण हैं तथा उनमें हमें किसी प्रकार का भद्दापन दिखाई नहीं देता है।

(10) जहाज डूबने का चित्र—गुफा नं० 1 में जहाज डूबने का दृश्य भी बहुत ही सुन्दर ढंग में बनाया है जो देखने योग्य है। इस में भय की मुद्रा को दिखाने में हमें चित्रकार पूर्णरूप से सफल दिखाई देता है। यह मुद्रा सुन्दर व सजीव है।

(11) बोधिसत्व का जग प्रसिद्ध चित्र—इसी गुफा की उल्टी भित्ति के मध्य भाग में बोधिसत्व का चित्र बना है। इस प्रकार के चित्रों की संख्या अजन्ता की गुफाओं में लगभग बारह तक रही होगी जिनमें से अधिकांश समय के परिवर्तन के कारण नष्ट हो चुके हैं। जो भाग कहीं-कहीं पर बच रहे हैं वे भावपूर्ण हैं तथा उनकी आँखों में हमें सुन्दरता की छाप दिखाई देती है। यहाँ बोधिसत्व की लिखाई में चित्रकार द्वारा उस असीम दिव्य करुणा को बड़े सामर्थ्य से स्फुट किया गया है जो बोधिसत्व का स्वभाव मानी जाती है। उनकी भावमग्न आँखें नीचे की ओर देखती हुई बनाई गई हैं। इनको देखने से ऐसा जान पड़ता है मानो वे सारे संसार की व्यथा को दूर करने के लिए उत्सुक हैं। उनका आकार भी इतर आकृतियों से बड़ा बना है जिससे उन की विशेषता का ज्ञान हमें हो जाता है। उनकी किंचित भंगिमा जिस की अद्भुत व सुन्दर रेखाएँ दृष्टव्य हैं जिसे दर्शाने के लिए चित्रकार ने उन की रत्न वाली देह को लय में तनिक सहारा दिया है। इसी तरह वलय की फहरान में भी सजीवता दिखाई देती है। उन के तीन [illegible] बाल भारी

मुकुट गले में मोतियों की माला जिसमें स्थूल मध्य केन्द्र नील भी है, की चमक दिखाने में चित्रकार हमें पूर्ण रूप से सफल दिखाई देता है। यह चित्र अजन्ता की गुफाओं के बेहतरीन। (सर्वश्रेष्ठ) चित्रों में से एक है। इसको देखकर दिल खुश हो जाता है।

(12) ईरानी दौत्य का चित्र—इसी गुफा में एक दृश्य ईरानी दौत्य के नाम से भी प्रसिद्ध है। इस चित्र को जब हम देखते हैं तो हमें इस के बीच के भाग में एक राजसभा में मध्य एशियाई सम्भवत ईरानी वस्त्र विन्यास में कुछ आकृतियाँ दीखती हैं। इन्ही को देखकर कुछ इतिहास के विद्वानों ने तो यहां तक कह दिया है कि यह पुलिकेशिन के दरबार में ईरानी दौत्य का चित्रण है। वास्तव में ऐसा नहीं है। अजन्ता की गुफाओं में ऐसे कई चित्र होंगे जो समय के परिवर्तन के कारण मिट चुके हैं। इस चित्र को देखने से इस बात का पता चलता है कि इस समय में भी भारत का पश्चिमी एशिया या मध्य एशिया से अच्छा सम्बन्ध था। यही कारण है कि हमें अजन्ता की गुफाओं के कुछ चित्र ऐसे भी मिलते हैं जिन पर गान्धार शैली का साफ तौर से छाप दिखाई देती है।

(13) सुन्दर अलंकरण—पहली गुफा में भी पाटन पर अनेक सुन्दर अलंकरण हैं। वस्तुतः उनमें समस्त मण्डप की पाटन भरी है जिस के बीच बीच में रंगों की पट्टियाँ देकर तथा उनके बीच आयताकार विभिन्न स्थान निकालकर यहाँ आलंकन बनाए हैं जो बड़ी महत्त्वपूर्ण दृष्टि से देखे जाते हैं। इनका रंग सुन्दर व सजाव है जो आँखों को भला लगता है। डिजायनों की आकृतियों में हमें सुन्दरता की छाप दिखाई देती है। इन डिजायनों में किसी प्रकार का भद्दापन हमें दिखाई नहीं देता है।

गुफा नं० 2 के चित्र तथा उसकी चित्रकारी

पहली गुफा के चित्रों को देखने के पश्चात् जब हम दूसरी गुफा में कदम रखते हैं तो हमें इस गुफा में निम्नलिखित चित्र अच्छे व सुन्दर दिखाई देते हैं—

(1) बुद्ध जन्म सम्बन्धी चित्र—दूसरी गुफा के उल्टी तरफ बुद्ध जन्म सम्बन्धी कई चित्र देखने को मिलते हैं जिनमें हमें सबसे अच्छा राजमहल का चित्र लगता है। इस चित्र में शयनागार में सम्भवत माया देवी सो रही है।

उन के पास दो-तीन दासियाँ बैठी हैं। कहा जाता है कि उन्होंने स्वप्न में एक हाथी देखा। यहाँ एक सफेद गोल आकृति अंकित हुई है। इस प्रकार प्रतीक रूप में चित्रकार ने इस कथा का निरूपण किया है।

दूसरे चित्र में हम तुषित स्वर्ग में बोधिसत्व को पाते हैं, सिंहासन के दोनों तरफ मकर की सुन्दर व सजीव आकृतियाँ हैं जो अजन्ता के अन्य कई अंकनों में पुष्ट हैं। बोधिसत्व के हाथ धर्म चक्र मुद्रा में हैं जिसकी उँगलियाँ की लिखाई हम बहुत ही अच्छी दिखाई पड़ती है। उनकी मुख मुद्रा में पर्याप्त गाम्भीर्य है और उनकी स्थिर दृष्टि चिन्तन प्रकट करती है। इस प्रकार उनकी आकृति से श्रद्धा की भावनाएं पैदा होती हुई दिखाई देती हैं। उन के पार्श्व में कई आकृतियाँ सम्भ्रम की मुद्रा में बनी हुई अंकित की गई हैं जो टकटकी लगाए उनको देख रही हैं तथा उनके उपदेशों को बड़े ध्यान से सुन रही हैं। उनके पीछे की तरफ दो चामरग्राही व्यक्ति हैं जिनको देखना अच्छा लगता है।

(2) महामाया तथा शुद्धोदन के चित्र—इस गुफा का दूसरा महत्वपूर्ण चित्र है महामाया और शुद्धोदन। इसमें चित्रकार ने स्वप्न की भावना को सुन्दर ढंग से दर्शाया है। राजदम्पति तथा दासियों को भी सुन्दर ढंग से बनाया है जिन के चित्र सुन्दर दिखाई देते हैं। सम्भवतः सामने बैठे दो लोग हमें ब्राह्मण दिखाई देते हैं। जिनको स्वप्न का महत्व बताने के लिए बुलाया गया होगा। सीधी तरफ कोने पर महामाया की भांति जेवरात पहने हुए एक नारी खम्भे का सहारा लिए खड़ी है। यह नारी ललिता जैसी हमें दिखाई देती है। उसका एक पैर बड़े सुन्दर ढंग से मुड़ कर खम्भे पर टिका हुआ है जिस से उस का मध्य उसमें कुछ दूर हो गया है। शरीर का ऊपरी भाग खम्भे से लगा हुआ चित्रकार ने बनाया है। उस पर आवृत्त है। क्वचित मुड़ी हुई है। गर्दन उस की कोमलता प्रकट करती है। उस की उँगलियों की मुद्रा से जान पड़ता है जैसे वह किसी गणना में व्यस्त है। यह चित्र भी अजन्ता की गुफाओं के श्रेष्ठ चित्रों में गिना जाता है। यह बहुत ही भावपूर्ण है तथा हम इसमें किसी प्रकार का भद्दापन दिखाई हो नहीं देता है।

(3) माया देवी का चित्र—इसी गुफा में माया देवी का चित्र भी हमें दिखाई देता है। इस चित्र में हम देखने को मिलता है कि नगर के बाहर उप-

वन में शाल वृक्ष की डाल पकड़े मायादेवी को उस रूप में पाते हैं जैसा हम बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार इस दृश्य की कल्पना की गई है। नवजात बुद्ध को इन्द्र ने ग्रहण कर लिया है। उपवन के बाहर द्वार पर सेना की भीड़ लगी है। उस का रेल-पेल का दृश्य सजीव है। उनमें विचित्र विचित्र आकृतियों से अजन्ता के चित्रकारों की विलक्षण सूझ बूझ और कल्पना शक्ति के अच्छे दर्शन हमें हो जाते हैं।

(4) विदुर पंडित जातक की चित्रावली के चित्र—इस गुफा की बाईं भित्ति पर जो मुख्य चित्र रह जाते हैं उनमें पहले विदुर पंडित जातक की चित्रावली आती है। अजन्ता की चित्रकारी में बहुत थोड़े से चित्र इस तरह के बचे हैं। इसके बाद ही रूरू जातक की चित्रावली का नम्बर आता है।

(5) रूरू जातक की चित्रावली के चित्र—इस चित्र की तीन आकृतियाँ ही विशेष रूप में उल्लेखनीय हैं। इन तीनों चित्रों में हमें बड़े ही मनुजन मिलते हैं जिन में एक एक में बीसों आकृतियाँ हैं। उनमें से प्रत्येक की व्यक्तिगत विशेषता है। इसमें द्यूत का दृश्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस को अजन्ता के चित्रकार ने बड़ी खूबी के साथ बनाया है। हर आकृति के जुटाने में चित्रकार ने दृश्य की स्वाभाविकता को हाथ से जाने नहीं दिया है। बैठने खाना की जो मुद्राएँ चित्रकार ने बनाई हैं उनको देखते ही बनता है।

(6) विदुर पंडित की सवारी का चित्र—बीच में विदुर पंडित की सवारी का दृश्य भी हमें बहुत ही अच्छा दिखाई देता है, जिस प्रकार सवार विदुर पंडित धीरे धीरे आगे बढ़ रहे हैं उनके पार्श्व में एक आगे घोड़े पर कई इतर आकृतियाँ हैं। इस के आगे नंगी तलवार लिए हुए पदातिसेना का एक टुकड़ी चल रही है। यह दृश्य अजन्ता के सबसे अच्छे चित्रों में गिना जाता है। इसकी मुखाकृति में हम सजीवता की छाप दिखाई देती है। इस में नंगी तलवारों की चमकीली नीली रेखाएँ अच्छी हैं।

(7) झूला झूलती हुई एक राजकुमारी का चित्र—इसी गुफा में झूला झूलती हुई एक राजकुमारी का भी सबसे चित्रण बहुत ही अछूते ढंग से हुआ है। चित्रकार ने उसके कोमलतापूर्ण सौन्दर्य का तो चित्रण किया ही है उसकी स्वाभाविक आँखों के चित्रण में तो कमाल हासिल कर दिखाया है जो देखने वालों को अपनी ओर बड़ी तेजी से खींच लेता है।

(8) पूर्णावदान की कथा का चित्र—इसी गुफा की सीधी तरफ पूर्णावदान की कथा भी सुरक्षित है। इस का भी अधिकांश भाग बचा हुआ है जिसमें सूपारिक के व्यापारिक केन्द्र वहाँ के समुद्र व्यापार आदि के दृश्य अंकित होते हैं। भीड़ के लोग बुद्ध जी के दर्शन के लिए बेचैन हैं। इस चित्रावली के अतिरिक्त अजन्ता में सर्वत्र बुद्ध जी के पीछे प्रभा मण्डल का अंकन हुआ है। फिर इसमें हमें भक्ति भावना के अच्छे स्थान हुए हैं।

(9) भाई भावल की समुद्र यात्रा का चित्र—इसी गुफा में भाई भावल की समुद्र यात्रा का भी दृश्य है। यहाँ तूफानी समुद्र का चित्रण आलंकारिक रूप में हुआ है जो देखने में सुन्दर दिखाई देता है। इसमें दो नाग की आकृतियाँ भी हैं। समुद्र की विशालता को दर्शाने के लिए रेखाओं का सहारा लिया है।

(10) सर्वोत्कृष्ट चित्र—इसी गुफा के दाहिनी दीवार के सिरे पर जो चित्र है उसको इस गुफा का सर्वोत्कृष्ट चित्र कहते हैं। विस्तृत वर्ण विधान, पुष्ट आलंकारिक भाव भंगिमाओं व सर्वोत्तमता के कारण बहुत ही ऊँचा उठ गया है। यह चित्र कहीं कहीं टूट फूट गया है। इसकी कुछ आकृतियाँ अन्तर्धान हो चुकी हैं फिर भी जो बचे हैं उनसे पता चलता है कि यह चित्र बहुत ही सुन्दर रहा होगा।

इसको देखते ही हम स्वयं भाव मग्न हो जाते हैं।

इस दृश्य के नीचे वाला दृश्य पहली घटना से सम्बन्धित होगा जिसमें बोधिसत्व के आश्रम में हम राजस्त्रियों को पाते हैं। दोनों चित्रों में जो आकृतियाँ बनाई गई हैं उनमें हम मुद्राओं का छाप दिखाई देती है। इस चित्र में दो आकृतियाँ बहुत ही विशिष्ट कोटि की हैं। एक आकृति तो एक वृद्ध भिक्षु की है जिसकी आँखों में समस्त संसार का अनुभव और उससे जन्य निराशा की अवस्था सभी प्रतिबिम्बित हो उठे हैं। उसका बाँया हाथ ठोढ़ी में चिन्ता की मुद्रा में बनाया गया है और दाहिना हाथ इस तरह घूमा हुआ है मानो सब कुछ नष्ट हो गया है।

(11) एक सुन्दरी का चित्र—इस चित्र में पीछे खम्भे का सहारा लेकर एक सुन्दरी खड़ी है जिसका शरीर की कोमलता उस की भंगिमा तथा घूमे हुए चेहरे से झलकती है। सब से विलक्षण तो उसकी आँखें हैं जो इस दृश्य की ओर घूमते हुए कृशांग तक पहुँच गई हैं। मानो वे मुड़ना ही चाहती हैं।

ऊपरी दृश्य म बडे ही भयानक वातावरण को चित्रण किया है। एक दीघ वपुप राजा अपने सिंहासन पर बठा है जो अपने न्न हाथो म तलवार लिए एक कोमलागी का वध करने पर उद्यत है जो पैरो पर गिर गिर कर क्षमा याचना कर रही है। राजा के दृढ शरीर की तुलना मे सुन्दरी का कोमल वपु दखने योग्य है। चारो ओर की नारियाँ भय से त्रस्त हैं। एक भाग रही है दूसरा न सम्भवत अपना मुह छिपा लिया है। तीसरी मोच म डूबी हुई है।

इसी गुफा म एक बुद्ध जी का दया करुणा का भी अच्छा चित्र है। यही पर मार विजय का भी दृश्य है जो अपनी भयकर आकृतिया के कारण बहुत ही प्रसिद्ध हो गया है। इसी कारण इस चित्र की गिनती अजन्ता के अच्छे चित्रा म होती है।

(12) भक्त का चित्र—इसी गुफा म भक्त का चित्र भी है जिसकी भावना बहुत ही अच्छी है। इसकी अधखुली आँखें वदन की मुद्रा तथा कमल समर्पित करने का भाव बहुत ही अच्छा है। अपनी इन्ही विशेषताओ क कारण इस चित्र की गणना अच्छे चित्रो मे होती है। इसम तो तीन रगो से ही चित्रकार न सुदरता प कर दी है।

गुफा न० 3, 4 5, 6, 7 व 8 के चित्र तथा उनकी चित्रकारी

तीन चार पाँच छ सात तथा आठवी गुफाओ म हम एसे चित्र नही दिखाई देते हैं जिन का हम वर्णन कर सकें। नवी तथा दसवी गुफाए अपेक्षा कृत पूर्ववर्ती जान पडती हैं जसा कि उनकी वस्तु स हम दिखाई देता है। दसवी गुफा म एक शिलालेख है जिसे विद्वानो न दूसरी सदी ई० पू० का माना है। नवी तथा दसवी गुफा के चित्रो म बहुत साम्य है तथा व समकालीन दिखाई पडती हैं। इतना ही नही तत्कालीन मूर्तिया एव वस्तुओ की शलिया स इनकी निकटता है।

गुफा न० 9 क चित्र तथा उसकी चित्रकारी

इस गुफा म निम्नलिखित चित्र विशेष रूप मे उल्लेखनीय हैं—

(1) मुरटा का चित्र—नवी गुफा म अनेक प्रकार के दृश्य हैं जिन म मुरटा का दृश्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसम एक लट्टू जसा निकला रहता है जिसको कुम्भ कहते हैं।

(2) एक दल का चित्र—इस गुफा में एक दल का चित्र भी है। यह दल स्तूप की ओर बढ़ रहा है जिसका तोरण तत्कालीन परम्परा के अनुसार है।

इसी गुफा में कुछ लेख भी हैं जो ई० पू० की लिपि में जान पड़ते हैं।

चित्रों की विशेषताएं

इन चित्रों में हमें निम्नलिखित विशेषताओं के दर्शन होते हैं—

इन में कुल तीन चार रंगों का प्रयोग हुआ है जैसे काला, हिरोजी, पीला, हरा आदि रंग। फलतः इन चित्रों का वर्ण विधान संकुचित है इतना ही नहीं प्रायः सभी चेहरे एक समान हैं जिन में एक आदमी का दूसरे से अंतर करना कठिन है। इनको हम अव्यक्तिवाचक चेहरे कह सकते हैं। सुनाई स्याही में हुई है जिसमें भाव का अभाव दिखाई देता है तथा उनकी मुद्राएँ एक समान नहीं हैं। हस्तमुद्राओं का विकास नहीं हुआ है। उनकी आँखें भी भावशून्य हैं। इस तरह छाया पुरुष की भाँति हमारे सामने खड़े हैं। यह भी कहना अनुचित न होगा कि माथा तथा ओठों पर सिन्दूर लगाने की प्रक्रिया मिलती है जिसके दर्शन हम गुप्तकालीन चित्रों में भी होते हैं।

इस गुफा के चित्रों की एक विशेषता यह भी है कि पृष्ठभूमि में वृक्षों का अंकन सुंदर ढङ्ग से हुआ है। इस प्रकार के चित्र हम दसवीं गुफा के अनेक चित्रों में स्थल-स्थल पर मिलते हैं। दसवीं गुफा की छद्दन्त जातक की चित्रावली में यह बहुत ही स्फुट हुआ है। यहाँ वन के बड़े सुन्दर दृश्य हैं जिनके बीच एक सघन वन में वाधिपत्य गजराज छद्दन्त के रूप विहार करते हुए अङ्कित किए गए हैं जो दर्शन योग्य हैं।

उन के हाथियों की मुद्रा और उनके स्वभाव का बहुत ही मार्मिक चित्रण हुआ है। इस में ही काशिराज के भेजे दो व्याध आते हैं जो आड़ में खड़े हुए बनाए गए हैं व सब चुपचाप देख रहे हैं। अन्त में उनका मन भी पिघल जाता है और वे गजराज के छः दाँत मात्र लेकर लौट पड़ते हैं काशी की रानी उन छः दाँतों को देखकर मूर्छित हो जाती है—इसने पूर्व जन्म का प्रतिशोध जो लिया था। इस प्रकार वातावरण को बनाने में अजन्ता का चित्रकार हमें पूर्ण रूप से सफल दिखाई देता है।

इन चित्रों के अतिरिक्त नवीं तथा दसवीं गुफाओं में कुछ इस गुप्तकालीन चित्र स्थान को मिलते हैं। 10 वीं गुफा के खम्भों पर खड़े हुए बुद्ध जी की

कई आकृतियाँ हैं जो देखने योग्य हैं। इन चित्रों की आखों से सहज करुणा का भाव टपकता हुआ दिखाई देता है।

गुफा न० 16 के चित्र तथा उसकी चित्रकारी

सोलहवी गुफा में जो चित्र हम देखने को मिलते हैं उनको गुप्त काल में बनाया गया है। इसी गुफा के खम्भों व उनकी घुडियों की आकृतियाँ भी अच्छे ढंग की बनी हैं जो देखने योग्य हैं। परन्तु हमें दुःख से कहना पड़ता है कि कई महत्त्वपूर्ण चित्र इस गुफा के समय के परिवर्तन के कारण नष्ट हो चुके हैं। इस प्रकार के चित्र हस्ति व जातक सम्बन्धी चित्र हैं। इस गुफा के निम्नलिखित चित्र विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं —

(1) म्रियमाण रानी का चित्र—सोलहवी गुफा का यह चित्र बहुत ही सुन्दर है और इसकी गणना अजन्ता के प्रसिद्ध चित्रों में होती है। इसमें नन्द की परित्यक्ता पत्नी की विरह-व्याकुलता अच्छी तरह से प्रकट करती हुई अंकित की गई है। उसकी कमल के समान आँखें हैं जो मुंदी हुई दिखाई गई हैं। उस का मुख मुरझा कर भूम-सा गया है तथा उसका सुडौल शरीर अपने आप को खो बैठा है। वह निढाल हो गया है। सारा ऐश्वर्य, सुन्दरी सखियों का भुंड उसे तनिक भी स्वस्थ करने में सहायता नहीं देता है। समस्त समाज चिन्ता में डूबा हुआ अंकित किया गया है। हर एक के मुख पर दुःख निराशा की भावनाएं झलक रही हैं। इस दृश्य के पार्श्व में नन्द के धर्म परिवर्तन की कथा को अच्छे ढंग से बनाया गया है जो देखने में सुन्दर व सजीव है। इसी दृश्य में मन्त्र के वक्ष में उसकी सुकुमारता व हरीतिमा को भी अच्छे ढंग से अंकित किया गया है। इस पेड़ के पत्तों का झुकाव अनोखे ढङ्ग से अंकित किया गया है।

(2) बुद्ध जी के उपदेश का चित्र—इसी गुफा में बुद्ध जी का उपदेश नामी चित्र भी हम दिखाई देता है। इसका समय के परिवर्तन के हाथों अधिक कष्ट उठाने पर जिसके कारण इसका बहुत बड़ा भाग मिट गया है। इस चित्र में बुद्धजी का शान्त स्मित मुद्रा व उपदेश के रस में निमग्न जिससे श्रोताओं की आकृतियाँ में बनाया है।

(3, 4, 5, व 6) सुजाता का खीर अर्पण गृह त्याग के पूर्व महामाया का स्वप्न तथा बोधिसत्वों की आकृतियों के चित्र—सोलहवी गुफा में हम

अन्य प्रकार के दृश्य भी देखने को मिलते हैं। सुजाता का खीर अर्पण, गृह त्याग के पूर्व वाले चार दृश्य, महामाया का स्वप्न, अन्तिम चित्रावली में आकृतियों को बहुत ही सुन्दर विधि से बनाया है जिनको देखने से हमारी आँखों में थकावट पैदा नहीं होने पाती है।

इस गुफा के चित्र अजन्ता के सबसे अच्छे चित्र कहलाते हैं।

(7) दिव्य गायकों के समूह का चित्र—इसी गुफा में दिव्य गायकों का चित्र भी है जो नष्ट होने से बच गया है। इसकी गिनती संसार के अच्छे चित्रों में होती है। यह चित्र इस गुफा के बाहरी भाग पर बना हुआ है और प्रायः इस के द्वार के ऊपर ही स्थिति है। इसमें एक ओर इन दिव्य गायकों के उड़ने का भाव एवं दूसरी ओर गान में तन्मय गन्धर्व की मुख मुद्रा बहुत ही सुन्दर ढंग से बनी हुई हमें दिखाई देती है। इस चित्र की प्रत्येक मुद्रा सुन्दर व सजीव है तथा उसमें हमें किसी प्रकार का भद्दापन दिखाई नहीं देता है।

(8) उड़ते हुए गन्धर्व के चित्र—द्वार के दूसरी तरफ पाहन पर उड़ते हुए एक समूह में एक गन्धर्व की घूमी हुई निश्चल आँख व सुडौल मुखमण्डल में अजन्ता के चित्रकार बहुत ही निपुण दिखाई देते हैं। इस से यह चित्र भी अजन्ता के अच्छे चित्रों में हमें देखना पड़ता है। इस चित्र की आगे बढ़ने की गति उसका आभूषण, हाथों में मंजरियों को बहुत ही अच्छे ढंग से अंकित किया गया है जो देखने योग्य है।

गुफा नं० 17 के चित्र तथा उसकी चित्रकारी

सत्रहवीं गुफा के द्वार के ठीक ऊपर की तरफ प्रेमालाप में लीन कई दम्पतियों के चित्र हैं जिनको मांगलिक भी कह सकते हैं। इनको सदैव द्वार पर ही बनाया जाता है। इनको बनाने में अजन्ता का चित्रकार पूर्ण रूप में सफल दिखाई देता है। इसके अतिरिक्त हमें इस गुफा में निम्नलिखित चित्र विशेष रूप में उल्लेखनीय हैं—

(1) दम्पतियों के चित्र—17 वीं गुफा में दम्पतियों के चित्र भी हमें देखने को मिलते हैं। जिन को बनाने में अजन्ता का चित्रकार पूर्ण रूप से सफल हुआ है। इनमें शृङ्गार के विभिन्न पक्षों को स्पष्ट करने में चित्रकार हमें बहुत ही सफल दिखाई देता है। इसी गुफा में अलिन्द में एक ओर एक

राजदर्पित बैठे हैं। उनकी आँखें प्रमासव से छकी हैं। दूसरी तरफ वे अपने अनुचरों के साथ बाहर जा रहे हैं। सारे दृश्य में जीवन तरंगित हो रहा है।

(2) गुप्तकालीन चित्र—इसी गुफा में कुछ गुप्तकालीन चित्र भी हैं जिनको देखकर दिल में खुशी की भावनाएँ पैदा होती हैं। इनमें एक जगह पर राज द्वार पर भिक्षुओं की भीड़ लगी है। इसमें भिन्न भिन्न प्रकार के चेहरे बनाने में चित्रकार ने विशेष रूप से क्षमता प्रकट की है। उस काल में साधु के जो जो रूप होते थे वे सब इस चित्र में हमें दिखाई दे जाते हैं।

(3) दुष्ट हाथी नलगिरि का चित्र—इसी गुफा में दुष्ट हाथी नलगिरि के दमन का दृश्य भी है जो बुद्ध जी की जीवनी का एक अंग भी है।

(4) कपि जातक के चित्र—इसी गुफा में कपि जातक छद्दन्त जातक के चित्र भी अच्छे ढंग से बने हैं जो देखने योग्य हैं। इसमें हंस जातक का चित्र भी बड़ा ही सुन्दर ढंग से बने हैं जो आँखों को अच्छे दिखाई देते हैं। इसमें सरोवर में हंसों की चेष्टाएँ पाँव फैलाने के तरीके आँखें निकाले हुए मुंह बहुत ही अच्छी मुद्राओं में अंकित किए गए हैं।

(5) माता पुत्र का चित्र—इसी गुफा में माता पुत्र का भी चित्र है। इस चित्र को भी अच्छी दृष्टि से देखा जाता है तथा इस चित्र की गणना अच्छे चित्रों में होती है। भगवान बुद्ध बुद्धत्व प्राप्ति के पश्चात एक बार कपिलवस्तु भिक्षा माँगते हुए आए और अभागिनी यशोधरा के प्रासाद के नीचे से निकले। जान पड़ता है कि यह चित्र उसी समय का है। उनके हाथ में भिक्षा-पात्र है और वह माता भिक्षा लेने के लिए आगे बढ़ा हुआ है। बुद्धजी की इस विशाल आकृति के सामने हम द्वार पर एक नारी का चित्र पाते हैं जो अपेक्षाकृत छोटा बना है। इस प्रकार चित्रकार ने दिखाया है कि यशोधरा के हाथों में एक बालक राहुल है जिसे वे बुद्ध देव को अर्पित कर रही हैं। उस समय राहुल से बढ़ कर कौन सी भेंट हो सकती थी। यशोधरा प्यार की नजरों से बुद्ध को देख रही हैं। उनमें सारे जीवन की व्यथा छिपी हुई है। दूसरी तरफ राहुल सम्भ्रम बुद्धदेव को निहार निहार कर देख रहा है जो प्रथम दर्शन के समय स्वाभाविक ही था।

(6) श्याम जातक व मृग जातक के चित्र—सत्रहवीं गुफा में हम अनेक जातकों के चित्र अंकित पाते हैं। उनमें श्याम जातक, मृग जातक, म

जातक, मत्स्य जातक सुत सोम जातक आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। यहाँ पर बुद्ध जी के जीवन से सम्बन्ध रखने वाले अनेक दृश्य हैं जैसे श्रावस्ती का चमत्कार तुषित स्वर्ग में प्रवचन माता पुत्र का चित्र आदि। इनमें भिन्न भिन्न वर्गों के मनुष्यों के साथ भिन्न भिन्न वर्ग के पशुओं को भी बनाया गया है जो देखने योग्य हैं।

(7) राज सभा का चित्र—इसी गुफा में राजसभा का भी चित्र हमें दिखाई देता है इसमें वेशप्रसाधन करती हुई एक सखी की मुड़ कर दर्शक की ओर देखने की मुद्रा बहुत ही अच्छी है। दूसरे दृश्य में धूमधाम से राजा की सवारी निकल रही है। इस भीड़भाड़ से आगे बढ़ कर हम एक भयानक वृत्तान्त का चित्र देखने को मिलता है।

(8) वृत्तान्त का चित्र—इसी गुफा में हम वृत्तान्त का चित्र भी देखते हैं। यहाँ हम प्रियदर्शन राजकुमार वेस्सान्तर को तापस वेश में पर्णकुटी के अन्दर बैठा हुआ देखते हैं जिन्होंने अपना सब कुछ त्याग कर यह रूप पसन्द किया है। इस अवसर पर एक ब्राह्मण उपस्थित होता है जिसको अजन्ता के चित्रकार ने बड़ी होशियारी से बनाया है जिसकी आकृति देखने योग्य है। यह अधेड़ उम्र का व्यक्ति, दाढ़ी भी इसकी से बनी हुई है दांत निपोर कर वेस्सान्तर से उनकी एक मात्र निधि उनके दो बालक कुमारों की याचना कर रहा है। सचमुच अजन्ता के चित्रकार जहाँ सुन्दर को बनाने में सफल हुए हैं वहाँ वे असुन्दर को बनाने में भी पूर्णरूप से सफल दिखाई देते हैं।

(9) युद्ध का चित्र—इसी गुफा में युद्ध का चित्र भी हमें दिखाई देता है। यह युद्ध का दृश्य सतुलित दृश्य है।

(10) सिंहल अवदान के चित्र—यहीं सिंहल अवदान के दृश्य भी हमें देखने को मिलते हैं जो देखने में अच्छे लगते हैं।

अजन्ता की अन्य गुफाओं के चित्र तथा उनकी चित्रकारी

अजन्ता की अन्य गुफाओं में भी चित्र हैं जो दर्शकों को अपनी तरफ खींचते हैं, परन्तु दुःख से कहना पड़ता है कि इन चित्रों को समय के परिवर्तन ने तूफानों ने बुरी तरह से नष्ट कर दिया है। जो भाग इनके बचे रहे हैं वे हमारे इस कथन को सत्य सिद्ध करने में सहायता प्रदान करते हैं।

चि० 4

खण्डहर बता रहे इमारत बुलन्द थी" अजन्ता की गुफाओं में हम अनेक प्रकार के आलेखना के भी दर्शन होते हैं जो देखने में अच्छे दिखाई देते हैं। इन डिजायनों की आवृत्तियाँ सुन्दर व सजीव हैं। प्रत्येक इकाई अच्छे ढंग से बनाई गई है जो देखने में आँखों को भली लगती है।

प्रश्न

1 'बौद्ध धर्म चित्रकला के सहारे फला।' इस पर अपनी राय दो।
2 अजन्ता की चित्रकारी का वर्णन करो।
3 अजन्ता कहाँ है और क्यों प्रसिद्ध है?
4 अजन्ता की गुफाएं कितनी हैं? किन्हीं दो गुफाओं के चित्रों का वर्णन करो। (गुफा नं० 1, 2)
5 गुफा नं० 9, 10 की चित्रकारी का वर्णन करो।
6 गुप्त काल की चित्रकला का वर्णन अपने शब्दों में करो।
7 वर्द्धन राज्य के समय की चित्रकला पर प्रकाश डालो।

अध्याय 5

अजन्ता की चित्रकला की विशेषताएँ

अजन्ता में दर्शकों को आकर्षित करने वाली सबसे प्रथम वस्तु है वह है चित्रों की महान योजना और उनका वैभव। अजन्ता के चित्रों में महानता और विशालता, शैली की सरलता, स्वाभाविकता और कल्पना ही ऐसी वस्तुएं हैं जो इन चित्रों की महानता बढ़ाती हैं। दृश्य संयोजन में केन्द्रत्व का बहुत अधिक ध्यान रखा गया है जिससे उनकी सुन्दरता और भी बढ़ गई है। चित्र में अंकित महान आत्माओं का सम्पूर्ण सम्यक चित्रण हुआ है यही इन चित्रकारों की सबसे बड़ी सफलता है। आकृतियों की सीमा रेखाएं बड़ी सुन्दर हैं जो इस बात की सूचक हैं कि इन चित्रकारों को रेखाओं का बहुत अच्छा ज्ञान था। इनमें किसी प्रकार की प्रधानता प्राप्त करने के लिए कोई विशेष प्रयास नहीं किया गया है, क्योंकि सब रेखाएं स्वाभाविक और उन्मुक्त हैं। प्रत्येक चित्र अपने स्थान पर अपना विशेष मूल्य रखता है।

अजन्ता के चित्रों का मुख्य विषय महात्मा बुद्ध के जीवन की कथाएं हैं जो जातक से ली गई हैं। एक से अधिक चित्रों के विषय धार्मिक न होकर सांसारिक और पार्थिव हैं जिनमें उस काल के राज-दरबारों में जीवन का सुन्दरता से अंकन हुआ है।

अजन्ता के चित्रों को देखकर बुद्धि चकराती है। ऐसा मालूम पड़ता है पृथ्वी पर स्वर्ग उतर आया हो। स्वर्ग के तुल्य अजन्ता की गुफाओं की दीवारें पवित्र स्थानों, पवित्र आत्माओं और सुन्दर-सुन्दर आकृतियों से सजी हुई हैं।

इन चित्रों में जीवन और समाज के भी चित्र हैं। मानव और पशु-पक्षियों, चर तथा अचर को पूर्ण रूप से इन चित्रों में स्थान मिला है और सभी की जीवन भावनाओं का उनमें चित्रण हुआ है। कुछ चित्रकारों का मत है कि अजन्ता के चित्रों में सबसे बड़ी विशेषता रेखाएं हैं जो चित्रों को अधिक सुंदर बनाती हैं। इसमें लेशमात्र भी संदेह नहीं कि जितनी अच्छी रेखाओं का प्रयोग अजन्ता के भित्ति चित्रों में हुआ है वैसा अन्यत्र कहीं नहीं। मानव शरीर के मानो वे पूर्ण ज्ञाता थे। शरीर के प्रत्येक अङ्ग प्रत्यङ्ग को रेखाओं द्वारा बड़ी कुशलता से बनाया गया है। जिन चित्रों का अङ्कन हुआ है वे संसार में अद्वितीय हैं। उनकी तूलिका से निकली हुई इन रेखाओं ने जड़ को चेतन बना दिया है। हाथों की अंगुलियां तो मुंह से बोल उठी हैं।

चित्रकारों ने अपनी गतिशील रेखाओं से गोलाई, प्रकाश छाया प्रभाव, उभार स्थिति जनित लघुता तथा सब कुछ दिया है। इनको देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि उन्हें इनको बनाने में लेशमात्र भी प्रयास नहीं करना पड़ा है। तूलिका पर इन चित्रकारों को पूर्ण अधिकार प्राप्त था। इन्हीं रेखाओं का सहारा लेकर हाथों की मुद्राओं से आंखों की चितवनों से तथा अङ्गों के रचाव (भंगिमा) से मनुष्य के हृदय के नाना प्रकार के भावों का चित्रण बड़ी सफलतापूर्वक किया है।

इसमें लेशमात्र भी संदेह नहीं कि प्राचीन चित्रकला की जननी रेखाएं हैं। अजन्ता के चित्र भी इससे पृथक नहीं है। फिर भी अजन्ता के चित्र रेखाचित्र नहीं कहे जा सकते। इनका मूर्तिकला से इतना घनिष्ठ सम्बन्ध तथा ऐक्य है कि ये चित्रकला के रूप में मूर्तिकला के ही नमूने प्रतीत होते हैं पाश्चात्य कला की भांति छाया और प्रकाश के नियमों का अनुकरण न करने पर भी परिवर्तनशील रेखाओं आभूषणों के सुझाव और हल्के गहरे तथा विभिन्न रंगों के प्रयोग द्वारा आकृतियों की गोलाई और उभारों को अच्छी प्रकार प्रदर्शित किया गया है।

कुछ चित्रकारों का मत है कि अजन्ता के चित्र भाव प्रधान हैं। चित्र के लघुतम भाग में भी भाव उपस्थित हैं। भावों का इतने बड़े परिमाण में किसी अन्य रूप में नहीं दर्शाया। अजन्ता की चित्रकला में यह विशेषता अधिक है

परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि स्पष्टीकरण और चित्रण में तल्लीन होकर अजन्ता का चित्रकार रूप भावना को छोड़ उठा है। अजन्ता के चित्रों की शारीरिक सौन्दर्य की छटा अद्भुत है। इन चित्रों में रानियाँ रानियाँ ही हैं और सेविका सेविका ही। अजन्ता में जहाँ सुन्दरता के अद्भुत नमूने हैं वहाँ भयङ्करता का भी चित्रण हुआ है। इन असुन्दर चित्रों में भी कोमलता विद्यमान है जिनको देखकर घृणा का नहीं बल्कि सहानुभूति का सृजन होता है।

इसको प्रदर्शित करने के लिए अजन्ता के चित्रकारों ने जड़ और चेतन दोनों से प्रेरणा ली है। इनमें प्रधान हाथी और कमल दृष्टिगोचर होते हैं। अजन्ता के चित्रकारों ने कमल को भिन्न भिन्न आकारों में बनाकर दिखाया है।



चित्र 6— अजन्ता के चित्रों की विशेषता का एक नमूना

कमल पुष्प के साथ-साथ इसके प्रत्येक भाग को भी बड़ी सुन्दरता से दिखाया है। अजन्ता की चित्रकला में कमल को उच्च स्थान प्राप्त है।

अजन्ता की चित्रकला में नारी चित्रों को भी अच्छा स्थान मिला है। नारियों के चित्रों में उनके अङ्ग प्रत्यङ्ग को बड़े सुन्दर ढंग से बनाया गया है। इतना रंग ध्वस्त हो जाने पर भी ये चित्र मन-जन प्रवीन होते हैं। इनकी सुन्दरता में तनिक भी कमी नहीं आई है।

नारी चित्रों के अतिरिक्त अजन्ता की दीवारों पर पुरुषों के आभूषण और मुकुटों का भी बड़े सुन्दर ढंग से चित्रण हुआ है।

अजन्ता के चित्रों की मुद्राएँ भारतीय चित्रकला की अपूर्व देन हैं। चित्रों में हस्त मुद्राओं का अद्भुत भारत की कला में विशेष स्थान और महत्व रखता

है। चित्रो की अँगुलियाँ ऐसी सुन्दर हैं कि देखत ही ऐसा प्रतीत होता है कि यदि इनके जिह्वा होती तो बोलने लगती। अँगुलियो की प्रत्येक गति और हाथ का प्रत्येक लचाव अपना एक महत्व रखता है। वाजा वजाते हुए हाथ, फूल पकडे हुए हाथ और अन्य काम करते हुए हाथ और अँगुलियाँ इस ढग से बनाई गई हैं कि उनका भाव पूर्ण रूपेण है।



चित्र 7—अजन्ता की चित्रकला म एक नारीचित्र

इनके अतिरिक्त अजन्ता म कला कृतियो (डिजाइन्स) की भी कमी नहीं है। कला-कृतियो मे चित्रकारो ने फल फूल पशु पक्षी और हाथी-बल आदि का प्रयोग किया है। रेखाओ और ज्यामितिक आकृतियो को भी व्यवहार म लाया गया है। कमल के पुष्प को तो कई रूपो मे बनाकर दिखलाया गया है। वर्तमान काल म इन कला-कृतियो के निम्नलिखित नाम हैं—

(1) प्राकृतिक (2) रेखा कृति (3) अलकारिक (4) ज्यामितिक (5) स्मृति और (6) सूक्ष्म (किनारी इत्यादि के लिए)।

लका की सिगिरिया की गुफाओ म चित्रकला के सुन्दर नमूने मिलते हैं। इन चित्रो की शैली भी अजन्ता जैसी है। उपरोक्त विशेषताओ के दृष्टिकोण स यह कहना अक्षरश सत्य है कि अजन्ता के चित्र अद्वितीय हैं। इन्हा चित्रो के कारण आज भारत की चित्रकला को ससार की चित्रकला म सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। इस काल को कला का स्वर्ण युग कहते हैं।

अजन्ता के चित्रों का विषय

अजन्ता की गुफाओं के चित्रों का मुख्य विषय भगवान बुद्ध की जन्म जन्मान्तर की कथाएँ हैं, जो जातक के नाम से प्रसिद्ध हैं। पशु-पक्षी, चर-अचर सभी विषय बन गये हैं। राज-दरबारी जीवन का भी चित्रण हुआ है। मूल विषय धार्मिक है। चित्रों में संसार की पवित्र आत्माएँ बहुत ही मनोहर मालूम होती हैं। इन चित्रों में संयोजन काल्पनिक दृश्य रेखाएं, रंग चित्र और मुद्राएँ बड़े ही सुन्दर ढंग से दिखाई गई हैं।

अजन्ता के चित्रों के रंग

अजन्ता के चित्रों के रंग साधारण व अमिश्रित होने पर भी चमकीले हैं। सभी चित्रों में रंग का एक ही लेपन किया हुआ दिखाई देता है। प्रकाश तथा छाया का व्यवहार केवल स्थानीय गोलाई दिखाई के लिए किया गया है। इन चित्रों के पृष्ठ भाग को गहरे रंग से बनाकर हल्के रंग से उभारा गया है। इन चित्रों के रंग प्रकृति से साधारण और प्रभावपूर्ण हैं। निकटवर्ती रंग हल्का नहीं दिखाया गया है।

इन चित्रों में अपूर्व संगति होने के कारण नेत्रों को बड़े सुन्दर मालूम होते हैं।

प्रश्न

1 अजन्ता की चित्रकला की विशेषताओं का वर्णन करो।
2 अजन्ता के चित्रों का मुख्य विषय क्या है?
3 अजन्ता की डिजाइन्स पर प्रकाश डालो।
4 अजन्ता के चित्रों में रंग क्रिया का वर्णन करो।

अध्याय 6

बौद्ध काल की कुछ अन्य शैलियाँ

बौद्ध काल में चित्रकला अपने उच्च शिखर पर पहुंच चुकी थी। अजन्ता के सुन्दर मनोहर चित्रों को देखकर अन्य कलाकारों ने भी गुफाओं में चित्र अङ्कित किए। ये चित्रकार भी अजन्ता की बौद्ध शैली के ऋणी हैं। कुछ गुफाएं ऐसी भी हैं जिनके चित्र अजन्ता के चित्रों से मिलते जुलते हैं।

बाघ गुफाएं

मध्यभारत में माण्डू से लगभग 45 किलोमीटर पश्चिम में बाघ गुफाएँ स्थित हैं। इन गुफाओं तक पहुंचने के लिए पक्की सड़क बनी हुई है और मार्ग में स्थान स्थान पर विश्रामालय बने हुए हैं। महू स्टेशन से गुफाओं तक पहुंचने के लिए सवारी का अच्छा प्रबन्ध है। ये गुफाएं विन्ध्य पृष्ठ पर बाघ नदी के कगार स्थित हैं।

यहीं बाघेश्वरी देवी का एक प्राचीन मन्दिर है। यहाँ 9 गुफाएं स्थित थीं जिनमें सात की छत गिर चुकी है जिससे गुफाओं का भाग नष्ट हो गया है। इन गुफाओं की चित्रकारी भी अजन्ता की चित्रकारी के समान बड़ी सुन्दर है। इन गुफाओं को लोग पञ्च पाण्डव गुफाएँ कहते हैं। गुफाएं बौद्ध धर्म के महायान सम्प्रदाय से सम्बन्ध रखती हैं और इनका निर्माण काल ईसा की सातवीं या आठवीं शताब्दी का अनुमान किया जाता है।

गामाई की गुफा

ये गुफाएं विहार या मठ हैं। लोगों ने इन गुफाओं के नाम गामाई की गुफा, हाथीखाना इत्यादि रख दिये हैं। यहाँ के चित्रों में बुद्धदेव का पूजन

नुरण अश्वारोही भिक्षु तथा सेवक दिखाये गये हैं। शिव तथा विष्णु भगवान के मन्दिर भी पास में हैं।

इस काल के चित्र गुफा नं० 4 और 5 में सुरक्षित हैं परन्तु इन चित्रों के रंग बहुत धुँधले पड़ गये हैं। इन चित्रों का विषय क्या है इसके बारे में कुछ निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। इन चित्रों का विषय न तो धार्मिक ही है और न लौकिक ही। इन गुफाओं के कुछ चित्रों में महात्मा बुद्ध की जीवन सम्बन्धी घटनाओं को चित्र द्वारा दिखाया गया है। ये चित्र जातक और अजन्ता की कथाओं को लेकर बनाये गये हैं। यदि इन चित्रों की तुलना अजन्ता के चित्रों से करें तो हम यह कह सकते हैं कि ये चित्र बौद्ध कला की ही एक शाखा है। इन गुफाओं के चित्र कथाओं में बुद्ध अंगों में मिलते हैं। महावंश नामक प्राचीन बौद्ध ग्रन्थ के अनुसार इन चित्रों का विषय बौद्ध अनुमान किया जा सकता है।

यह पहले कहा जा चुका है कि इन गुफाओं की संख्या 9 है परन्तु गुफा नं० 4 और 5 में सबसे अच्छे और सुन्दर चित्र हैं।

(1) अग्र भूमि पर एक रानी और उसकी सखी का चित्र बड़ा समस्पर्शी है। इस चित्र में करुण रस को बड़ी सुन्दरता से दर्शाया गया है। रानी अपना मुख बायें हाथ से ढाँके हुए है द्वितीय हस्त-मुख स्मरणीय है।

(2) दूसरा चित्र एक सुन्दर नर्तकी का है जिसके चारों ओर पाँच लड़कियाँ हाथों में मंजीर तथा मृदंग लिए हुए नृत्य कर रही हैं। इस चित्र की तुलना हम अजन्ता की गुफा नं० 1 के चित्र से कर सकते हैं। इसकी आकृतियों की मुद्राओं में भी अजन्ता के समान सजीवता दिखाई पड़ती है। इसके इस चित्र में 6 नारियाँ इधर उधर हाथों में डण्डे (चक्र) और मंजीर लिए हुए हैं अजन्ता के चित्रों से मिलता जुलता है।

एक अन्य चित्र अश्वारोहियों का है। इस चित्र में एक मनुष्य की मुख मुद्रा से ऐसा प्रतीत होता है मानो उसका ध्यान भंग हो गया हो और वह उसका राज में है।

राज-समारोह का चित्रण बड़ा ही सुन्दर हुआ है। सब शान्त मुद्रा में बैठे हुए हैं। सेवक छत्र तथा चँवर लिए हुए हैं। हाथी पर पीले रंग की झूल पड़ी हुई है और आगे बढ़ता हुआ दिखाई देता है।

गुफा नं० 3 में झुकी हुई लड़की का चित्र बड़ा ही सुंदर है।

गुफा नं० 2 की छत कलाकृतियों (डिजाइन्स) से भरपूर हैं। इनकी शैली अजन्ता की शैली के समान ही है।

अजन्ता और बाघ शैली एक समान है परन्तु दोनों के समय और स्थान ने दोनों में थोड़ा सा अन्तर कर दिया है जो पहली दृष्टि में नहीं दिखाई पड़ता।

मद्रास के पास महाबलीपुर नामक स्थान में मूर्तिकला के नमूने की अनेक गुफायें और मंदिर हैं। वराह और दुर्गा के मन्दिर भी बने हुए हैं। एक चट्टान पर गंगा अवतरण का प्रसंग खुदा हुआ है।

सित्तनवासल गुफाएँ

ये गुफाएँ मद्रास प्रान्त में पल्लव राज्य के मध्य में कृष्णा नदी के किनारे पर स्थित हैं। इन गुफाओं का समय 600 से 628 ई० कहा जाता है। यहाँ पर किसी समय में सित्तनवासल का मन्दिर स्थित था जो चित्रों से अलंकृत था। भग्नावशेष चित्र अब बड़ी दुष्प्राप्य में है। कुछ चित्र छत और स्तम्भों पर बने हुए शेष रह गये हैं। छत के मध्य में कमलयुक्त एक तालाब का चित्रण बड़ी सुन्दरता से हुआ है जिसको देखकर हृदय प्रसन्न हो जाता है। मछली तथा जानवर इस तालाब की शोभा को और भी बढ़ा रहे हैं। इनके शरीर का रंग, प्रकाश और छाया का चित्रण तथा उनके मुख पर दिखाए गए भाव बड़े ही अनुपम हैं। ये चित्र जैन धर्म से सम्बन्ध रखते हुए प्रतीत होते हैं। यहाँ पर एक चित्र भगवान शंकर का है जिसकी रेखाएं सजीव हैं। स्तम्भों पर नर्तकियों के जो चित्र हैं वे जानदार हैं। ऐसा मालूम होता है कि इन चित्रों को चित्रकार ने सौन्दर्य भावना से प्रेरित होकर ही बनाया है। इसी गुफा में एक कमल नाल पकड़े हुए राजा व रानी का चित्र बड़ा मनोहर है।

इतिहासकारों का मत है कि इन गुफाओं के चित्रों का विषय जैन मालूम होता है क्योंकि कुछ चित्रों का सम्बन्ध जैन धर्म की गाथाओं से है।

गुफाओं के चित्रों की शैली

इन गुफाओं के चित्रों का विषय चाहे कुछ भी हो, परन्तु इनकी शैली बौद्ध शैली के निकटवर्ती ही है और इन चित्रों पर अजन्ता की बौद्ध शैली की

छाप स्पष्ट दिखाई देती है। नर्तकी का अङ्कन, भावनाएँ तथा हस्तमुद्राएँ सब अजन्ता की नर्तकी की भावनाओं और हस्तमुद्राओं से मिलती हैं।

इस शैली को इन्हीं गुफाओं के नाम से पुकारते हैं। हम विश्वासपूर्वक कह सकते हैं कि सित्तनवासल शैली अजन्ता की बौद्ध शैली की ऋणी है।

बम्बई की बाघ्मी गुफाओं के चित्र भी अजन्ता के चित्रों के समान हैं। इन चित्रों का विषय भी बौद्ध धर्म की कथाएँ ही हैं। चित्रकारों ने बादमी गुफाओं के चित्रों को अजन्ता के चित्रों के इतना निकट कर दिया है कि साधारण दृष्टि से देखकर चित्रों का वर्गीकरण बड़ा कठिन है।

बौद्ध धर्म का प्रचार लंका, चीन, जापान आदि दूर-दूर देशों तक था। लंका की सिगिरिया गुफाओं के चित्र अजन्ता के चित्रों से मिलते जुलते हैं। अजन्ता और सिगिरिया दोनों स्थान ही बौद्ध कला के केन्द्र हैं। दोनों स्थानों की गुफाओं में बहुत ही साम्य है। सिगिरिया की गुफाओं के चित्रों का विषय भी वही है जो अजन्ता की गुफाओं का है। शैली में भी कोई परिवर्तन नहीं है।

दोनों स्थानों के चित्रों की रेखाएँ भावपूर्ण हैं। सिगिरिया के चित्रों में तत्व विशेष है इसमें वह कौशल नहीं है। ये चित्र तत्कालीन शिल्प से बड़ा साम्य रखते हैं यह मान्य अवश्य है।

डा० तारानाथ के मतानुसार भारत में बौद्धकला की तीन शैलियाँ प्रचलित थीं। (1) देव शैली, (2) यक्ष शैली, और (3) नाग शैली।

(1) देव शैली—मगध राज्य के आस-पास यह शैली प्रचलित थी, जो महात्मा बुद्ध के देहान्त के पश्चात् कई शताब्दियों तक उन्नति करती रही।

(2) यक्ष शैली—डा० तारानाथ के मतानुसार यक्ष शैली भारत में प्रचलित रही। इस शैली के चित्रकार अति मानव थे।

(3) नाग शैली—यह शैली नागार्जुन के समय में तृतीय शताब्दी के आरम्भ में प्रचलित थी।

इन सभी शैलियों में यथार्थवादी तत्व प्रमुख थे। यह डा० तारानाथ जी के शब्दों से स्पष्ट है —

"देव, यक्ष और नागों की रचनाएँ यथार्थता के कारण वर्षों तक लोगों में भ्रान्ति उत्पन्न करती रहीं। इस समय भारत में कला शैलियों के तीन मुख्य

विद्यापीठ थे, जिनके चित्रकार चित्रकला की दिन प्रति दिन उन्नति कर रहे थे।

मध्य प्रदेश विद्यापीठ

इस विद्यापीठ की स्थापना बिम्बसार ने की थी। बिम्बसार देव शैली के मुख्य चित्रकार माने जाते हैं। देव शैली और चित्रकारों की शैली में साम्य था।

पश्चिमी प्रदेश विद्यापीठ

इसका मुख्य स्थान मारवाड़ था। इसके द्वारा यक्ष शैली की बड़ी उन्नति हुई।

पूर्वी प्रदेश विद्यापीठ

पूर्वी प्रदेश विद्यापीठ का मुख्य केन्द्र बङ्गाल था। नाग शैली की उन्नति इसके द्वारा हुई।

इन शैलियों के विषय में हम पूर्ण रूप से अगले अध्याय में प्रकाश डाल रहे हैं।

प्रश्न

1 बाघ गुफा कहाँ है? इन गुफाओं के चित्रों का वर्णन करो।
2 अजन्ता शैली तथा बाघ शैली की तुलना करो।
3 सित्तनवासल गुफाएं कहाँ हैं और क्या प्रसिद्ध हैं? उनके चित्रों का वर्णन अपने शब्दों में करो।
4 बादमी गुफाओं के चित्रों का वर्णन करो।

अध्याय 7

देव, यक्ष, तथा नाग शैलियाँ

(1) देव शैली

हम पिछले अध्याय में पाठकों को इन शैलियों का परिचय दे चुके हैं। इनके स्थानों के विषय में लिख चुके हैं कि कहाँ कहाँ इनका जन्म हुआ।

ये तीनों शैलियाँ बौद्ध कला की सहायक शैलियाँ कही जाती हैं। इनमें से देव शैली मगध के आस पास के भाग में प्रचलित थी जो महात्मा बुद्ध के देहान्त के पश्चात् कई शताब्दियों तक प्रचलित रही और बिम्बसार के द्वारा इसकी अधिक उन्नति हुई। इस शैली के चित्रकार अगस्त्य थे तथा उनकी शैली प्राचीन देवों की शैली के समान थी।

देव शैली के चित्र

देव शैली के चित्र बौद्ध शैली के चित्रों के समान हैं और वे बहुत कुछ बौद्ध शैली के चित्रों से भी भिन्न हैं। हाथ, फूल, फल, आँखों की चितवन आदि का चित्रण बहुत ही सुन्दर ढङ्ग से हुआ है। इस शैली के चित्र बड़े सजीव हैं और इस शैली के चित्रकारों ने ऊँची सौन्दर्य भावनाओं से प्रेरित होकर इन को चित्रों का रूप दिया है।

देव शैली के चित्रों का विषय

इस शैली के चित्रों का विषय न तो पूर्णतया धार्मिक है और न लौकिक। कुछ चित्रों की रचना सामाजिक विषयों को ध्यान में रखकर हुई। इसके अतिरिक्त इस शैली के चित्रकारों ने फूल फल जानवरों तथा चिड़ियों के चित्र भी बड़े सुन्दर ढङ्ग से बनाये जो देखने योग्य हैं। इस शैली के चित्र अपने समय के सामाजिक जीवन के दर्पण हैं।

श शली का काल निणय

इस नाली का काल लगभग 600 ई० पू० स 300 ई० पू० तक बताया जाता है।

य शली के चित्रो की शैली

इम नाली का विषय जो कुछ भी हो, परन्तु शैली म स्पष्टत बौद्ध शली की छाप है। इस शली के चित्रो को दखकर निश्चयपूवक कहा जा सकता है कि इन चित्रो की शली अजन्ता शली स मेल खाती है और उसी की एक शाखा दिखाई पडती है।

देव शली के रग

देव नाली का रग विधान बौद्ध शली के समान है। इस शली के रग साधारण हैं जो चमकील तथा अमिश्रित हैं। समय के परिवतन के कारण इस शली के अधिकतर चित्र नष्ट हो चुके हैं फिर भी जो कुछ नष हैं उनके देखने से नात होता है कि इस शली के चित्रकारो को रगो का अच्छा नान था। इस नाली के चित्रकारो न अपने चित्रों म अधेर तथा प्रकाश का यवहार ही कम किया है।

देव नाली का अन्तर

बौद्ध शली की उन्नति इस शली के पतन का एक कारण बन गई, और यह शली लगभग 600 ई० पू० स 300 ई० पू० तक जीवित रहकर चल बसी।

(2) यक्ष शली

यक्ष शली भी बौद्ध शली की एक शाखा कही जाती है। यक्ष शली का सम्बन्ध तारानाथ के कथन के अनुसार अशोक स बताया जाता है। इस शली के चित्रकार अतिमानव थ, जिनकी चित्रकला अत्यन्त आश्चयजनक थी।

यक्ष शली तथा बौद्ध शली म कोई तात्विक अन्तर नही दिखाई पडता। जो कुछ अन्तर दिखाई पडता है वह केवल समय के परिवतन के कारण दिखाई देता है। सयोजन का क्रम, रेखाङ्कन की सफलता, भावो का चित्रण आदि अजन्ता शली के समान हैं।

यक्ष शैली का विषय

इस शैली के चित्रों का विषय अजन्ता शैली के समान है। इसमें धार्मिक व सामाजिक चित्रों को बहुत ही सुन्दर ढंग से चित्रित किया गया है, जो दर्शन योग्य है। परन्तु यह दुःख के साथ कहना पड़ता है कि संसार के समय के परिवर्तन के कारण इस शैली के चित्र मिट चुके हैं और कुछ चित्र शेष हैं वे अजन्ता के चित्रों में मिल जाते हैं। इस चित्र-शैली का विषय-क्षेत्र बहुत संकुचित है। केवल मनुष्यों, पशुओं तथा भावों का चित्रण अच्छे ढंग से हुआ होगा। इस शैली का विषय व्यापक है।

यक्ष शैली की टकनिक

इस शैली की टकनिक बौद्ध शैली के समान है। इस शैली के चित्रों को गुफाओं की दीवारों पर बनाया गया जो समय के परिवर्तन के कारण मिट गये। उनके मिटने से इस शैली की टकनिक भी मिट गई। यह चित्र शैली भारतीय भावनाओं को पूर्ण रूप से प्रकट करती है।

यक्ष शैली का रंग विधान

इस शैली का रंग विधान अजन्ता चित्र शैली के समान है। इसमें रंगों का प्रयोग हुआ है जो आँखों को देखने में भले लगते हैं। इसमें प्रयुक्त हुआ रंग हल्के रंग से बनाया गया है। इसको इस सुन्दर विधि से बनाया है, कि उसमें भारीपन उत्पन्न नहीं हुआ है। अधिक अन्तर पर स्थित आकृतियों को गहरा तथा उस स्थान की पृष्ठभूमि को दूरी के कारण हल्का दिखाया गया है, जिसके द्वारा उसमें सुन्दर संगति उत्पन्न हो गई है।

यक्ष शैली की मुद्राएं

इस शैली की मुद्राएँ बौद्ध शैली के चित्रों की मुद्राओं के समान हैं। हाथों की अँगुलियों से कई प्रकार के भावों को प्रकट किया गया है। इनमें गति है तथा उल्लास टपकता है।

यक्ष शैली के रस चित्र

इस शैली में रस चित्र कम संख्या में देखने को मिलते हैं। इस शैली के चित्रकारों का प्रधान ध्येय भाव अनुभावों का चित्रण तथा तदनुकूल रसों का सृजन है। शरीर के प्रत्येक अंग में लचक है जिसमें सुन्दरता है।' कामना

विनय, आशा निराशा, दान ग्रहण भय शान्ति सेवा आदि भावों का इस शैली के चित्रकारों ने बहुत ही सुन्दर ढंग से चित्रण किया है।

यक्ष शैली की रेखाएं

इस शैली के चित्रों की रेखाएँ सुन्दर हैं। बारीक तथा मोटी दोनों प्रकार की रेखाओं का प्रयोग हुआ है जिनमें गति है और भद्देपन का नाम बिल्कुल दिखाई नहीं पड़ता।

यक्ष शैली के पर्सपेक्टिव

इस शैली के चित्रों को अङ्कित करने में चित्रकारों ने पर्सपेक्टिव के सिद्धान्त का पूर्ण रूप से पालन किया है जिनके द्वारा चित्र सुन्दर दिखाई पड़ते हैं।

यक्ष शैली का संयोजन

इस शैली के चित्र संयोजन में अनुपम हैं। एक इकाई का दूसरी इकाई से संयोजन बहुत ही सुन्दर विधि से हुआ है जो दर्शकों को अपनी ओर खींच लेता है।

(3) नाग शैली

"नाग शैली नागार्जुन के समय में तीसरी शताब्दी के प्रारम्भ में प्रचार में आई। यह शैली भी बौद्ध शैली की एक शाखा कही जाती है। इस शैली के चित्रकारों ने जो चित्र बनाये हैं, वे बहुत ही सुन्दर हैं जो अपनी यथार्थता के कारण वर्षों तक लोगों में भ्रान्ति उत्पन्न करते रहे हैं।" —डा० ताराचन्द

नाग शैली का संयोजन

नाग शैली के चित्रकारों ने अपने चित्रों में संयोजन का अच्छे रूप से प्रयोग किया है जिससे उनके चित्रों की सुन्दरता बढ़ गई है। प्रधान इकाई का चित्रण बहुत ही सुन्दर विधि से हुआ है जो निकट पूर्व की इकाइयों की सुन्दरता को किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचाता। चित्रों की इकाइयों का संयोजन आँखों को भला लगता है।

नाग शैली के काल्पनिक दृश्य

इस शैली के चित्रकारों ने काल्पनिक दृश्य के सिद्धान्तों का पालन बहुत सुन्दर विधि से किया है, जिसके द्वारा चित्रों की सुन्दरता अधिक बढ़ गई है।

नाग शैली की रेखाएँ

इस शैली के चित्रों की रेखाएं सुन्दर तथा सजीव हैं। इनमें गति है और उनके द्वारा बनी हुई मुद्राएँ बहुत ही सुंदर हैं। इनमें शक्ति और सौन्दर्य है, तथा लचक भी है।

नाग शैली के रस चित्र

इस शैली के चित्र रस चित्र कहे जाते हैं। रस और इन रेखाओं का परस्पर बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। आँखों की चितवन, हाथों की मुद्राओं तथा शरीर के प्रत्येक अंग में रस की भावनाएँ भरी हैं।

नाग शैली की मुद्राएँ

इसी शैली के चित्रकारों ने मुद्राएँ बहुत ही सुन्दर विधि से बनाई हैं। अजन्ता की शैली की प्रत्येक मुद्रा अपना एक विशेष अर्थ प्रकट करती है। उसी प्रकार नाग शैली की मुद्राएं भी एक विशेष प्रकार का अर्थ रखती हैं।

नाग शैली का रङ्ग विधान

रंग का विधान इस शैली का अजन्ता शैली के समान है। इस शैली के चित्रकारों ने अपने चित्रों में साधारण रंगों का प्रयोग किया है। साधारण रूप से चित्रों में गहरी पृष्ठभूमि को हल्के रंगों से उभारा गया है। इस शैली के चित्र के रंग संगति की दृष्टि से साधारण तथा प्रभावपूर्ण हैं।

इन शैलियों के अतिरिक्त देश में इस समय रूपिणी भारतीय शैली, ब्रह्म शैली, नेपाल, काश्मीर शैलियाँ भी प्रचलित थीं, परन्तु वे किसी न किसी रूप में इन शैलियों से प्रेरणा ग्रहण करती थीं।

प्रश्न

1 देव शैली के विषय में पूर्ण रूप से लिखिये।

2 यक्ष शैली का परिचय देते हुए इसके चित्रों की विशेषताओं का पूर्ण रूप से वर्णन करो।

3 नाग शैली का पूर्ण रूप से वर्णन कीजिए।

4 देव शैली तथा यक्ष शैली की तुलना करो।

5 नाग शैली, देव शैली तथा यक्ष शैली में से तुम किसको अच्छा समझते हो ? पूर्ण रूप से लिखो ।

6 यक्ष शैली तथा नाग शैली की तुलना करो ।

7 निम्नलिखित पर नोट लिखो—
उत्तर प्रदेश विद्यापीठ, पूर्वी तथा पश्चिमी विद्यापीठ, बिम्बसार, मगाधर, सारनाथ ।

अध्याय 8

पूर्व मध्य काल की चित्रकला

(700 से 1000 ई० तक)

अजन्ता की चित्रकला के बाद भारतीय चित्रकला म एक एस युग का पदा पण होता है जिसे हम चित्रकला के अध पतन का युग कह तो ठीक होगा। इम युग म एक नवीन जाति, जिसकी वप भूपा धम-सभ्यता और रहन-सहन पृथक था भारतवय पर आक्रमण करती है। यह जाति मुसलमान थी। इस जाति के मनुष्यो ने मुहम्मद बिन कासिम क सेनापतित्व म 712 ई० म सिन्ध पर आक्रमण किया। इस समय बौद्ध धम का पतन हो रहा था और हिन्दू धम उन्नति की ओर जा रहा था। इस महायुद्ध के कुछ वप बाद इस नव आगन्तुक जाति ने भारत म बसना आरम्भ कर दिया और हिन्दू सभ्यता से परस्पर सम्बन्ध कर लिया।

इस युग म मूर्तिकला तथा वास्तु कला की उन्नति हुई। हिन्दुओ का सुन्दर-सुन्दर मूर्तियो का बनाना आता था। धम की वृद्धि क साथ-साथ मूर्तिकला तथा चित्रकला को भी बडा प्रोत्साहन मिला।

इस काल के चित्रो क नमूने अब भी एलोरा और एलीफेण्टा की गुफाओ म प्राप्य हैं। मध्य काल क इस बडे युग का चित्रकला के विद्वान् दो भागो म विभाजित करते हैं—

(1) पूव मध्य काल, (2) उत्तर मध्य काल।

पूव मध्य काल 700 ई० स 1000 ई० तक अनुमान किया जाता है।

पूव मध्य काल के चित्र

इन चित्रो को देखने स स्पष्ट हो जाता है कि इन चित्रो म वह बात नही है, जो अजन्ता के चित्रो म पाई जाती है। य सजीव प्रतीत नही होते। इन चित्रो

में अजन्ता के चित्रों की भाँति गति नहीं है। इन चित्रों से यह प्रतीत होता है कि अजन्ता के भित्ति चित्रों की शैली मानो रूढ़िबद्ध होकर निर्जीव हो चुकी है। एलोरा और एलीफेण्टा की गुफाओं के अतिरिक्त कुछ और गुफाओं में भी इस समय के चित्र उपलब्ध हैं।

विद्वान् इस समय के चित्रों के बारे में अपनी राय प्रकट नहीं करते परन्तु इस काल का कुछ-कुछ पता इन चित्रों से अवश्य लगता है।

चित्र सूत्र इसी काल में लिखा गया। इस पुस्तक के कुछ पृष्ठ चित्रकला पर भी लिखे गये हैं। इस पुस्तक में लिखा है कि नृत्य के अभिनय का पूर्ण ज्ञान प्राप्त किए बिना चित्रकार को चित्र नहीं बनाने चाहिए।

इस पुस्तक में चित्रों के अंकन रंग योजना और लक्षण पर भी सूत्र लिखा गया है। इस वर्णन से स्पष्ट होता है कि चित्रकला का गहरा सम्बन्ध नृत्य और अभिनय से रहा है। चित्रकार को नृत्य और अभिनय की कला से परिचित होना आवश्यक है।

इस पुस्तक में अजन्ता की चित्रकला की मनोरम भाव भंगिमा तथा मुद्राओं का रहस्य भी प्रकट किया गया है। इसमें भिन्न भिन्न प्रकार के मनुष्यों के चित्रों के विषय में लिखा है।

जिस प्रकार साहित्य के लिए भी रसों का ज्ञान अति आवश्यक है उसी प्रकार भारतीय चित्रकला के लिए नव रसों का ज्ञान आवश्यकीय है। इस सूत्र से पता चलता है कि रसों को किस प्रकार से चित्रों में दिखाना चाहिए।

रामचरित मानस भी इसी युग में लिखा गया है। राम के पूरे जीवन को चित्रों द्वारा दिखाया गया है। इन चित्रों को देखने से प्रतीत होता है कि उस समय चित्रकला राज परिवार की शिक्षा का एक आवश्यक अंग बन गई थी।

इतिहास के पंडितों का कथन है कि राजपूत राजा उदार और कला प्रेमी थे। उनके समय में कई कला की पुस्तकों की रचना हुई और कला के प्रत्येक अंग की ओर ध्यान दिया गया। राजपूत काल के राजाओं ने मंदिरों के लिए धर्म और दान के लिए बहुत यश प्राप्त किया। उनकी कृति कला के उच्चतम नमूनों के रूप में सारे देश में फैली हुई दिखाई देती हैं। इस काल की तीन शैलियाँ हैं।

(1) शिखर शैली—उत्तर के मन्दिरों में इस शैली के सबसे अच्छे



चित्र 8—पूर्व मध्य काल का चित्र

भुवनेश्वर का मंदिर, मालवा के अन्तर्गत उदयपुर में शिव का मंदिर और बुन्देलखण्ड में खजुराहो के मंदिरों में मिलते हैं।

(2) चालुक्य शैली—इस शैली के मंदिर मसूर, हलविद, मदुरा और त्रिचनापल्ली में हैं।

(3) द्राविड़ शैली—इस शैली के मंदिर कांची, तंजोर, मदुरा और त्रिचनापल्ली में मिलते हैं। मूर्तिकला तथा चित्रकला की दृष्टि से ये मंदिर संसार में बड़ा ऊँचा स्थान रखते हैं। शिल्पकारों ने जो सजावट का काम इन मंदिरों पर किया है, वह बहुत ही सुंदर और अच्छा है। इन सजावट के नमूनों के सभी भाग बहुत ही सुन्दर रूप से बनाए गये हैं। जब हम इन सजावट के नमूनों की जिनको कला की भाषा में कला-कृतियाँ (designs) कहते हैं अजन्ता की कला कृतियों से तुलना करते हैं तो स्पष्ट हो जाता है कि पूर्व मध्य काल के चित्रकार इन कला कृतियों में वे विशेषताएँ उत्पन्न करने में असमर्थ रहे। यथार्थ तो यह है कि अजन्ता के चित्रकार ऐसे अनमोल रत्न बनाकर छोड़ गये हैं जिनकी भली भाँति नकल करना भी कठिन है।

पूर्व मध्य काल की गुफाओं के चित्र

बम्बई नगर के निकट कई गुफाओं की श्रेणियाँ हैं। इनमें धारापुरी भागे श्वरी कन्हेरी मरोल तथा मण्डपेश्वर की गुफाएँ हैं। धारापुरी की गुफाएँ बम्बई के समीप समुद्र में स्थित ऐलीफेण्टा टापू पर हैं। इस टापू पर पहले एक पत्थर का हाथी था जिसको देखकर पुर्तगाल निवासियों ने इस टापू का ऐलीफेण्टा नामकरण किया। यह हाथी आजकल विक्टोरिया गार्डन्स (Victoria Gardens) के अजायबघर में दिखाई पड़ता है। इन गुफाओं में कहीं-कहीं पर चित्रकारी के अवशेष भी मिलते हैं। प्राचीन ग्रंथों के अध्ययन से मालूम होता है कि किसी समय इन सम्पूर्ण गुफा में चित्रकारी के नमूने विद्यमान थे जिनको समय के कराल हाथों ने नष्ट कर दिया।

औरंगाबाद (हैदराबाद राज्य में) से प्राय 24 किलोमीटर की दूरी पर एक पर्वत के किनारे सुन्दर एलोरा के गुफा मन्दिर बने हैं। इस स्थान पर प्रथम 12 गुफाएँ बौद्ध सम्प्रदाय की तथा 17 गुफाएँ ब्राह्मणधर्म की (शैवों) और अन्त में 5 गुफाएँ जैन धर्मावलम्बियों की हैं। ये गुफाएँ छठी और सातवीं शताब्दियों की बनी हुई कही जाती हैं। इन गुफाओं में प्रसिद्ध कैलाश मन्दिर है। इन मन्दिरों में बना सिंह तथा हाथियों का अच्छा दिखाव है।

मन्दिर के अन्दर सुन्दर चित्रकारी थी जिसका बहुत थोड़ा भाग ही दिखाई देता है।

सुप्रसिद्ध कन्हेरी की गुफाएँ ठाँड़ी तथा बोरीवली स्टेशनों से लगभग 8 किलोमीटर दूरी पर स्थित हैं। यह स्थान भी बम्बई के समीप स्थित है। ये गुफाएँ नदी नालों की कही जाती हैं। यहाँ 109 गुफाएँ हैं पर इनमें एक ही गुफा मुख्य है, जो कार्ली के नमूने पर बनी है। इसमें महायान सम्प्रदाय की मूर्तियाँ विद्यमान हैं। मूर्तियों के साथ-साथ इसकी चित्रकारी के नमूने भी जो टूटी-फूटी दशा में हैं दिखाई देते हैं। कुछ को समय ने नष्ट किया कुछ पत्थरों की सामग्री में नष्ट हो गये।

पूर्व-मध्य काल चित्रकला के इतिहास में अधःपतन युग के नाम से प्रसिद्ध है यद्यपि इस समय में कला की उन्नति बिल्कुल नहीं हुई। ऊपर बताए हुए स्थानों के चित्रों में अजन्ता की परम्परा तो दिखाई देती है परन्तु चित्रों की रेखाओं में जान नहीं है। चित्र भावाभिव्यक्ति में सर्वथा असमर्थ हैं। चित्रों की शैली अजन्ता से पृथक नहीं है, परन्तु उसमें निम्न श्रेणी की कही जाती है।

चित्रकारों का क्षेत्र बड़ा हुआ था जिसमें अनेक विषय सम्मिलित थे। चित्रों का विषय केवल धार्मिक ही नहीं रह गया था। इस समय की चित्रकला लौकिक दिखाई पड़ती है और इसका प्रचार राज दरबार की कला के रूप में हो रहा था। ये चित्र जैन और बौद्ध पुस्तकों के चित्रों की भाँति थे। चित्र पुस्तकाकार रूप में बनाए जाने लगे थे। बाद के जैन और बौद्ध चित्र इसी लौकिक परम्परा का विकसित रूप हों यह सम्भव है।

प्रश्न

1 पूर्व-मध्य काल (700 ई० से 1000 ई० तक) की चित्रकला पर एक निबन्ध लिखो।

2 'चित्र सूत्र' पर एक निबन्ध लिखो।

3 पूर्व-मध्य काल में कौन कौनसी चित्रकला की पुस्तकें लिखी गयीं? इनमें से रामचरित मानस के विषय में तुम जो जानते हो लिखो।

4 नागर शैली का वर्णन करो।

5 चालुक्य शैली तथा द्राविड़ शैली का वर्णन अपने शब्दों में करो।

6 इस समय की गुफाओं के चित्रों का वर्णन करो।

अध्याय 9

उत्तर मध्य काल की चित्रकला

(1000 ई० से 1600 ई० तक)

इस काल में भारत पर बाहरी आक्रमण शुरू हो गये थे। महमूद गजनवी ने भारत पर 17 आक्रमण किये। इन बाहरी आक्रमणों से देश को बड़ी क्षति पहुंची। मूर्तिकला तथा चित्रकला पर भी इसका गहरा प्रभाव पड़ा। सन् 1050 ई० से 1080 ई० के समय के बने हुए चित्रों का कोई चिह्न भी उपलब्ध नहीं है। जो चित्र बचाए जा सके वे पुस्तक चित्र हैं। इन चित्रों को तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं—(1) बौद्ध पुस्तकों के चित्र (2) जैन पुस्तकों के चित्र और (3) [illegible] पुस्तकों के चित्र।

बौद्ध धर्म के चित्रों का समय 10 वीं शताब्दी से 13 वीं शताब्दी तक का अनुमान किया जाता है। पुस्तकें भी इस समय उत्कृष्ट ताड़पत्र पर लिखी गई हैं। पत्रों पर स्थान-स्थान पर महात्मा बुद्ध और अन्य देवी देवताओं के चित्र अङ्कित हैं। इधर उधर महात्मा बुद्ध जी की पूर्व जन्म की कथाएं भी अङ्कित हैं। इनको बनाने में लाल, काला, पीला, श्वेत, हरा, गुलाबी और बैंजनी आदि कई रंगों को प्रयोग में लाया गया। इस समय के चित्र बिहार, बंगाल तथा तिब्बत के चित्रों के सादृश्य हैं। इन स्थानों में न्यूनतम अन्तर पाया जाता है। इनकी शैली में यद्यपि अजन्ता की परम्परा विद्यमान है, परन्तु चित्रों की मुद्राओं तथा अंगों में जड़ता पाई जाती है। गति और जीवन नहीं दिखाई देता। इस युग के चित्रों में मुखाकृतियों की बनावट अधिकता है। उनके नाक बहुत लम्बी बनाई गई है।

उत्तर मध्य काल के प्राचीन मन्दिरों की चित्रकला

चिदाम्बर मन्दिर स्तम्भ कला की दृष्टि से अत्यंत प्रसिद्ध है। स्तम्भों की अलंकृत शोभा मण्डपों में है।

तिरुकुराज मन्दिर की चित्रकारी अच्छी है। इस मन्दिर में रामायण तथा महाभारत की कथाओं का बड़ी सुन्दरता से अंकन हुआ है।

परशुरामेश्वर मंदिर भी कला की दृष्टि से दर्शनीय है। टप्पादार नक्काशी मूर्तिकृति के साथ और कोने कपाटों में आयन की पद्धति शोभनीय है।

मानापपुर के केशव के मंदिर की दीवारों पर पहले नीचे से ऊपर तक रामायण तथा भागवत की कई कथाओं के चित्र बनाकर उनको खोद दिया गया है।

सास-बहू के मन्दिर में कथाओं को खोद कर अंकित किया गया है।

मदुरा में मीनाक्षी देवी के मंदिर की बाहरी दीवार पर चारों ओर चित्र से बने हैं।

जगन्नाथ जी के जग मोहन की चौखट के द्वार नीले पत्थर के बने हैं। इन पर बने हुए बेल बूटे बड़े चित्ताकर्षक हैं।

उत्तर मध्य काल के चित्रों का विषय

उत्तर मध्य काल की चित्रकला का अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि इस काल में भित्ति चित्रों का बनना शिथिल सा गया था। इस समय बौद्ध और जैन पुस्तकों के चित्रों की संख्या अधिक थी। बौद्ध पुस्तकों के चित्र अधिक प्राचीन है तथा समय 10 वीं शताब्दी से 17 वीं शताब्दी तक का अनुमान किया जाता है।

(1) बौद्ध पुस्तकों की चित्र शैली

बौद्ध पुस्तकों के चित्र बंगाल, बिहार और नेपाल में अधिक मिलते हैं। इन चित्रों की शैली बौद्ध शैली है परन्तु इस शैली में पतन के चिह्न पाये जाते हैं। इन चित्रों में वे विशेषताएं नहीं हैं जो अजन्ता की गुफाओं के बौद्ध शैली के चित्रों में देखने को मिलती हैं। इन चित्रों में अनुपात का विशेष ध्यान रखा गया है। इन चित्रों में दोनों आँखें पूरी तरह नहीं दिखाई गई हैं। एक आँख पूरी और दूसरी आँख का केवल चौथाई भाग बनाया गया है। मुख के अनुपात में इन चित्रों में नाक कुछ बड़ी दिखाई गई है।

रंगों का प्रयोग भी नियमानुसार किया गया है। मुख्यतः हरा, गुलाबी, बैंगनी, लाल तथा श्वेत रंगों का प्रयोग किया गया है। चित्रकारों ने मुख्य तथा द्वितीय रंगों का बड़ा सुन्दर ढंग से मिश्रण किया है।

रंगो का प्रयोग भी नियमानुसार किया गया है। मुख्यत हरा, गुलाबी, बगनी कार्ने तथा श्वेत रंगो का प्रयोग किया गया है। चित्रकारो ने मुख्य तथा द्वितीय रंगो का बडे सुदर ढग से मिश्रण किया है।

भारत म जन धम का प्रचार बौद्ध धम मे बहुत पहले हुआ, इस कारण जन चित्रकला का जन्म बौद्ध चित्रकला से बहुत पहले हुआ परतु बौद्ध चित्रकला दिन प्रति दिन उन्नति के शिखर पर चढती गई। जन चित्रकला इतनी उन्नति न कर सकी। उत्तर मध्य काल म कुछ उन्नति हुई। इसके कुछ पुराने चित्र उडीसा से उदयागिरि और खदागिरी नामक गुफाओ म प्राप्त है। सातवी शताब्दी की जन चित्रकला के नमूने उस समय के मन्दिरो म मिलत है। इनके विषय म डा० कुमारस्वामी की भी यही राय है। डा० स्वामी लिखते है कि 'सभी हस्तलिखित ग्रन्थो के चित्रो के संयोजन से व्याव हारिक परिचय म यह बात स्पष्ट है कि प्राप्त चित्रकला किसी काल से चली आ रही परम्परा का विकास है जिसम जन चरित्रो की घटनाएँ अवगत *नियमो के आधार पर बहुत काल से चित्रित की जाती रही हैं।'*

(2) जन पुस्तको की चित्र शली

जन चित्रकला के चित्र हमको श्वेताम्बर सम्प्रदाय की कल्पसूत्र अङ्ग-सूत्र नमिनाथ चरित्र धमतविलास आदि पुस्तको म देखने को मिलते हैं।

चित्रो का विषय धम है। जन धम के सभी देवताओ के चित्र बन है। चित्रो की शली के विषय म प्रो० एम० के० वर्मा का कथन है कि इस शली की सीमाए रगाय स्याही म बाधी गई हैं। य चित्र शुद्ध आलंकन हैं और भारतीय लिपि का एक अग मालूम होत है। लिपियो क शृङ्गार की दृष्टि म य यथसुच बहुत अच्छ बन पडे हैं परन्तु अकन का सचाई उनम नहीं है। रेखाओ म अनावश्यक प्रयास नहीं किया गया है। व साधारण लिपि के रूप म अङ्कित हैं। यद्यपि रगाएं मोटी और भद्दी हैं फिर भी उनका भद्दा पन कुशल हाथो की कुशलता का द्योतक है शीघ्रता का नहीं। रेखाओ म अपने ढग की काफी गति है। चित्रो म भगिमाएं और मुद्राएं अस्वाभाविक हैं। उनको देखकर कठपुतली का आभास होता है। प्रकृति चित्रण म अस्वा भाविक आलंकारिकता स काम लिया गया है। शारीरिक चित्रण म चित्र कुछ विशेष प्रकार के हैं—कानो तक खिचा आंख पतली कमर और उपर क अंग

का चौड़ापन अन्य पूर्ववर्ती रचनाओं से स्पष्ट भिन्न है। घटनाओं के चित्रण का ढंग सुन्दर है। अङ्कन में पूर्ण संतुलन है तथा पृष्ठ का संयोजन कलापूर्ण है। बहुत ही कम रंगों का प्रयोग हुआ है परन्तु वह खूब गहरा है। रंगों की योजना सुन्दर है। लाल और पीले रंगों की प्रधानता है।

जैन चित्रकला के चित्र उत्कृष्ट हैं। चित्रों को देखने से मालूम होता है कि प्रोफेसर साहब का अवलोकन अक्षरशः सत्य है। चित्रों में रेखाएँ सिद्धहस्तता [illegible] है। तथा दृश्य अति सुन्दर है।

इस चित्र में रंगों का संयोजन अजन्ता के चित्रों के रंगों के विपरीत है। अधिक [illegible] रंग धरातल में प्रयोग किया गया है। अधिकतर लाल रंग को लगाया गया है।

इस काल में कुछ ऐसी जैन पुस्तकें लिखी गईं थीं, जो चित्रकला की उन्नति में सहायक होती हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं—श्वेताम्बर जैन सम्प्रदाय की कल्पसूत्र अङ्गसूत्र और नेमिनाथ चरित-सागर।

इस शैली के कुछ चित्र ऐसे भी हैं जिनका विषय जैन नहीं है। इनको डा० कुमार ने पश्चिम भारत शैली का नाम दिया है। ये चित्र पश्चिमी भारत में ही बने थे। इस शैली के कुछ ग्रन्थ पूर्व भारत में भी मिले हैं।

जैन शैली के चित्रों की विशेषताएँ

इस काल के चित्रों में कुछ विशेषताएँ हैं जो उसे अपने से [illegible] को अलग कर देती हैं। चित्रों की रेखाएँ स्वाभाविक न बनी हैं। चित्र निष्प्राण हैं। अङ्ग भंगिमा और मुद्राएँ गतिहीन हैं। पशु और पक्षी के चित्र जब देखते हैं तो प्रतीत होता है कि कोई कठपुतली है। प्रकृति चित्रण में आलंकारिकता से काम लिया है। इनके बनाने में बहुत ही कम रंगों का प्रयोग किया गया है। चित्र सजीव नहीं है और न किसी प्रकार की मौलिकता उनमें पाई जाती है। यदि इन चित्रों की तुलना अजन्ता के चित्रों से की जाय तो इन चित्रों में किसी भी प्रकार से संतुलन नहीं है। इस समय के चित्र भारतीय मूर्तिकला के एक अङ्ग मात्र मालूम पड़ते हैं। इन चित्रों में अपने ढंग की पर्याप्त कुशलता और निर्भीकता है। लिपियों के कारण इस समय के चित्र बहुत भद्दे बन गये हैं परन्तु फिर भी इनमें भद्दापन है अजन्ता के चित्रों में भद्दापन नाममात्र भी नहीं है।

जन शैली की टेकनिक तथा विषय

इस शैली में सबसे बड़ा दोष यह है कि टेकनिक तथा विषय को दुहराया गया है कल्पना तथा नवीनता का अभाव है।

इस समय के चित्रों में बौद्ध और जैन देवी देवताओं के अतिरिक्त सरस्वती लक्ष्मी आदि देवी देवताओं के चित्र भी अङ्कित हैं। चित्रों को कागज पर बनाया गया है। जौनपुर के कल्पसूत्र के चित्र प्रधान हैं। हाथियों के चित्रों पर राग रागिनियाँ और तान के चित्र बने हैं। नृत्य चित्र भी अङ्कित हैं। इस शैली का क्षेत्र अधिक विस्तृत है। इस शैली के चित्र तिब्बत, ब्रह्मा और स्याम में मिलते हैं।

जन शैली की उन्नति

जब इस शैली का प्रचार हो रहा था, तब 15 वीं शताब्दी में एक बार फिर चित्रकला करवट लेती है और 00 वर्ष की ओर निद्रा के उपरान्त फिर से जाग्रत होती है। इसके साथ साथ संगीत, वास्तुकला, साहित्य आदि ललित कलाओं में भी उन्नति हुई। चित्रकला को फिर एक बार धर्म का अवलम्बन मिला। भक्ति आन्दोलन की धारा में सारा देश डूबने लगा। कबीर चैतन्य आदि सन्तों ने जिस मार्ग को अपनाया वह अधिक न चल सका लेकिन रामानुजाचार्य और वल्लभाचार्य आदि का सुगम मार्ग अधिक विस्तृत हो गया। यह हिंदू धर्म का नवीन रूप था।। जनता ने इस मार्ग को अपनाया इससे चित्रकला को अधिक लाभ हुआ। श्रीकृष्ण जी ने मानचित्र और उससे सम्बन्धित घटनाओं को चित्र द्वारा दर्शित किया है। जनता ने इन चित्रों का आदर किया। इसके अतिरिक्त भागवत गीता के चित्रों की माँग अधिक हो गई। समाज की उन्नति के साथ साथ चित्रकला की भी उन्नति हुई। इस नवीन शैली का नाम राजस्थानी शैली है।

जन शैली के प्रसिद्ध चित्र

इस शैली के जो चित्र प्राप्त हुए हैं उनमें स्वाभाविकता का समावेश है। इस शैली के नारियों के चित्र अधिक स्वाभाविक हैं। इन चित्रों में यथार्थता है। इस समय के चित्रों में नारियों के कपड़े तथा गहने सुन्दर ढंग से बनाये गये हैं। इन चित्रों में केवल एक आँख बनाई गई है। जन शैली तथा राजपूत

चित्र शैली के चित्र लगभग एक समान हैं दोनों शैलियों का विषय लगभग एक है फिर भी दोनों में पर्याप्त अन्तर पाया जाता है।

(3) सुलिपि शैली

सुलिपि शैली उत्तर मध्य काल की एक प्रसिद्ध चित्र शैली कही जाती है, जिसकी उन्नति जैन चित्र शैली के साथ साथ होती रही।

इस शैली में चित्रों की रेखाएँ काली स्याही से खींची गई हैं। रेखाओं के अङ्कन में अभाव का प्रयास नहीं किया है जो साधारण लिपि के रूप में अंकित हुए हैं। इस शैली के चित्रों की रेखाएँ भारी हैं तथा प्रवाह उनमें उत्पन्न नहीं हुआ। इनमें गति के चिह्न भी हैं। चित्रों में मुखमुद्राएँ और मुद्राएँ अस्वाभाविक हैं। शारीरिक चित्रण में चित्र कुछ विशेष प्रकार के हैं। नाक तक खिंची आँखें पतली कमर और ऊपर के अंग का चौड़ापन अन्य पूर्ववर्ती रचनाओं से स्पष्ट भिन्न दिखाई पड़ता है। घटनाओं के चित्रण का ढंग सुन्दर है। अङ्कन में संतुलन है तथा पृष्ठ का संयोजन कलापूर्ण है। बहुत कम रंगों का प्रयोग इस शैली के चित्रों में हुआ है।

सुलिपि शैली के चित्रों की विशेषताएं

सुलिपि चित्रों की कुछ अपनी विशेषताएं हैं जो उनको अन्य प्रचलित शैलियों के चित्रों से अलग करने में सहायता देती हैं। चित्रों की रेखाएँ काली स्याही से बनी हैं जिनके कारण इस शैली के चित्र निष्प्राण हैं। अंग भंगिमा तथा मुद्राएँ गतिहीन हैं। पशु और पक्षी के चित्र जो देखते हैं, तो प्रतीत होता है कि इनको कठपुतली के समान बनाया है। प्रकृति चित्रण में अलंकारिकता से काम लिया गया है। इनके बनाने में कम रंगों का प्रयोग हुआ है। इस शैली के चित्रों में हमें निम्नलिखित विशेषताएं देखने को मिलती हैं —

सुलिपि शैली के चित्रों का संयोजन

इस शैली के चित्रों का संयोजन दर्शकों को अपनी ओर खींच लेता है। संयोजन में इस शैली के चित्र अनुपम हैं। इस शैली के चित्रकारों ने दृश्य संयोजन के महत्व का बहुत ध्यान रखा है जिसके द्वारा चित्रों की सुन्दरता अधिक बढ़ गई है। प्रधान वस्तु का अङ्कन अत्यन्त सम्यक और पूर्ण दिखाई

पड़ता है। ऐसा होने पर भी चित्र के यथार्थ पर किसी प्रकार की हानि नहीं पहुंची है। इस शैली का संयोजन अजन्ता के समान नहीं है।

मुलिपि शैली के परिप्रेक्ष्य के सिद्धान्त

इस शैली के चित्रकारों ने एक हद तक परिप्रेक्ष्य के सिद्धान्तों का पूर्ण रूप से पालन नहीं किया है। इसका आभास हम इस शैली के चित्रों की नाकों को देखने से होता है। इस शैली के चित्रकारों ने नाक अधिक लम्बी तथा ऊंची बनाई है जो प्रदर्शन 'नोज' कहलाती है। इसके अतिरिक्त इस शैली के चित्रकारों ने परिप्रेक्ष्य के अन्य सिद्धान्तों का पालन भली भाँति किया है।

मुलिपि शैली की रेखाएं

भारतीय चित्रों की एक मुख्य विशेषता रेखाएं हैं, जिस पर आज भी भारतीय चित्रकला के चित्रकार गर्व करते हैं। मुलिपि शैली के चित्रों की भी यही विशेषता है कि इनकी रेखाएं सुन्दर तथा गतिहीन हैं। इस शैली के चित्रकारों ने हर स्थिति को इनके द्वारा सुन्दर ढंग से बनाया है, जो दर्शकों को अपनी ओर बहुत ही जल्दी खींच लेती हैं।

मुलिपि शैली के रस चित्र

इस शैली के चित्रों में रस चित्र की भावनाएं भी हैं जो दर्शकों को भली लगती हैं। इस शैली के चित्रकारों का प्रधान लक्ष्य भाव अनुभावों का चित्रण तथा तदनुकूल रसों का सृजन है। रस और उसकी चेष्टाओं दोनों में गहरा सम्बन्ध रखा गया है जिसके कारण इस शैली के चित्र रस चित्र के उत्तम नमूने हैं, परन्तु अजन्ता के चित्रों के समान नहीं।

मुलिपि शैली की मुद्राएं

इस शैली की मुद्राएं अजन्ता के समान नहीं हैं फिर भी वे जिन भाव भाओं के आधार पर बनी हैं वे सुन्दर हैं और दर्शकों के हृदय को पसन्द आ जाती हैं। कुछ मुद्राएं ऐसी भी हैं जिनमें भद्दापन उत्पन्न हो गया है, परन्तु वे अपने अर्थ को प्रकट करती हैं।

मुलिपि शैली के रंग का पाट

इस शैली के चित्रों के रंग का पाट साधारण है और अजन्ता के चित्रों के रंगों के समान है। इस शैली के चित्रकारों ने पृष्ठ भूमि में हल्के रंगों का

प्रयोग करके भारी रंग उत्पन्न किया है जिनमें नवीनता की छाप है। रंगों के जोड़ सुन्दर हैं, जो आँखों को सुन्दर दिखाई पड़ते हैं। इस शैली के चित्रकारों ने लाइट एंड शेड के सिद्धान्त का पालन भी अपने चित्रों में किया है।

सुलिपि शैली तथा राजस्थानी शैली की तुलना

सुलिपि शैली	राजस्थानी शैली
(1) इस शैली के चित्र मुख्यतः ग्रन्थों में है तथा इकहरे कागजों पर बने हैं।	(1) इस शैली के चित्र मुख्यतः अलग बने हैं।
(2) इसमें लाल, पीले रंगों का प्रयोग हुआ है।	(2) इसमें चटकीले रंगों का प्रयोग हुआ है।
(3) इस शैली की सब शाखाओं में अन्तर है।	(3 इस शैली के प्रत्येक चित्र पर सुलिपि शैली की छाप है।
(4) सुलिपि शैली में अजन्ता के चित्रों की छाप नहीं है।	(4) इस शैली के चित्रों में सुलिपि शैली की छाप है।
(5) सुलिपि शैली का पतन राजस्थानी शैली के द्वारा हुआ।	(5) राजस्थानी शैली के पतन से मुगल शैली का जन्म हुआ।

प्रश्न

1 पूर्व मध्यकालीन चित्रों की तुलना उत्तर मध्यकाल के चित्रों से करो।
2 जैन चित्रशैली की विशेषताओं का पूर्ण रूप से वर्णन करो।
3 जैन चित्रकला की तुलना बौद्ध चित्रकला से करो।
4 1000 ई० से 1600 ई० तक की चित्रकला के इतिहास का वर्णन करो।
5 इस युग में कौन-कौन सी चित्रकला की शैलियाँ प्रचलित थीं? किसी एक शैली के विषय में पूर्ण रूप से लिखो।
6 सुलिपि शैली की विशेषताओं का वर्णन अपने शब्दों में करो।

अध्याय 10

राजपूत चित्रकला की शैली

राजपूतों के शासन में कला की बड़ी उन्नति हुई। इसका कारण यह था कि राजपूत शासक चित्रकला के प्रेमी थे। तथा चित्रकारों को अच्छी दृष्टि से देखते थे।

राजपूत शैली का जन्म

राजपूत शैली हमारे भारत की सुनिश्चित शैली की एक शाखा है। मुगल शैली स्वयं मिट गई और अपनी कोशिश से राजपूत शैली को जन्म दिया। राजपूत शैली नवीन शैली के रूप में प्रकट नहीं हुई। भक्ति आन्दोलन के कारण इस शैली का जन्म हुआ और इसी के कारण इस शैली की उन्नति हुई। धार्मिक उत्सव, मन्दिरों की चित्रकारी तथा रामकृष्ण की रंगकारी के कारण इस शैली को उन्नति करने का अवसर प्राप्त हुआ।

राजपूत शैली का इतिहास

जिस प्रकार भारतीय इतिहास में राजपूतों का राज्य बिखरा हुआ उसी प्रकार राजपूत चित्र शैली का इतिहास भी है। राजपूत चित्र शैली समय चित्रकला के इतिहास के लगभग 16 वीं शताब्दी के मध्य से लेकर 19 शताब्दी के अन्त तक बताते हैं।

राजपूत शैली की उन्नति राजपूतों के राज्य की उन्नति के साथ-साथ हु राजपूत शैली भारतवर्ष में बहुत समय तक रही। इसकी उन्नति राज्य दर से ही हुई। इसकी उन्नति जनता की छाया में हुई। यह अवश्य हुआ राजपूत राज्य जैसे-जैसे उन्नति करता गया उसके साथ-साथ चित्रकला भी उन्नति हुई परन्तु राजपूत शैली का पतन राजपूतों के राज्य के पतन साथ नहीं हुआ। इस शैली का उन्नति तथा पतन का सम्बन्ध मुगल शैली से

राजपूत चित्रकला की शैली

राजपूत शैली के मुख्य स्थान

इस शैली के मुख्य स्थान काश्मीर पंजाब राजस्थान बुन्देलखण्ड आदि राजपूत रियासतें थीं जहाँ इस शैली के चित्रकारों ने अच्छे तथा सुन्दर चित्र ...ये। यहाँ अब भी इस शैली के सुन्दर चित्र देखे जा सकते हैं। डा० कुमार स्वामी ने इस राजपूत चित्र शैली का नाम दिया है। उनका यह नाम ठीक ही है क्योंकि इस शैली की उन्नति राजपूतों के शासन काल में हुई। श्री ... ने इसका नाम हिन्दू कला बताया है, जो मेरी राय में ठीक नहीं है।

राजपूत शैली के चित्र

भक्ति आन्दोलन की लहर का प्रभाव इस चित्रकला की शैली पर पड़ा। ... शैली ने भी धर्म के सहारे उन्नति की। हम इस चित्र शैली के निम्न ...लिखित विषयों के चित्र देखने को मिलते हैं —

(1) कृष्ण लीलाओं तथा अन्य देवी देवताओं के चित्र

(2) घरेलू तथा सामाजिक जीवन के चित्र

(3) राग रागिनियों के चित्र

(1) कृष्ण लीलाओं तथा अन्य देवी देवताओं के चित्र—भगवान कृष्ण ... लीलाएँ तीन मुख्य भागों में विभाजित की जा सकती हैं। एक तो उन्होंने ... सनाढ्य की है जिनमें उनका मनोविनोद स्वभाव प्रकट होता है दूसरे उनके ... तथा पराक्रम का व्यक्त करने वाली जैसे गोवर्धन धारण आदि जिनसे ... सर्वशक्तिमान लोक मंगलकारी स्वरूप सम्मुख आता है और तीसरे ... चरित्र लीलाएँ जिनमें वे नायक के रूप में प्रकट होते हैं। भगवान ... कृष्ण की बाल-लीलाओं में उनका बाल-स्वभाव प्रकट होता है।

... बौद्ध चित्र शैली के चित्रकारों ने जिस प्रकार बुद्ध के चित्र बनाए हैं ... प्रकार राजपूत चित्र शैली के चित्रकारों ने नवीन पौराणिक धर्म से ... पर कृष्ण जी के अतिरिक्त राम शिव तथा पार्वती के चित्र बनाये हैं।

(2) घरेलू तथा सामाजिक जीवन के चित्र—राजपूत शैली के चित्रकारों ... की महान देन है कि उन्होंने घरेलू जीवन के चित्र बहुत ही सुन्दर विधि ... बनाये हैं जो सही रूप में उस समय के सामाजिक जीवन के दर्पण कहे जा सकते हैं। सामाजिक जीवन का चित्रण जैसा राजपूत चित्र-शैली में हुआ है वैसा अन्य शैली में दिखाई नहीं पड़ता।

(3) राग रागिनियों के चित्र—इस शैली के राग रागिनियों के चित्र सुन्दर है और वे दर्शकों की आँखों को भले लगते हैं। इनकी मुख्य विशे यह है कि रागमाला तथा ऋतु सम्बन्धी चित्रों में राग और ऋतु से सम्बं समय और ऋतु और मानव व्यापारों का चित्रण हुआ है। राजपूत शैली चित्रों में हम ऐसे भी चित्र देखते हैं जिनमें ऋतुओं और रागों से सम्बं प्रेम-लीलाओं की भी छाप है। इन चित्रों का विधान सुन्दर है।

(4) व्यक्ति चित्र—राजपूत चित्र शैली के व्यक्ति चित्र अपनी पर मुगल शैली के व्यक्ति चित्रों के समान नहीं हैं। इस शैली के चित्रकार अधिकतर राजा-महाराजा तथा अमीर-सरदारों के व्यक्ति चित्र बनाये, प इनमें सजीवता की कमी है तथा उनकी रेखाएँ कठोर हैं।

राजपूत शैली की विशेषताएं

राजपूत शैली के चित्रों में हम निम्नलिखित विशेषताओं का होता है —

(1) इसके चित्र कथाओं के आधार पर बने हैं।

(2) इसमें व्यक्ति चित्रों का भाग अधिक है तथा जन-साधारण के जीवन की मनोरम घटनाओं का चित्रण जैसा राजपूत चित्र शैली में है वैसा चित्रण किसी अन्य चित्रकला की शैली में नहीं हुआ है।

(3) इस शैली के चित्रों का अधिकांश विषय धार्मिक है।

(4) इस शैली के चित्रों में भावों की अपेक्षा बाह्य यथार्थ की प्रधान जो अधिक भावात्मक और काव्यमय दिखाई पड़ती है।

(5) इसमें भावों तथा क्रिया की प्रधानता भी है। मुद्राओं का अंकन हुआ है तथा उनमें जीवन गति तथा प्रवाह भी है।

(6) इस शैली में पशुओं का चित्रण भावपूर्ण है।

(7) राजपूत चित्र शैली की रेखायें प्रभावपूर्ण हैं।

(8) इस शैली का रंग विधान चटकीला है तथा उसमें मोटेपन भी है।

(9) राजपूत शैली के चित्रों में मनुष्य पशु तथा प्रकृति चि घनाना है।

राजपूत शैली की शाखाएँ

राजपूतों की रियासतें भारत के भिन्न भिन्न भागों में थीं, जहाँ के शासकों के हृदय में चित्रकला का शौक था। इसी कारण राजपूत चित्र शैली की भिन्न भिन्न शाखाएं हुईं, जिनके नाम निम्नलिखित हैं —

(1) राजस्थानी शैली—यह राजपूत शैली की एक शाखा थी, जिसका जन्म राजस्थान में हुआ और जयपुर इसका मुख्य केन्द्र था।

(2) नागोर शैली—इस शैली का मुख्य केन्द्र नागोर था। इसी कारण ...ों की पली-पनी राजपूत चित्र-शैली की शाखा राजस्थानी शैली ने नागोर ...ली का जन्म दिया।

(3) मालवा शैली—इसका मुख्य केन्द्र मालवा था। इसी कारण इसका यह नाम पड़ा। मालवा के राजपूत राजा चित्रकला के प्रेमी थे। इनकी छाया ...में राजपूत चित्रकला की जिस शाखा ने उन्नति की वह चित्रकला के इतिहास में मालवा शैली के नाम से प्रसिद्ध हुई।

(4) मेवाड़ शैली—राजपूत चित्र शैली की जो शाखा मेवाड़ के राजाओं की छाया में पली-बढ़ी वह मेवाड़ शैली के नाम से प्रसिद्ध है। इस शैली का मुख्य केन्द्र मेवाड़ था।

(1) राजस्थानी शैली (जयपुर चित्र शैली)

राजस्थानी शैली के राग रागिनियों अथवा धार्मिक कहानियों के जो चित्र ...मने को मिले हैं उनकी शैली सबसे पृथक है। इनमें प्राकृतिक रंग भरा है। ...में चित्रों में नारियों के चित्रों में किसी अन्य शैली की सहायता नहीं ली गई। ये चित्र प्राकृतिक प्रतीत होते हैं। इन चित्रों में नारियों के वस्त्रों तथा आभूषणों का जिनको उपयोग में लाया जाता था, वैसा ही चित्रण किया गया है।

चित्रकला के विद्वानों का मत है कि मुगल शैली ने राजस्थानी शैली से ...हुत कुछ सीखा और ईरानी शैली को भी इस शैली से बड़ी सहायता मिली।

राजस्थानी शैली की टेक्निक

राजस्थानी शैली की टेक्निक मुगल तथा ईरानी शैलियों की भांति है और ...में भारतीय सुन्दरता पाई जाती है जिसके कारण ये चित्र इन शैलियों के ...त्रों से अधिक सुन्दर दिखाई देते हैं।

राजस्थानी शैली का सम्बन्ध मध्यकालीन मूर्तिशिल्प शैली से है। अ... कला के पतन के बाद भारतीय चित्रकला का गौरव मिट-सा गया। जन... शैली में भी पतन के चिह्न दिखाई देने लगे थे परन्तु राजस्थानी शैली अप... स्थान पर रही। 15 वीं शताब्दी में हिन्दू धर्म ने उन्नति की। भक्ति का... बढ़ा और फिर इस शैली ने धर्म का अवलम्बन कर उन्नति पथ पर... आरम्भ किया। कुछ विद्वानों का मत है कि यह अजन्ता शैली की एक... है। राजस्थानी शैली के चित्र उसी प्रकार के हैं जैसे कि अजन्ता के हैं... चित्रों में अजन्ता के चित्रों के से रंग भर गये हैं। राजस्थानी शैली मुगल... से प्राचीन है। इसके चित्र भी अच्छे हैं।

सम्राट अकबर के एक उच्च पदाधिकारी दरबारी अबुलफजल का म... कि हिन्दू चित्रकारों के चित्र मुसलमान चित्रकारों की अपेक्षा अधिक... और अच्छे हैं। इस शैली का नाम राजपूत शैली है। इसका के... काल तक जयपुर रहा इसी कारण कुछ मनुष्य इसको जयपुर शैली भी... हैं। इस शैली का क्षेत्र बहुत विस्तृत है इस शैली की एक शाखा पहा... है। ईरानी और राजस्थानी शैलियों की टेकनिक समान है केवल रंग भेद...

राजस्थानी शैली जनता की प्रिय बन गई और ईरानी शैली राज्य... में ही पनपती रही इसका प्रजा ने आदर नहीं किया। राजस्थानी शै... जनता के अपनाने का एक कारण इसका धार्मिक चित्रों को जनता के... प्रस्तुत करना भी था।

ईरानी शैली का मुख्य विषय कोई नहीं है। अधिकतर चित्र सामान्य... इस शैली को राज दरबारों से ही प्रोत्साहन मिला इस कारण अधिक... नहीं कर सका। राजस्थानी शैली के चित्रों का मुख्य विषय धा... और इसी कारण जनता ने अपनाया और इसको उन्नति के पथ पर... इस में कोई बाधा नहीं पड़ी। चित्रकारों ने मनुष्यों के धार्मिक तथा सा... जीवन का अच्छा प्रकाश डाला है।

भारतीयों के घरेलू जीवन के चित्र जितने सुन्दर और चित्ताकर्ष... शैली में हैं उतने किसी अन्य शैली में नहीं मिलते हैं। गाँव के बाजार... घरेलू काम तथा नित्य व्यवहार चित्रकारों के काम में शैली के मुख्य... हैं। एक चित्र में बाजार जुलूस बाजार अपने काम में व्यस्त है, इस...

रर ग्मान का है जो गाया का जुरा रहा है । उसका अन्य सामान इधर उधर डा है एक अय चित्र म एक शिल्पकार अपन पुत्र को शिल्पकारी का शिक्षा



चित्र 9—राजस्थानी शैली का चित्र

रहा है उसका लघु भ्राता उसक समीप खड़ा है दो नारियाँ भी वहीं खड़ी नम म एक नारी गोद म बच्चा लिए हुए है बच्चा उसक गल क हार से रहा है ।

राजस्थानी शैली के चित्र

यात्रा चित्र—यात्रा के चित्र तथा ठहरने के स्थलों के चित्र बनाने में इस शैली के चित्रकारों ने बड़ी चतुरता दिखाई है। इससे यह विषय इस शैली का मुख्य विषय कहा जाता है।

एक चित्र जिसमें कुछ यात्री थककर एक बरगद के पेड़ के नीचे विश्राम कर रहे हैं बड़ा ही सुन्दर है। यात्रियों के विश्राम करने के ढंग को भली प्रकार अंकित किया गया है।

दूसरे एक चित्र में एक नारी अतिथि को जल पिला रही है। एक भार वाहक (कुली) अपने भार को उतार कर विश्राम कर रहा है। दूसरा पथिक हुक्का पी रहा है। निकट में एक सेवक अपने स्वामी के लिए चिलम भर रहा है। एक बालक दर्पण की सहायता से अपने केशों को ठीक कर रहा है। एक नारी पंखा झल रही है और दूसरी पैर दबा रही है। गावों की पगडंडियों के दृश्य अति सुन्दर ढंग से चित्रों द्वारा दिखाये गये हैं।

धार्मिक चित्र—राजस्थानी शैली पर अजन्ता के भित्ति चित्रों का बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा है। यदि इनको ध्यानपूर्वक देखा जाय तो यह स्पष्ट हो जाता है कि यह अजन्ता शैली के पुनर्जीवन का समय था। दोनों शैलियाँ एक समान प्रतीत होती हैं। अजन्ता के चित्रकारों को अपना कला कौशल दिखाने के लिए अजन्ता की गुफाएं स्थान के रूप में और महात्मा बुद्ध का जीवन चरित्र विषय रूप में मिल गया था।

राजस्थानी शैली को विषय रूप में अन्य देवी-देवताओं का अवलम्बन मिल गया। पूजा-पाठ करने की विधियों में भी अन्तर आ गया था। राजस्थानी शैली के चित्रों के भाव अजन्ता जैसे ही हैं।

राजस्थानी शैली की आयु का एक बड़ा भाग रामायण और महाभारत की कथाओं का चित्रण करने में लगा है।

देवताओं के चित्र बड़े मनोहर हैं। महात्मा बुद्ध के बाद श्री रामचन्द्र जी और श्रीकृष्ण जी को पुनः जनता ने अपना देवता माना। इस शैली के अधिकतर चित्र श्रीकृष्ण की लीलाओं के चित्र हैं।

पशु आदि के चित्र—पशुओं के चित्र भी इस शैली के मुख्य विषय बन गये थे। श्रीकृष्ण जी के चित्रों में साथ-साथ उनकी गायें भी हैं जिनको बड़ी

सुंदरता से बनाया गया है। जंगली पशुओं के आखेट (शिकार) के चित्र बड़े सुन्दर हैं। हाथियों, हिरनों और भेड़ियों की लड़ाई के चित्र भी बड़े अच्छे हैं। कुछ चन्द्रों के चित्रों को देव रूप में बनाया गया है।

व्यक्तियों के चित्र—राजस्थानी शैली के चित्रकार मानव चित्रों के अधिक अभ्यस्त न थे। समय ने इनको मानव चित्रों का बनाने का कहा और चित्रकारों ने भी इन चित्रों को बड़ी कुशलता से बनाया। चित्रकला के विद्वान् इनको दो भागों में विभाजित करते हैं—(1) कांगड़ा के व्यक्ति चित्र और (2) जयपुर के व्यक्ति चित्र।

यदि हम दूसरी व्यक्ति चित्रों की शैलियों से इन चित्रों की तुलना करें तो यह प्रतीत होता है कि केवल कुछ ही चित्रों को छोड़ कर सब चित्र बे-तुके तथा भद्दे हैं।

राजस्थानी शैली का समय सन् 1550 ई० से 19 वीं शताब्दी तक कहा जाता है परन्तु सन् 1750 ई० से इसका पतन आरम्भ होने लगा था।

राजस्थानी शैली और बौद्ध शैली की तुलना

राजस्थानी शैली और बौद्ध शैली की यदि हम तुलना करें तो हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि राजस्थानी शैली पर बौद्ध शैली का बड़ा प्रभाव पड़ा है परन्तु राजस्थानी शैली के चित्रकार उन भावनाओं को भली प्रकार नहीं दिखा पाये जैसा कि बौद्ध शैली के चित्रकारों ने दिखाया है। दोनों शैलियों का विषय धार्मिक था। बौद्ध शैली में महात्मा बुद्ध का बड़ा स्थान है परन्तु राजस्थानी शैली में महात्मा बुद्ध का स्थान श्री राम और श्री कृष्ण ने लिया है। दोनों चित्रशैली के चित्रकारों ने देवों के साथ जानवरों के चित्रों को बड़े सुन्दर ढंग से बनाया है परन्तु जो सुन्दरता बौद्ध शैली के जानवरों के चित्रों में पाई जाती है वह सुन्दरता इन चित्रों में उपलब्ध नहीं है। दोनों शैलियों की उन्नति का कारण धर्म था। बौद्ध शैली की उन्नति बौद्धधर्म के साथ-साथ हुई क्योंकि जहाँ कहीं बौद्ध धर्म के प्रचारक गये वहीं वे अपने साथ महात्मा बुद्ध के जीवन सम्बन्धी चित्र भी ले गये थे। आज जो बौद्ध धर्म भारत के अतिरिक्त दूसरे देशों में फैला हुआ मिलता है वह चित्रकला के अवलम्बन से ही फैला। राजस्थानी शैली ने भी भक्ति मार्ग का सहारा पाकर उन्नति की। महात्मा कबीर आदि महापुरुषों ने धर्म का प्रचार किया। चित्रकारों ने राम

के जीवन को चित्रो द्वारा प्रदर्शित किया। देश म कृष्ण नीलाशा के चित्र अधिक सख्या म बनाये जाने लगे। राजस्थानी चित्रकार अपने चित्रो म व विशेषताए न ला सके जो हमको बौद्ध शैली के चित्रो म दृष्टिगोचर होती हैं। दोनो शलियो के रग चमत्कार हैं परन्तु बौद्ध शैली के रगो का सयोजन बहुत सुन्दर रूप स हुआ है। इस कारण बौद्ध चित्र रग योजना के विचार स भी अच्छे मान जाते हैं।

(2) नागौर शैली

चौहानो ने नागौर को जन्म दिया था। 13 वी 14 वी सदियो म यह पुन मसलमानो के अधीन रहा। इसके पश्चात् जसलमेर के करण प्रथम ने इसे विजय किया। फिर 15 वी सदी म गुजरात के सुल्तान मुजफ्फर प्रथम के छोटे भाई शम्स खाँ दन्दानी ने इस पर अधिकार करके इसे मुस्लिम सल्तनत बनाई। इसके बाद नागौर मारवाड के राव चूडा और राव मालदेव की अधीनता म चला गया और अन्त में सन् 1568 ई० म अकबर द्वारा विजय किया गया। अकबर ने सन् 1576 ई० म इसे बीकानेर के रायसिंह जी को जागीर के रूप म दे दिया। सन् 1634 ई० म जब जोधपुर के गजसिंह ने अपने पुत्र युवराज अमरसिंह को अधिकार च्युत किया तो शाहजहाँ ने नागौर को बीकानेर से अलग करके निर्वासित राजकुमार के लिए एक नए राज्य की सृष्टि की। औरगजेब के समय म अजीतसिंह ने इसे जोधपुर म मिला लिया, परन्तु नागौर जल्दी उस के राज्य से अलग हो गया।

भवनो तथा महलो की नागौर चित्रकारी

भीबारो तथा पान्नो म जो नागौर शैली के चित्र बने हुए हैं व दो प्रकार के हैं। पान्नो म बादलो के कुञ्ज म नृत्यरत हुई रमणियो के चित्र अङ्कित हैं। य चित्र उस निर्धारित शैली के हैं जो बीकानेर म अनूप महल की भित्तियो पर दृष्टिगोचर होता है। अन्त की एक छत म रासलीला का दृश्य अङ्कित है।

नागौर के अन्तःपुर की अधिकांश दीवारो पर पौराणिक व तथा दरबार युग के बारे अगणित भित्तियाँ अङ्कित हैं। इनम विभिन्न मुद्राओ एव भवनो म नारियो के चित्र देखने को मिलते हैं। इनकी शैली और मुगल शैली म कोई खास अन्तर दिखाई नहीं पडता पर तैयारी म रियाज सा कमी है तथा स्याह कलम अधिक स्पष्ट से किए गये हैं। इनम सायो ढला हलका लगा है और रग पक्के हैं। आकृतियो म लम्बाई चौड़ाई का तो मान है पर मोटाई का नहीं।

नागोर शैली के भित्ति चित्र

नागोर भित्ति चित्रों की अनेक विशेषताएँ है। इनमें मानव आकृति को अधिक लम्बा दिखाने की प्रवृत्ति है यद्यपि इस प्रवृत्ति ने अस्वाभाविक रूढ़ि का रूप कभी ग्रहण नहीं किया। इनके अङ्कन में परम्परागत नियमों के पालन के साथ साथ सजीवता एवं मधुरता की झलक पाई जाती है। चित्रों में वस्त्र विन्यास परम्परागत होता था, फिर भी उनमें कभी कभी नवीन नवीनता पाई जाती है। नागोर चित्रों की इन विशेषताओं के कई कारण हैं जैसे मारवाड़ के एक छोर पर उसकी स्थिति उसके वातावरण की भिन्नता दरबार की सजीवता आदि के कारण इस शैली का जन्म हुआ।

महाराजा बखतसिंह ने बावानगर के चन्द्र मन्दिर के दरवाजों पर मुरलीधर कृष्ण तथा राधा के चित्र अङ्कित कराये। राधा के हाथ में कोई भेंट की वस्तु है। यह नागोर चित्रकारों की सुन्दर आकृतियां हैं।

नागोर शैली का यह प्रसार नागोर की शक्ति के दिन भिन्न होने का परिणाम था। नागोर की कला लुप्त नहीं हुई। इस शैली का जन्म लगभग सन् 1724 ई० और सन् 1750 ई० के बीच हुआ तथा बखतसिंह की छाया में पली। नागोर शैली का स्थान उत्तरकालीन मुगल कला तथा राजस्थानी कला के द्वितीय उत्थान के बीच का है। मुगल प्रभाव से सर्वप्रथम इसी ने अपना दामन बचाया।

(3) मालवा शैली

राजपूत चित्र शैली विश्वरूपा है। उस की इतनी शाखाएं हैं कि वे अलग न की जा सकती है। प्रत्येक राज्य की अपनी अपनी अलग और आने वाले ठिकानों की अपनी चित्र शाला भी थी, जिनमें राजपूत एक सूत्र में होते हुए भी अपना निजी अस्तित्व रखते थे। इनकी शाखाओं की पहचान पगड़ी के द्वारा हो सकती है क्योंकि प्रत्येक राज्य तथा मुख्य मुख्य ठिकानों की अपनी अपनी पगड़ियां होती थी। जिस प्रदेश में जो चित्र बनता था उसी प्रदेश की पगड़ी बनाई जाती थी। इसके अतिरिक्त रंग विधान, आलेखन, आदि भी प्रत्येक शाखा के भिन्न भिन्न प्रकार के थे।

मालवा शैली का जन्म मालवा में हुआ। राजपूत चित्र शैली में इसका

प्राकृतिक भाव का बड़ा सहज तथा स्वाभाविक चित्र ता है ही साथ ही वहाँ की ऱ्या का झुकाव भी है। यमुना का उच्छलित रूप दिखलाकर ऱस शैली के चित्रकार ने प्रकृति की आकुलता भरदी है, जो दर्शकों को अपनी ओर खींच ऱती है।

भागवत के सभी चित्रों में एक कोने में कथा कहते और सुनते हुए शुकदेव तथा परीक्षित दिखलाये हैं, जिससे चित्र देखने वाले की स्मृति में यह बात बस जाती है कि ये चित्र उस कथा के दृश्य उपस्थित करते हैं जो परीक्षित ने शुकदेव से सुनी थी।

नायिका के चित्र—इस शैली के चित्रकारों ने नायिका के चित्र भी बनाये हैं जो देखने योग्य हैं। इसमें इस शैली के चित्रकारों ने सन्तुलन पैदा किया है जो आँखों को भला लगता है।

इस शैली के जो चित्र प्राप्त हुए हैं उनका विषय साहित्य है। ये सभी चित्र स्याह कलम के हैं।

नारियों के चित्र—इस शैली के नारियों के चित्र सौंदर्य दृष्टि तथा परम्परा के अनुसार अंकित किये गए हैं। इन अंकन में आलंकारिकता की अधिकता होती है परन्तु स्वाभाविकता का अभाव भी रहता है अर्थात उसमें जो रूप राशि पाते हैं उसको कुछ रेखाएं भले ही चित्रित करती हों किन्तु आँख भौंह, अत्यन्त क्षीण कटि आदि दृष्टि और परम्परा के अनुसार कृत्रिम बनाई जाती हैं। हाथ पाँव का अंकन अच्छा होकर वस्त्रों तथा आभूषणों में भी स्वाभाविकता के बदले आलंकारिकता रहती है। इस प्रकार वह रूपों का नख रंजन करती है।

प्रश्न

1 राजपूत चित्रकारी के विषय में तुम जो कुछ जानते हो पूर्ण रूप से लिखो।
2 राजस्थानी शैली का पूर्ण रूप से वर्णन करो।
3 नागौर शैली का पूर्ण रूप से वर्णन करो।
4 मालवा शैली का कहाँ जन्म हुआ? इस शैली के चित्रों की विशेषताओं का पूर्ण रूप से वर्णन करो।
5 मेवाड़ शैली का पूर्ण रूप से वर्णन अपने शब्दों में करो।

अध्याय 11

हिमाचल चित्रकला की शैली

कांगड़ा चित्रकला को पहाड़ी चित्रकला भी कहते हैं। कुछ विद्वान इसे हिमाचल चित्रकला का नाम भी देते हैं। श्री एन० मेहता के मतानुसार भी इसका नाम हिमाचल चित्रशैली है। सन् 1916 ई० में श्री आनन्द कुमार स्वामी ने विशेष रूप से इस हिमाचल चित्र शैली के सौन्दर्य और रूप का बखान किया था और अपनी पुस्तक राजस्थानी पेंटिंग में राजस्थानी चित्रकला के अन्तर्गत ही हिमालय चित्रशैली को स्थान दिया था। कुमार स्वामी भारतीय चित्रकला के प्रेमी थे। उन्होंने देखा कि भारतीय कला में इसका यह भाग अभी तक सोया हुआ प्रतीत होता है। इसकी विशेषताओं की जानकारी भारतीय कलाकारों के लिए अति आवश्यक है। इसकी विशेषताओं को उन्होंने जनता को बताकर कलाकारों का ध्यान इस ओर आकर्षित करने का प्रयत्न किया।

यह चित्रकला संसार की उन कलाओं में स्थान पाने योग्य है जो मनुष्य के लिए अति लाभदायक हैं और भावों को रंग और रेखा के द्वारा अमर बनाने का प्रयत्न करती है। आजकल सब कलाकार इस चित्रकला के शिक्षा को मानते हैं। पाश्चात्य कलाकार श्री लारेंस इस शैली के अच्छे जानकार माने जाते हैं। कांगड़ा चित्रशैली से जब उनका परिचय हुआ तो उनका मन इस कला को देख कर बड़ा ही प्रसन्न हुआ। उन्होंने लिखा है कि (जो अपूर्व सुख मैंने कांगड़ा स्कूल के चित्रों को प्रथम देख कर अनुभव किया मैं कभी नहीं भूल सकता हूँ। एक रेखा चित्र ने, जिसमें रंग भरा हुआ नहीं था पूरी तरह मेरे हृदय को अपनी ओर आकर्षित कर लिया था।) इस शैली के जो चित्र हैं उनको देख कर यह कहना पड़ता है कि कांगड़ा की कला में इन चित्रों का ध्येय है। कांगड़ा के चित्रों में निष्कपट मन के भाव मिलते हैं।

इनका सहज छटा कुछ ऐसी है जसे पुराने 'राम गीत', जिनका मिठास हृदय म घर कर लेता है। ससार की कला म यह बेजोड बात है।

जम्बू स टिहरी और पठानकोट स कुल्लु तक फला हुआ लगभग 250 X 160 किलोमीटर का पहाडी प्रदेश इनका मुख्य स्थान है। कांगडा का इतिहास प्राचीन है। धनबा और बसौनी म बडे सुदर चित्र बने। रावी और व्यास नदियों के बीच की घाटी का नाम कांगडा प्रदेश है। 11 वी शताब्दी में टिहरी-गढवाल म कांगडा शली अन्तिम बार चमक कर लुप्त हो गई थी। चित्रों द्वारा इस नगर के मनुष्यों का जीवन बडा सुन्दरता स दिखाया गया है।

17 वी और 18 वी शताब्दी म पुन चित्रकार यहाँ आकर बस गये। मुगल सम्राटों न इस ओर ध्यान नहीं दिया क्योंकि मुगल मनुष्यों के चित्रों को धम के विपरीत समझते थे। औरगजेब ने इसी कारण इस ओर ध्यान नहीं दिया और कलाकार अपनी कला की मान हानि समझ कर बसौली के राजा के यहाँ चले गये। इस प्रकार कुछ समय के लिये दिल्ली और आगरा कलाशून्य हो गया था। इन कलाकारों की तूलिका स लगभग 50 चित्र ऐसे बनाये गये जो आज तक उपलब्ध हैं। कांगडा चित्रशली का ध्रुव बिन्दु सुन्दर नारी है। उसी के चारों ओर जाल सा बुना हुआ है। नारी का जो अनुराग और बारहमासी जीवन है उसी के ताने बाने म पहाडी चित्रशली के चित्र बनाये गये हैं। प्रेम और शृङ्गार सयोग और वियोग इस चित्रशाला को सजाते हैं। कांगडा चित्रकला के नमूने हृदय पर अङ्कित स हो जाते हैं। पुरुष का अस्तित्व नारी के जीवन को विकसित करन के लिए है।

चित्रकार पुरुष के रूप सम्पादन म उतना उत्सुक नहीं जान पडता और न पुरुष या किसी भव्य आकृति का सत्कार कांगडा चित्र अपने पीछे छोडता है। नारी सौन्दर्य का इतनी सजग अनुभूति अन्य किसी शली म नहीं मिलती जितनी कि इसम।

हिन्दी तथा उर्दू की कविताओं ने नारी को जो रूप दिया है उसका दर्शन हम हिमालय चित्रकला की शली म करते हैं। नायक-नायिकाओं के प्रेम मय जीवन की एक एक झाँकी इन चित्रों म दिखाई देती है। इन चित्रकारों की दृष्टि म प्रेम का स्थान सबसे उच्च है और इसी को इन्होंने चित्र द्वारा जनता को दिखाया है। श्रीकृष्ण की लीला इस शली के सुन्दर चित्र हैं जो इस शली के रत्न कहलाते हैं।

कृष्ण लीला और नायक-नायिका सम्बन्धी चित्रों के अतिरिक्त रामायण, महाभारत और नल-दमयन्ती की कथाओं के बहुत अच्छे अच्छे चित्र मिलते हैं। रामायण के चित्र कुछ बड़े हैं जिनको बड़े सुन्दर ढंग से बनाया गया है। अभी दिल्ली के सरकारी भवन में जो प्रदर्शनी हुई थी, उसमें इस शैली का एक चित्र था। उस चित्र में वाल्मीकि के आश्रम में नारद जी वीणा लिये हुए आये हैं और वाल्मीकि उनसे कुछ प्रश्न कर रहे हैं। कुछ रंगीन चित्र भी हस्तगत हुए हैं। इन चित्रों को कुमार स्वामी ने सर्वप्रथम प्रकाशित किया है। कुछ चित्र राष्ट्रीय संग्रहालय के सौजन्य से प्राप्त हुए हैं, जिनमें आधार में लाल रंग भरा है। इन कलाकारों ने कम वजन के रंग के स्थान पर अधिक वजन के रंगों का प्रयोग किया है। यह नियम अजन्ता के चित्रों की रंग योजना से विपरीत है। ये चित्र बड़े सुन्दर हैं। इस शैली के चित्रों में ग्रीक-गाथाओं के चित्र भी पाये जाते हैं। राजामोहन कश्मीर के यहाँ ऊषा अनिरुद्ध चरित्र का एक चित्र है जो प्रदर्शनी में देखने को मिला था।

कांगड़ा प्रदेश में एक स्थान बसोली है जो रावी नदी के दाहिनी ओर स्थित था। अब यह एक गाँव के रूप में रह गया है। 17 वीं और 18 वीं शताब्दी में यह इस शैली का मुख्य स्थान था और यहाँ इस शैली के बहुत ही सुन्दर चित्र बनाये जाते थे। इस स्थान के चित्रकार अपने चित्रों में लाल, पीला, नीला रंग प्रयोग करते थे। इस शैली के चित्र राजस्थानी शैली से बहुत मिलते-जुलते हैं। श्री एन० मेहता का कहना है कि बसोली के चित्रकार जो कुछ कहना चाहते थे वे उसको सादी रेखाओं और रंगों के द्वारा कह देते थे उनके पास बनावटी कोई चीज नहीं थी। पहाड़ी चित्रों में सबसे अधिक बसोली चित्र प्राचीन हैं। इसकी प्राचीनता में इनकी विशेषता है। इन चित्रों की रंग विन्यास के अतिरिक्त मनुष्य के नयन में उत्फुल्ल कमल के समान बड़ी-बड़ी आँखें, भरे हुए गाल, पीछे हटा हुआ ललाट इस चित्र शैली के विशेष लक्षण हैं। इन रेखाओं में स्थापत्य ज्ञान होते हुए भी ओज की मात्रा है। इस शैली के चित्रों में रेखा तथा रंग का अद्भुत सामंजस्य होता है। चित्रों में एक विचित्र बात यह है कि स्त्रियों और पुरुषों के आभूषणों में गुबरैले चमकीले हरे रंग के टुकड़ों का प्रयोग हुआ है।

17 वीं और 18 वीं शताब्दियों में धार्मिक चित्र बनाए गये। इन चित्रों के चमत्कार रंग इस बात के द्योतक हैं कि इन चित्रों का सम्बन्ध राजपूताना

के चित्रों से है। एक प्रकार से यह प्राचीन भित्ति चित्रों के सूक्ष्म रूप हैं। दिल्ली की कला प्रदर्शनी में प्रथम बार इस शैली के इतने चित्र एकत्रित किये गये थे।



चित्र 10—हिमाचल शैली का चित्र

इनमें एक चित्र जिसमें राजकुमारी हंसों को प्यार कर रही है बहुत ही सुन्दर था।

कांगड़ा के राजा श्री संसार चन्द्र पहाड़ी शैली के बड़े संरक्षक थे। उनके समय में महाभारत और कृष्णलीला के चित्र बने जिनके द्वारा पहाड़ी शैली पूर्णमासी के चन्द्रमा की तरह चमक उठी। चित्रकारों ने वन-वाटिका विहार, भोजन भजन वसन्त, ताम्बूल और नौका विहार आदि का बड़ी अच्छी प्रकार चित्रण किया है।

इस शैली का मुख्य केन्द्र गढ़वाल था जहाँ 18 वीं शताब्दी के आदि तक आकर्षक चित्रों का निर्माण होता रहा। इन चित्रों के कुछ प्रसिद्ध चित्रकार मानकू चतू और भनाराम थे जो बहुत ही सुन्दर चित्र बनाते थे।

राजस्थानी शैली तथा हिमाचल शैली की तुलना

राजस्थानी शैली और हिमाचल शैली में कुछ अन्तर है। राजस्थानी शैली के चित्र भावात्मक कम हैं किन्तु हिमाचल शैली के चित्र भावात्मक हैं। इनकी रेखायें सजीव हैं। हिमाचल शैली का विषय-क्षेत्र बहुत बड़ा है जिसमें बहुत से विषय हैं। रामायण और महाभारत की कथाओं के अतिरिक्त इन चित्रकारों ने सांसारिक बातों को भी चित्रों द्वारा दर्शाया है।

हिमाचल शैली की सहायक शैलियाँ

बसोहली शैली

बसोहली शैली पहाड़ी शैली की एक शाखा है। विद्वानों ने बसोहली का नाम उस चित्रण शैली को दिया है जो पंजाब के पहाड़ी प्रान्तों में प्रचलित थी और जिसकी प्राचीनता जहाँगीर काल तक पहुँचाई जा सकती है। इस नाम की उपयुक्तता का प्रश्न उठाना यहाँ उचित नहीं है।

मेवाड़ शैली तथा बसोहली शैली का सम्बन्ध

मेवाड़ शैली का इस शैली से बहुत साम्य है यथा लिखित रेखा बहुत ऊपर की ओर पृष्ठ में बहुत गहरे रंग विरल चटकीले पत्ते इत्यादि और 18 वीं शती में जिस प्रकार बसोहली के चित्रकारों ने रत्न दर्शन के लिए सोनेलिया के पंख चिपका कर दिखाया है। उसी युक्ति का अनुकरण मेवाड़ के चित्रकारों ने भी किया है, जो दोनों की शैली का अनुरूप रखते हैं। महाराणा संग्राम सिंह द्वितीय का 18 वीं शती का बना हुआ चित्र हमारे इस कथन का सत्य बताता है।

चि० 7

बसौली शैली के चित्र

इस शैली के जो चित्र अभी तक प्राप्त हुए हैं उनका विषय साहित्यशास्त्र है। सभी चित्र स्याही से बने हैं। यदि इनको स्याह कलम के चित्र कहें तो अनुचित न होगा। इस शैली के चित्रकारों ने कविताओं के चित्र भी बनाये हैं जो देखने योग्य हैं। केशवदास की कविप्रिया के छन्दों को चित्रित करने वाली मलिका का एक नमूना भी मिला है। इस मलिका के चित्र बसौली शैली के पूर्ण यौवन-काल वाले अर्थात् 18 वीं सदी की तीसरी पचीसी वाले हैं एवं इनका आंकलन उस विशेष कुल का है जो अपने दो प्रमुख चित्रकारों चदू और मानकू के नाम से प्रसिद्ध हैं।

इस शैली के चित्रकारों ने रामचरित की कथाओं को भी अंकित किया है जो दर्शकों को अच्छे लगते हैं। इसमें वह चित्र जिसमें रामाश्वमेध यज्ञ का घोड़ा लव कुश ने पकड़ लिया है और अयोध्या वाले वानर सेना लेकर उन पर आक्रमण कर रहे हैं बालक लव कुश की आँखों और भुजाओं से उनका बल और शौर्य तो टपकता ही है साथ ही रेखाओं की सजीवता के कारण उनकी अंगगत कोमलता भी संतुलन और संयोजन दोनों की दृष्टि से चित्र बहुत उच्चकोटि का है।

इस शैली में ऊखल बंधन के चित्र भी सुन्दर विधि से चित्रित किये गए हैं। ऊखल बंधन की कथा बहुत ही प्रसिद्ध है और इस शैली के चित्रकारों ने बहुत ही अच्छे ढंग से इसका चित्रण किया है। दही का पात्र श्रीकृष्ण द्वारा जान बूझकर फोड़ दिए जाने पर यशोदा ने खीझ कर उन्हें बाँध देना चाहा। पड़ोस की अन्य नारियों द्वारा श्रीकृष्ण जी की जान बूझ कर लँगुरई करने की शिकायत सुनते-सुनते भी उनके कान पक गए थे। बस रस्सी लेकर उन्हें पास ही पड़ी ऊखल से बाँधने का उपक्रम करने लगी किन्तु रस्सी दो अंगुल छोटी पड़ गई। अब एक दूसरी रस्सी उसमें जोड़ कर बाँधना चाहा पर वह भी छोटी रही। इस प्रकार अनेक रस्सियाँ जोड़ी गईं किन्तु सब छोटी पड़ीं। अन्त में जब कृष्ण ने देखा कि यशोदा जी बहुत हैरान तथा दुखित हो चुकी हैं, तो स्वयं ऊखल में बंध गए। यशोदा एक लकुटी से भी उन्हें ताड़ना देने लगी। तब ब्रज की अनेक नारियाँ वहाँ पहुँचीं और यशोदा जी को समझाने लगीं कि अब अधिक ताड़ना की जरूरत नहीं कृष्ण जी को छोड़ दो किन्तु यशोदा

जी न उनकी एक बात तक नही सुनी और वे सब अपने काय करने लगी। व थी कृष्ण खिसकते खिसकते यमलार्जुन नामक दो वृक्षो के बीच म घुस गए हाँ ऊखल के टेढ़े होकर फसजाने स दोनो वृक्ष एकाएक भहरा कर गिर पड़े ौर नलकूबर तथा मणिग्रीव नामक कुबेर के दो पुत्र, जो नारद के शाप स वृक्ष न गए थे अपनी असली शक्ल म प्रकट होकर भगवान श्री कृष्ण की स्तुति करने लग। वृक्षो के गिरने का शब्द सुनकर नन्द यशोदा तथा अन्य ब्रजवासी दौड़ कर आए और कृष्ण की अलौकिक लीला देख कर उनकी बुद्धि चक-रान लगी।

इस शैली के चित्रो म मुखाकृति मुख्यत तीन प्रकार की होती है। इस शैली क चित्रो म हम निम्न प्रकार की विशेषताओ को देखते हैं—

(1) ललाट से नाक तक की रेखा सीधी।
(2) भीतर को घुसी हुई ठाढ़ी।
(3) ठुड्डी का निचला भाग।
(4) लम्बी सरल किन्तु बनाव रहित आँखें।
(5) सारे चेहरे का कड़ा सवोतरा नही है।

हिमाचल शैली की प्रमुख विशेषता

वास्तविकता तथा भावना का सम्मिश्रण इस शैली के चित्रो म बहुत ही सुन्दर विधि स हुआ है तथा इसका आलेखन रमणीय और कोमल है। चित्रगत आकृतियां तथ अन्य वस्तुओ को बड़ी कुशलता स इस शैली के चित्र कारा ने सुसज्जित किया है। चित्र म मुख्य अङ्कन तीन हैं जो दर्शको को अपनी ओर अच्छी खींच लेते हैं।

पहाड़ी शैली की सहायक शालियाँ काश्मीर चित्र-शैली, तथा कमायूँ चित्र शैली भी प्रचलित थी जिनके विषय तथा विशेषताएं सब पहाड़ी (हिमाचल चित्र शैली) के समान थी।

कांगड़ा कलम

ध० वी० भा० के शब्दो म कांगड़ा कलम भारत की मध्ययुगीन चित्रकला की सबस अधिक सुकुमार सब म ज्यादा मीठी कलम स्वीकार की जाती है। जितनी मीठी है यह कलम उतनी ही रहस्यमयी कथा है उस चित्र शैली के विकास की। कांगड़ा की उस सुदूर पहाड़ी बस्ती मे इस शैली का समारम्भ और विकास अकस्मात होता दीख पड़ता है। लगता है

जैसे सृजन प्रतिभा का बाँध टूट गया हो। 1780 के पहले चित्र जगत में काँगड़ा का कहीं नाम निशान नहीं और उसके बाद जैसे काँगड़ा की दुनिया में किसी ने अकस्मात प्राण फूंक दिये हों।

वह प्राण फूँकने वाला था एक तरुण पहाड़ी राजपूत युवराज संसार चन्द (1775–1823) उसकी तरुणाई में एक दम काँगड़ा चित्रकला का केन्द्र बना और उसके निर्वासन और मृत्यु के साथ साथ काँगड़ा की कलम भी अस्त हो गई। कौन-सी वह प्रेरणा थी कौन सी वह प्यास थी उस शासक में जो इतनी अनगिन रेखाओं और रंगों में व्यक्त होना चाह रही थी—इस अब कौन बता सकता है? तमाम काँगड़ा कलम के इतने मधुर इतने सुकुमार चित्रों के पीछे उस कलाप्रिय पहाड़ी राजा की मलिलित जीवन कथा बार बार इतिहास कार के सामने एक छाया प्रश्न बनकर घूम जाती है।

मध्यकालीन भारतीय चित्रकला का आरम्भ (यदि भित्ति चित्रों को छोड़ दें तो) पूर्व में पाल और सेन राजाओं के समय में लिखित पाण्डुलिपियों के लघु चित्रों के रूप में और पश्चिम में महावीर के जीवन तथा अन्य जैन गाथाओं के लघु चित्रों के रूप में मिलता है। राजपूत चित्रकला के आरम्भ तक ताड़पत्रों का प्रचलन समाप्त हो चुका था और कागज का प्रयोग होने लगा था। आगे चल कर राजपूत कलम के दो भेद हुए राजस्थानी और पहाड़ी। राजस्थानी कलम का विकास राजस्थान और मध्य भारत में हुआ और पहाड़ी कलम का विकास पंजाब और गढ़वाल की राजपूत शासित पहाड़ी रियासतों में।

17 वीं शताब्दी में जब मुगल दरबार का ह्रास होता जाता रहा तो धीरे धीरे चित्रकार प्रायः उत्तर की ओर जाते जहाँ पहाड़ी राजपूत राजा अब भी चित्रकार का सम्मान करते थे। इन पहाड़ी रियासतों में जम्मू बसौली चम्बा गढ़वाल और काँगड़ा प्रमुख थे।

काँगड़ा कलम इनमें नवीनतम थी जिसकी शुरुआत ही 18 वीं शताब्दी में होती है। मुगल कलम की सफाई और बारीकी इन चित्रों की कलम में आ चुकी थी और उसको आत्मसात करते हुए इसने एक बहुत मधुर शैली को जन्म दिया। उसमें सिर्फ कलम की सफाई और बारीकी ही नहीं थी उसमें एक गति का सा विन्यास था एक सौन्दर्य का सा अछूतापन

था, रेखाओं का बहुत हल्का स्पर्श था जैसा एक पाश्चात्य आलोचक रूपर्ट शीफ का कहना है (कांगड़ा कला की विशेषता है उस का गति तत्त्व—एक सुकुमार जो मान्यों और मनस्विता से आप्लावित है।' लेकिन उनसे भी बड़ी विशेषता यह है कि इस चित्रकला में मानवीय तत्त्व बहुत अधिक है। इसमें जो चित्रित पात्र हैं वे केवल रखी हुई रसाकृतियां ही नहीं हैं बल्कि वे सजीव हैं उनमें भावना है उनमें व्यक्तित्व है।

इसमें जो श्रेष्ठ चित्र हैं उनमें सामान्यतया कोई राजकुमारी केन्द्र में चित्रित की गया है—अकेले या सखियों और दासियों के साथ। अधिकतर किसी महल के महल या छत पर, कभी कभी छज्जे पर बाहर उद्यान की ओर झांकती हुई या अन्दर आसन पर या सेज पर। महल अधिकतर सफेद दूधिया संगमरमर के हैं जिनमें रंगीन पत्थरों की नक्काशी है। महल है शांत ठोस अचल जो पृष्ठभूमि बनकर उभारता है उस कमनीय, सिद्धी सजी या सुकुमार रमणी या राजकुमारी की मनःस्थिति की। भूमिका की राजकुमारी (नायिका) विप्रलम्भ या संयोग शृङ्गार की किसी मनःस्थिति में आकण्ठ मग्न होती है। डब्ल्यू० जी० आर्चर का तो कहना यहाँ तक है कि उस राजकुमारी के आस पास चित्रित प्रकृति और वस्तुएं केवल उद्दीपक ही नहीं होतीं वे उसकी मनःस्थिति की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति भी होती चलती हैं। प्रिय के आगमन की प्रतीक्षा में शृङ्गार करती हुई नायिका के पास रखे हुए पात्रों की स्थिति सुराही की गर्दन का सम्भार सुराख हाथ पर वह पानी प्याली में घाघरे की लहर सब नायिका की मनःस्थिति के उत्कण्ठापूर्ण उल्लास के प्रतीक बन जाते हैं—लेकिन खण्डिता नायिका की उदासी में वहां पात्रों की सीधी रेखाएं घड़ा और हारों की रेखाएं उदासी में झुक जाती हैं।

चित्रकार यह जानता है कि वह वस्तु का यथार्थ चित्रण नहीं कर रहा वह तो पात्र या घटना द्वारा अभिव्यक्त होने वाली भाव-कथा को तूलिका में उतार रहा है जो उस भाव-कथा के मर्म को उभारता है वही उसके लिए प्रमुख है। इसीलिए आप एक मजेदार बात पाएंगे। दूर से बाहर पास से हैं। मगर उनकी छायाएँ नजर नहीं आतीं। छाया व्यर्थ है—उसमें भाव-कथा में न कुछ जुड़ता है न घटता अत चित्रण [illegible] क्यों चित्रित करे।

प्रश्न

1 हिमाचल चित्रकला की शैली का जन्म कैसे हुआ ? उसका वर्णन करो।
2 हिमाचल चित्रकला का इतिहास लिखो।
3 हिमाचल चित्रकला शैली की मुख्य विशेषताओं का वर्णन करो।
4 हिमाचल चित्रकला शैली की उन्नति के कारण लिखो।
5 हिमाचल चित्रकला शैली तथा राजस्थानी शैली की तुलना करो।
6 हिमाचल चित्रकला शैली के पतन के कारण लिखो।
7 बसौली चित्रशैली के विषय में पूर्ण रूप से लिखो।
8 कांगड़ा चित्रशैली की विशेषताओं का पूर्ण रूप से वर्णन करो।

अध्याय 12

दक्षिण चित्रकला की शैलियाँ

विजयनगर शैली

दक्षिण में विजयनगर का राज्य तथा बहमनी राज्य मुहम्मद तुगलक के अंतिम समय में स्थापित हो गए थे। दक्षिण के सुलतानों के पूर्व की चित्रकला का इतिहास अभी पूरे तौर से विदित नहीं है। इस काल में दक्षिण के अधिकतर मन्दिर विजयनगर की सत्ता में थे, और उनमें से कुछ में चित्र भी बने। तिरुपरुत्तिकुनरम् (जिनकांची) का संगीतमण्डप बुक्कराय द्वितीय के मन्त्री और सेनापति इरुगप्पा ने सन् 1387–88 में बनवाया था।

इस पर बने चित्र भौगोलिक आधार पर सुदूर दक्षिण के हैं परन्तु यह स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए कि इनका घनिष्ठ सम्बन्ध विजयनगर की उस चित्र शैली से अवश्य रहा होगा, जिसका प्रसार दक्षिण में भी था। अनगुण्डी के उचयप्प मठ में भी, जिसे शायद देवराय ने बनवाया था, भित्तिचित्र हैं। तिरुपरुत्तिकुनरम् और उचयप्प मठ के चित्रों के दर्शन से विजयनगर शैली की निम्नलिखित विशेषताएँ प्रकट होती हैं —

विजयनगर शैली की विशेषताएँ

(1) रंग में घनत्व दिखाने की क्रिया का अवलोप।

(2) रेखाओं में नुकीलापन तथा तरलता।

(3) आकृतियों में एक विशेष लोच और गति।

(4) मुकुट वस्त्र तथा गहने विजयनगर शैली के प्रारम्भिक युग के हैं तथा अजन्ता और एलोरा के वस्त्राभूषणों से भिन्न हैं। एलोरा की अपभ्रंश शैली तथा विजयनगर चित्र शैली में भौगोलिक आधार पर कुछ विभिन्नता होते हुए भी यह तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि दोनों शैलियों का मूलगत आधार एक ही है।

13 14 वीं सदियों की अपभ्रंश शैली का प्रसार प्रादेशिक और भौगोलिक विशेषताओं के साथ गुजरात मद्रास तथा दक्षिण में हुआ। चालुक्य राजाओं के द्वारा कांचिपुर की जीत और बाद में विजयनगर के साम्राज्य स्थापना से यह सम्भव है कि दक्खिन तथा सुदूर दक्खिन के चित्रकारों का एक से दूसरे स्थान जाना बढ़ा हो और इस प्रकार परम्परागत अपभ्रंश शैली भी आगे बढ़ी हो।

ई० पू० 100 से लेकर 1400 ई० तक की दक्षिण की चित्रकला का अध्ययन करने पर हम बातों का पता चलता है कि प्राचीन मध्यकालीन भारतीय चित्रकला के अवशेष हमें प्रायः दक्षिण से ही मिले हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि हमारी चित्रकला दक्षिण में विकसित हुई क्योंकि पालि और संस्कृत वाङ्मयों में आये हुए चित्र सम्बन्धी अवतरणों से तो यही विदित होता है कि उत्तर भारत की चित्रकला ईसवी शताब्दी के पूर्व भी बहुत विकसित हो चुकी थी परन्तु ... तथा ... में बहुत अन्तर है। उत्तर भारत की प्राचीन चित्रकला समय की गतिविधि तथा आततायियों के आक्रमण से नष्ट हो चुकी है। दक्षिण भारत में हमारे भाग्य से वह कुछ अंशों में सुरक्षित बच रहा है जो हम उत्तर भारत की महती चित्रकला की ओर इशारा करती है। दक्षिण में बच खुचे चित्रों के आधार पर ही हम उस मूल भारतीय चित्रकला की कल्पना कर सकते हैं जो उत्तर भारत में विकसित होकर दक्षिण पहुंची। अभी यह प्रश्न भी विवादग्रस्त है कि अपभ्रंश शैली का मूल या तो उत्तर भारत मारवाड़ गुजरात में अथवा दक्षिण में है। तिब्बत के इतिहासकार तारानाथ की बात यदि मानली जाय तो शायद अपभ्रंश शैली मारवाड़ में निकली और धीरे धीरे देश के सब भागों में फैल गई। अपभ्रंश शैली के 12 13 वीं सदियों के ताड़पत्रों पर के चित्र अधिकतर गुजरात में मिले हैं और इस युक्ति ... पर इस शैली का उद्गम स्थान कुछ लोग गुजरात बताते हैं। जो कुछ भी हो इस शैली का उद्गम स्थान दक्षिण को मानने के भी पर्याप्त कारण हैं। ... इस शैली का स्थान एलोरा के कैलाशनाथ के 8 9 वीं सदियों में चित्रों में पाते हैं और हो सकता है कि जिस प्रकार अपभ्रंश भाषा सर्वप्रथम दक्षिण में साहित्यिक रूप ग्रहण कर गुजरात राजपूताना तथा मालवा में प्रवेश किया उसी प्रकार अपभ्रंश चित्र शैली भी यहीं से उद्भूत होकर देश में चारों ओर फैल गई। यह बात असम्भव नहीं है क्योंकि अप

भ्रंश के कवियों और मध्यकालीन चित्रकारों में सांस्कृतिक एकता अवश्य मानी जाती थी। राजशेखर ने अपनी काव्यमीमांसा में तो कवि-सभा में अपभ्रंश के कवियों और चित्रकारों को एक ही श्रेणी में स्थान देने की बात कही है।

विजयनगर शैली का विषय तथा उनकी विशेषताएं राजपूत चित्रशैली के समान हैं।

बहमनी शैली

बहमनी राज्य के शासक चित्रकला के प्रेमी थे। इस कारण इनके काल में जो चित्रकला की शैली उत्पन्न हुई वह बहमनी चित्र शैली के नाम से प्रसिद्ध है।

बीदर के दुर्ग में रङ्गमहल में जिसका निर्माण अहमदशाह वली बहमनी ने सन् 1432 ई० में कराया था इस शैली के चित्र देखने को मिलते हैं। इस महल के तीन कमरे किसी समय सुन्दर चित्रों से सजे हुए थे, जो दर्शकों को अपनी ओर आकृष्ट करते थे। इसके अतिरिक्त अहमदशाह वली का मकबरा भी अत्यन्त सुन्दर चित्रों से सजा है। इसमें पुष्प वल्लियों की नक्काशी का काम बहुत ही सुन्दर है जो देखने योग्य है।

बहमनी शैली के चित्रों की विशेषताएँ

इस शैली के चित्रों में हमें निम्नलिखित प्रकार की विशेषताओं का ज्ञान होता है —

(1) इस शैली में नक्काशी का काम बहुत ही अच्छा है जो देखने योग्य है।

(2) बेल-बूटों में सजावटी काम की अधिकता है। इसके प्रभाग को बहुत ही सुन्दर विधि से बनाया गया है।

3 चित्रों में चटकीले रङ्गों का प्रयोग हुआ है।

(4) मुसलमान चित्रकारों तथा हिन्दू चित्रकारों ने दिवाल और छत में अलंकारिक डिजाइनों को बहुत ही सुन्दर ढङ्ग से बनाया है।

इस प्रकार हमें इन चित्रों को देखने से ज्ञात होता है कि इस शैली के चित्रकारों का नक्काशी के काम में काफी रुझान था। इसी कारण इनकी कला केवल नक्काशी तक सीमित रहा।

13-14 वीं सदियों की अपभ्रंश शैली का प्रसार प्रादेशिक और भौगोलिक विशेषताओं के साथ गुजरात, मद्रास तथा दक्षिण में हुआ। चालुक्य राजाओं के द्वारा काँचिपुर की जीत और बाद में विजयनगर के साम्राज्य स्थापना से यह सम्भव है कि दक्खिन तथा सुदूर दक्खिन में चित्रकारों का एक से दूसरे स्थान जाना बढ़ा हो और इस प्रकार परम्परागत अपभ्रंश शैली भी आगे बढ़ी हो।

ई० पू० 100 से लेकर 1400 ई० तक की दक्षिण की चित्रकला का अध्ययन करने पर इस बात का पता चलता है कि प्राचीन मध्यकालीन भारतीय चित्रकला के अवशेष हमें प्रायः दक्षिण में ही मिले हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि हमारी चित्रकला दक्षिण में विकसित हुई क्योंकि पालि और संस्कृत वाङ्मयों में आये हुए चित्र सम्बन्धी अवतरणों से तो यही विदित होता है कि उत्तर भारत की चित्रकला ईसवी शताब्दी के पूर्व ही बहुत विकसित हो चुकी थी परन्तु दृश्य तथा श्रव्य में बहुत अन्तर है। उत्तर भारत की प्राचीन चित्रकला समय की गतिविधि तथा आततायियों के आक्रमण से नष्ट हो चुकी है। दक्षिण भारत में हमारे भाग्य से, वह कुछ अंशों में सुरक्षित बच रही है, जो हमें उत्तर भारत की महती चित्रकला की ओर इशारा करती है। दक्षिण के बचे खुचे चित्रों के आधार पर ही हम उस मूल भारतीय चित्रकला की कल्पना कर सकते हैं जो उत्तर भारत में विकसित होकर दक्षिण पहुँची। अभी यह प्रश्न भी विवादग्रस्त है कि अपभ्रंश शैली का मूल या तो उत्तर भारत, मारवाड़ गुजरात में अथवा दक्षिण में है। तिब्बत के इतिहासकार तारानाथ की बात यदि मान ली जाय तो शायद अपभ्रंश शैली मारवाड़ में निकली और धीरे धीरे देश के सब भागों में फैल गई। अपभ्रंश शैली में 12-13 वीं सदियों के ताड़पत्रों पर के चित्र अधिकतर गुजरात में मिले हैं, और इस बुनियाद पर इस शैली का उद्गम स्थान कुछ लोग गुजरात बताते हैं। जो कुछ भी हो इस शैली का उद्गम स्थान दक्षिण को मानने के भी पर्याप्त कारण हैं। हम पहले पहल इस शैली का दर्शन एलोरा के कैलाशनाथ के 8-9 वीं सदियों के चित्रों में पाते हैं और हो सकता है कि जिस प्रकार अपभ्रंश भाषा ने सर्वप्रथम दक्षिण में साहित्यिक रूप ग्रहण कर गुजरात, राजपूताना तथा मालवा में प्रवेश किया उसी प्रकार अपभ्रंश चित्र शैली भी यहीं से उद्भूत होकर देश में आगे और फैल गई। यह बात असम्भव नहीं है, क्योंकि अप

भ न क कवियो और मध्यकालीन चित्रकारो म सास्कृतिक एकता अवश्य मानी जाती थी । राजशेखर ने अपनी काव्यमीमांसा म तो कवि-सभा म अपभ्रश के कवियो और चित्रकारो को एक ही श्रेणी म स्थान देने की बात कही है ।

विजयनगर शैली का विषय तथा उनकी विशेषताए राजपूत चित्रशैली के समान है ।

बहमनी शैली

बहमनी राज्य के शासक चित्रकला के प्रेमी थे इस कारण इनके काल म जो चित्रकला की शैली उत्पन्न हुई वह बहमनी चित्र शैली के नाम से प्रसिद्ध है ।

बीदर के दुर्ग म रगमहल म जिसका निर्माण अहमदशाह वली बहमनी ने सन् 1432 ई० म कराया था इस शैली के चित्र देखने को मिलते हैं । इस महल के तीन कमरे किसी समय सुन्दर चित्रो से सजे हुए थे जो दर्शको को अपनी ओर खीच लेते थे । इसके अतिरिक्त अहमदशाह वली का मकबरा बहुत ही सुन्दर चित्रो से सजा है । इसमे फूल पत्तियो की नक्काशी का काम बहुत ही सुन्दर है जो देखने योग्य है ।

बहमनी शैली के चित्रों की विशेषताए

इस शैली के चित्रो म हम निम्नलिखित प्रकार की विशेषताओ का ज्ञान होता है —

(1) इस शैली म नक्काशी का काम बहुत ही अच्छा है जो देखने योग्य है ।

(2) बेल-बूटो म मीनाकारी काम की अधिकता है । इनके उभारो को बहुत ही सुन्दर विधि से बनाया गया है ।

3 चित्रो म चटकीले रङ्गो का प्रयोग हुआ है ।

(4) मुसलमान चित्रकारो तथा हिन्दू चित्रकारो ने मिश्रित तौर से अलकारिक डिजाइनो को बहुत ही सुन्दर ढङ्ग से बनाया है ।

इस प्रकार हम इन चित्रो को देखने से ज्ञात होता है कि इस शैली के चित्रकारो को नक्काशी के बारे म काफी जानकारी थी । इसी कारण इनकी कला केवल नक्काशी तक सीमित रही ।

बहमनी शैली की शाखायें

बहमनी साम्राज्य के पतन के पश्चात् पाँच निम्नलिखित रियासतें बनीं—

(1) बीदर का बरीदशाही राज्य।

(2) बरार के इमादशाह का राज्य।

(3) गोलकुण्डा के कुतुबशाही राज्य।

(4) अहमदनगर के निजामशाही राज्य।

(5) बीजापुर का आदिलशाही राज्य।

चित्रकला की दृष्टि से इनमें बीजापुर, गोलकुण्डा तथा अहमदनगर के राज्य बहुत ही महत्वपूर्ण दृष्टि से देखे जाते हैं क्योंकि इन स्थानों के शासक चित्रकला के प्रेमी थे और इनके काल में जो चित्रकला पनपी तथा बढ़ी वह बहुत ही सुन्दर दिखाई पड़ती है। सन् 1723 ई० के पश्चात् हैदराबाद में चित्र बहुतायत से बने तथा 18 वीं सदी में पूना, कड़पा, कर्नूल तथा तारापुर आदि स्थानों में भी चित्रकला की उन्नति हुई।

बीजापुरी शैली

बीजापुर के शासक चित्रकला के प्रेमी थे। इनमें से यूसुफ आदिलशाह (सन् 1490 ई० से 1510 ई०) ने अपने दरबार में ईरानी तथा तुर्की चित्रकारों के द्वारा चित्र अङ्कित कराये। इसका पुत्र तथा उसके उत्तराधिकारी भी चित्रकला से प्रेम रखते थे। अलीआदिल की धर्मपत्नी कुशल चित्रित थी। इनके समय के चित्र नुजूम अलउलूम में देखने को मिलते हैं जिनकी रचना सन् 1570 ई० में हुई।

अब प्रश्न यह है कि बीजापुर शैली का उद्गम स्थान क्या है?

बीजापुर चित्र शैली का जन्म गुजराती अपभ्रंश शैली तथा ईरानी चित्र शैली के मिलाप के कारण हुआ।

बीजापुर शैली की उन्नति

बीजापुर चित्र शैली की उन्नति इब्राहीम आदिलशाह द्वितीय सन् (1580 ई० से 1627 ई० तक) के शासनकाल में अधिक हुई। इनके शासन काल के युग में जो चित्र इस शैली के चित्रकारों ने बनाये उन पर ईरानी शैली की छाप है। इसके पश्चात् 16 वीं शताब्दी में इस शैली पर मुगल शैली की छाप पड़ी।

बीजापुर शैली के चित्र

इस शैली में हम निम्नलिखित चित्र देखने को मिलते हैं—

(1) एक चित्र में आदिलशाह अपने साथियों के साथ बैठे हुए अङ्कित किए गए हैं। यह चित्र ईरानी शैली से प्रभावित हुआ है।

(2) इस का बादशाह यह चित्र प्रिंस ऑव वेल्स म्यूजियम में है। इस चित्र पर भी ईरानी छाप है।

(3) योगिनी यह चित्र चेस्टर बटी के संग्रह में है।

(4) हाथी की सवारी यह चित्र इस शैली का एक सुन्दर चित्र है।

(5) इसी समय की इस शैली के दो चित्र भारत इतिहास संशोधक मण्डल पूना के संग्रह में हैं। इनमें से एक चित्र नारी का है और दूसरा चित्र हाथियों की लड़ाई का है।

(6) इब्राहीम आदिलशाह की सवारियाँ इस शैली के चित्रकारों ने इब्राहीम आदिलशाह की सवारियाँ भी बनाईं।

(7) लोककला के चित्र इस शैली के चित्रकारों ने इब्राहीम आदिलशाह के समय की लोक कला को भी अङ्कित किया है।

(8) नारियों के चित्र तथा भित्ति चित्र इस शैली के चित्रकारों ने नारियों के चित्र भी सुन्दर ढंग से बनाये हैं जो देखने योग्य हैं। इस समय भित्ति चित्र भी बने जो दर्शकों को अच्छे लगते हैं।

(9) युद्ध के चित्र इस शैली के चित्रकारों ने युद्ध के चित्र भी बनाये हैं जिनमें से रुस्तमखाँ तथा शिवाजी के बीच पन्हाला की लड़ाई का सुन्दर ढङ्ग से चित्रण किया है।

बीजापुर शैली के चित्रों की विशेषताएँ

इस शैली के शुरू के चित्रों में ईरानी चित्र शैली की विशेषताओं की छाप है। फिर इस पर मुगल चित्र शैली का प्रभाव दिखाई पड़ता है। इस कारण इस शैली के चित्रों की विशेषताएं ईरानी तथा मुगल शैलियों की विशेषताओं के समान हैं।

प्रश्न

1 विजयनगर चित्र शैली तथा बहमनी चित्र शैलियों का पूर्ण रूप से वर्णन करो।

2 बीजापुर चित्र शैली का पूर्ण रूप से वर्णन करो।

अध्याय 13

ईरानी चित्रकला की शैली

मुगल शैली के आरम्भ में पहले के चित्र ईरानी शैली के हैं। ईरानी शैली में भारतीय कला का लेशमात्र भी अंश नहीं है। मुगल शैली के चित्र इस शैली से मिलते जुलते प्रतीत होते हैं। मुगल शैली और ईरानी शैली के भाव एक ही हैं। इन शैलियों के चित्र भारतीय चित्रकला शैलियों से पृथक हैं। ईरानी शैली के चित्रों की आकृतियाँ बड़ी सुन्दर हैं।



चित्र 11— ईरानी शैली का चित्र

बाबर के साथ जो चित्रकार भारत आये थे उनको अपनी चित्रकला से बड़ा प्रेम था और उस समय के चित्रकारों का मेल भारतीय उच्चकोटि के चित्रकारों से भी न हो सका था। इस कारण यह शैली भारत में चल पड़ी। ईरानी कला के जो चित्र प्राप्त हुए हैं, वे बड़े सुन्दर हैं। इस शैली में

की योजना भी अच्छी है। इन चित्रों की सुन्दरता का श्रेय रंग योजना को है।

इस शैली के मुख्य रंग लाल, नीला और सुनहरा हैं। इन चित्रों में कलम से बारीक काम किया गया है। इनकी रेखाएं सुन्दर हैं। पर्दों पर सुन्दर बेलबूटे (बनावटियाँ) बने हैं। इस शैली के चित्रों के भाव बहुत अच्छे हैं। चित्रों में उस काल का पहनावा दिखाया गया है और साथ ही साथ उसके दरबार तथा घर का भी चित्र बनाया गया है।

ईरानी शैली अलंकार प्रधान है। इसमें प्राकृतिक वस्तुओं के चित्रों को बड़े सुन्दर ढंग से बनाया गया है। स्त्रियों के चित्रों में ईरानी कलाकारों ने स्त्रियों की ही सब वस्तुओं को बनाया है। इन चित्रकारों ने उन्हीं आभूषणों को बनाया है जिनसे उस काल की स्त्रियाँ अपने को आभूषित करती थीं। फूल और चिड़ियों के चित्र ईरानी शैली के प्रधान विषय हैं।

ईरानी चित्रकला में छाया तथा प्रकाश के नियमों का पालन बाद के चित्रों में किया गया है जो भारत में बनाए गए थे। कुछ चित्र ऐसे प्राप्त हुए हैं, जिनसे ऐसा मालूम होता है कि ये चित्र भारत में आने के बाद बनाये गये हैं।

ईरानी चित्रकारों ने सुन्दर वस्तुओं को काट-छाँट कर इस ढंग से उनके चित्र बनाये जो आलंकारिक बनावटियाँ (designs) के सुन्दर नमूने बन गये हैं। इन बनावटियों को पर्दों पर भी प्रयोग में लाया गया है।

ईरानी चित्रकारों ने प्रकृति चित्रण के अतिरिक्त फारसी भाषा के प्रसिद्ध कवियों की कविताओं के चित्र भी बनाए हैं। इन कलाकारों के मुख्य विषय उमर खय्याम की रुबाइयाँ, लैला मजनूं, शीरी फरहाद और हीर राँझा थे।

ईरानी शैली का ढंग मुगल शैली में प्रत्यक्ष है। यद्यपि दोनों की स्थानिक एक है फिर भी दोनों में बहुत अन्तर प्रतीत होता है। मुगल चित्रों में भी रंग ईरानी शैली के अनुसार भरे गये हैं। इस शैली के चित्रकारों ने भारतीय वस्तुओं के भी चित्र बनाए हैं, जिनमें पान और आम के चित्र सुन्दर हैं।

ईरानी शैली की विशेषताएं

ईरानी शैली के चित्रों को जब हम ध्यानपूर्वक देखते हैं तो हमें उनमें निम्नलिखित विशेषताएं दिखाई देती हैं —

(1) आकृतियाँ—ईरानी चित्र शैली के चित्रों की आकृतियों का चित्रण हमें बिल्कुल रूढ़िगत रूप में दिखाई देता है। नर नारी का चित्रण आलंकारिक है। इन चित्रों के चित्रण करने में ईरानी चित्रकारों ने सरो के पेड़ वलता को अपना आधार बनाया है।

(2) पृष्ठभूमि—ईरानी चित्रों में पृष्ठभूमि में प्राकृतिक दृश्य हैं। वृक्षों व फूलों के चित्रण में सूक्ष्म निरीक्षण तथा कार्यकुशलता स्पष्ट रूप से हमें दिखाई देती है। ईरानी चित्रकार हमें इसमें पूर्णरूप से सफल दिखाई देता है।

(3) रंग योजना—ईरानी चित्रशैली की रंग योजना आकर्षक है। इस में चटकीले लाल सुनहरी तथा नीले रंगों का प्रयोग हुआ है।

(4) रेखाएं—ईरानी चित्रशैली के चित्रों की जो रेखाएँ हैं उनमें हमें बारीकी रेखा भी देखने को मिलती है। पर उनमें भारतीय प्रवाह नहीं दिखाई देता है। घूमती हुई चक्करदार रेखाएं एक अनोखे रूप में दिखाई देती हैं जो देखने योग्य हैं।

(5) चेहरे—ईरानी चित्रों में हमें अधिकतर दो आँखें दिखाई देती हैं जो भावपूर्ण हैं तथा जिनकी बनावट आँखों को अच्छी लगती है।

(6) प्रकाश व अँधेरे का सिद्धान्त—ईरानी चित्रों में प्रकाश व अँधेरे का सिद्धान्त बिल्कुल दिखाई नहीं देता है।

(7) अलकृत मकानात वस्त्रों तथा परदों इत्यादि में सुन्दर आलेखनों व बेला की प्रचुरता पृष्ठभूमि तथा वस्त्रों पर स्वर्णांकन का प्रचुर प्रयोग रेखाओं की स्पष्टता तथा बारीक सधी हुई रेखाएँ इस प्रकार की चित्रकला शैली की मुख्य विशेषताएं हैं।

प्रश्न

1 ईरानी शैली से तुम क्या समझते हो ? उसका वर्णन करो।
2 ईरानी शैली की विशेषताओं का वर्णन करो।
3 ईरानी शैली का इतिहास लिखो।
4 ईरानी शैली के डिजाइन्स का वर्णन करो।
5 ईरानी शैली में सजावट का काम अधिक है। इस पर अपनी राय दो।

अध्याय 14

मुगल चित्रकला की शैली

मुगल शैली का जन्म

राजस्थानी शैली का पतन काल 1700 ई० कहा जाता है। कितने ही विद्वानों का मत है कि मुगल शैली की उन्नति का मुख्य कारण राजस्थानी शैली का पतन है।

मुगल शैली भारत में बहुत समय तक रही। इसकी उन्नति राज्य दरबार से हुई। जैसे जैसे भारत में मुगल राज्य उन्नति करता गया उसके साथ-साथ इसको भी उन्नति पथ की ओर अग्रसर होने का प्रोत्साहन मिला। इसका पतन भी मुगल राज्य के साथ-साथ हो गया।

भारत में मुगल राज्य की स्थापना सन् 1526 में बाबर के हाथों में हुई। कुछ लेखकों का मत है कि स्वयं बाबर एक अच्छा लेखक तथा कलाकार था। उसने कुछ चित्र भी बनाए थे, जिनकी तुलना हम आदर्श कलाकारों से कर सकते हैं। इन चित्रों में उन वस्तुओं का प्रयोग किया गया है, जो आज कला के रत्न माने जाते हैं। सभी कलाएँ मुगल सम्राटों के यहाँ रत्न रूप में पीढ़ियों तक रहीं। इन्हीं रत्नों को प्रकाश में लाने में नवीन मुगल शैली को भारतीय चित्रकार उन्नति पथ पर ले जा रहे हैं।

मुगल शैली पर ईरानी शैली का गहरा प्रभाव पड़ा है। यदि यह कहा जाय कि ईरानी शैली और राजस्थानी शैली मुगल शैली की जन्मदाता हैं तो अत्युक्ति न होगी।

मुगल उस समय भारत में नए नए आये थे। उनका जन्मस्थान फारस था जहाँ ईरानी शैली का राज्य था। सम्राट बाबर जो स्वयं एक अच्छा कलाकार था अपने साथ अच्छे अच्छे कलाकार भी लाया था। ये सब कलाकार भारत में बिल्कुल नए थे और भारतीय चित्रकला का उन्हें रंग मात्र भी

अभ्यास नहीं था। इस कारण उन्होंने भारत में रहते हुए भी ईरानी शैली के अनुसार चित्र बनाए।

मुगल काल की चित्रकला मुगल राज्य की उन्नति तथा पतन के साथ रही। बाबर और उसके पुत्र हुमायूँ पर किसी भी भारतीय कला का प्रभाव नहीं पड़ा क्योंकि ये दोनों ही भारत में बहुत ही अल्प काल तक रहे।

बाबर ने सन् 1526 ई० में पानीपत के युद्ध में इब्राहीम लोदी को पराजित करके दिल्ली तथा आगरे के गढ़ों को जीतकर मुगल राज्य की नींव डाली। हुमायूँ ने बंगाल विजय करके अपने पिता के राज्य को विस्तृत किया। सन् 1530 में यकायक हुमायूँ बीमार हो गया और बाबर ने अपनी जान देकर अपने प्रिय पुत्र को पुनः जीवित कर लिया। इस प्रकार बाबर को केवल चार वर्ष ही भारत में रहने का अवसर मिला। इतने अल्प-काल में बाबर भारतीय चित्रकला तथा अन्य वस्तुओं को न देख सका।

सन् 1530 ई० में हुमायूँ सिंहासनारूढ़ हुआ परन्तु दुर्भाग्यवश उसको कठिनाइयों ने घेर लिया। हुमायूँ को शेरशाह ने युद्ध में परास्त कर दिया और उसको हार कर फारस की ओर भाग जाना पड़ा। हुमायूँ 15 वर्ष तक भारत से बाहर रहा और फिर लौट कर अपने खोए हुए राज्य को पुनः प्राप्त करके राज्य कार्य चलाने लगा। कुछ ही समय के बाद वह सीढ़ियों से गिरकर इस संसार से चल बसा। इस प्रकार हुमायूँ को भी भारतीय चित्रकला का आनन्द प्राप्त न हो सका।

हुमायूँ के बाद उसका पुत्र अकबर गद्दी पर बैठा। राज्य का सारा कार्य उसका पिता तथा गुरु बैरमखाँ चलाता था। जब अकबर बड़ा हुआ, तो उसने सारे कार्य को अपने हाथ में ले लिया। कला के विद्वानों का मत है कि मुगल चित्रकला की नींव बाबर ने डाली और उसका भवन निर्माण अकबर ने किया था।

जहाँगीर के समय में कला की बड़ी उन्नति हुई। शाहजहाँ के समय में पतन के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे थे। शाहजहाँ को चित्रकला से प्रेम तो था परन्तु उसकी रुचि वास्तुकला की ओर थी।

सम्राट औरंगजेब के समय में तो इसकी उन्नति बिल्कुल रुक गई। औरंगजेब धार्मिक विचारों का पुरुष था। इस प्रकार मुगल शैली 250 वर्ष भारत में चमक कर मुगल राज्य के साथ अन्त हो गई।

मुगल शैली के मुख्य स्थान समरकन्द और हिरात थे। कुछ चित्रकला के विद्वान इसको भी ईरानी चित्रकला मानते हैं। यह ठीक ही है कि आरम्भ मे मुगल शैली ने ईरानी शैली की नकल की है, क्योंकि मुगल लोग भारतीय सभ्यता और रीति रिवाज को नहीं जानते थे। इन चित्रों का रंग ईरानी शैली का द्योतक रहा है। दोनों की टकनिक एकसी है किन्तु दोनों के चित्रों रंग अन्तर पता कर देते हैं। इन चित्रों में भारतीय आधार पर रंगों का प्रयो किया गया है। अकबर के दरबार में ईरानी और भारतीय दोनों चित्रका मौजूद थे इसका पता 'आइने अकबरी' से चलता है। ईरानी चित्रकार अब्दु समद और फारुख थे। जसवन्त और बसावन भारतीय चित्रकार थे।

दोनों शैलियों में परस्पर मेल हो गया और नवीन शैली, जिसको मुग शैली कहते हैं, उसका जन्म हुआ।

मुगल शैली की उन्नति

आरम्भ में फारसी भाषा के प्रसिद्ध कवि निज़ामी की पुस्तक के चि बनाने का काम चार हिन्दू चित्रकारों को दिया गया। अकबर की गुणग्राहि में दोनों शैलियों के चित्रकारों ने एक दूसरे से बहुत कुछ सीखा। (मुगल शै की स्थापना सम्राट अकबर के समय में हुई। उस समय यह शैली केवल अमी और पदाधिकारियों के ही लिए थी, इससे जनता को कोई लाभ नहीं हुआ समय के साथ-साथ जनता ने इसको अपनाया और यह उन्नति के पथ पर चल लगी। यह अन्त तक जनता के हाथों में न जा सकी। इस शैली के मान चित्र जनता के हाथों में पड़े परन्तु इन चित्रों का विषय भी दरबारी जी था, जिसमें शाहजहाँ के रहन-सहन के ढंगों का चित्रण बड़े सुन्दर ढंग से कि गया है। दरबार के रत्नों के भी चित्र बनाए गये जो बहुत ही सुन्दर हैं।

बादशाह ने कुछ किवदन्तियों (कहानियों) की पुस्तकों के भी चित्र बन की आज्ञा दी जो इन चित्रकारों ने बड़ी कुशलता से बना कर सम्राट सम्मुख प्रस्तुत किए थे। इस समय की प्रसिद्ध पुस्तक 'आइने अकबरी' जब हम इस पुस्तक पर दृष्टि डालते हैं, तो हमको इसमें चालीस चित्रकारों नाम मिलते हैं। यह इस बात की सूचक है कि सम्राट अकबर को चित्रक से बड़ा प्रेम था।

यदि हम इनकी तुलना अजन्ता के चित्रों से करें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि य चित्र उतन सजीव नहा हैं। मुगल शनी के तीन मुख्य विषय हैं— (1) कथाएँ (2) ऐतिहासिक चित्र (3) मानव चित्र। इस कला की उन्नति जहांगीर के समय म अधिक हुई क्योंकि स्वय जहाँगीर कला का प्रेमी था। जहाँगीर के समय को मुगल कला का स्वर्ण युग' कहते हैं। इस समय के चित्र कारा न सभी विषयो के चित्र बनाए जिनम से मानव चित्र शिकार क दृश्य प्राकृतिक छटा फूल फल और पशु पक्षी के चित्र मुख्य थ। विदेशी चित्र भी भारत म आन लग थे।

सर टामसरो न एक स्त्री का चित्र बादशाह को दिया। उस चित्र की द्वितीय प्रतिलिपि राजकीय चित्रकारा ने ऐसी बनाई कि स्वत सर टामस रो अपन चित्र को न पहचान सका। इसस यह ज्ञात होता है कि उस समय म चित्रकारा अपनी चरम सीमा पर जा रही थी।

मुगल शली का पतन

विद्वाना का कथन है कि अन्तिम समय म इस शली म न बात उत्पन्न हो गई था जो इस कला का पतन की ओर लिए जा रही था। चित्रकारा की कला म कमी के चिह्न दिखाई द रहे थे। चित्रों म चमत्कार रगा का प्रयोग होने लगा था चित्रों म काम की अधिकता हो गई थी और कुछ चित्रकार अपन विषय स अलग हट गय थ। रेखाओं म सौन्दर्य की कमी पदा हो गई था। चित्रकार र ग की चमक-दमक म कला के नियमा का उल्लंघन करने लग थ। इस शली के पतन का एक कारण यह भी था कि सम्राट शाहजहाँ वास्तु कला का प्रेमी था। इस काल म यद्यपि चित्रा की संख्या कम नहा हुई था लकिन कला की विशेषताओं को अधिक क्षति हुई।

मुगल शली का मुख्य विषय

मुगल शली म मानव चित्रा की संख्या बहुत अधिक है, परन्तु चित्र मानो जस सजीव नहा है। इनम बहुत म चित्र विदेशी है। बहुत स चित्र शिकार दरबारी जीवन पक्षियो, पशुओं पेड़-पौधा और धार्मिक दृश्यो के हैं। चित्रों म भावो की न्यूनता है। इस शली म परन्तु जीवन क चित्र बिल्कुल [illegible] है। मुख्य विषयो को देखते हुए इस कला क चित्रों को निम्नलिखित विषयो म बाँट सकते है

(1) अमीर हमजा और शाहनामे के चित्र।
(2) रामायण, महाभारत और अन्य धार्मिक कथाओं के चित्र।
(3) ऐतिहासिक चित्र।
(4) दरबारी जीवन, शिकार और युद्ध के चित्र।
(5) पक्षियों, पेड़-पौधों और फूल पत्तों के चित्र।
(6) मानवी चित्र।

(1) अमीर हमजा और शाहनामे के चित्र

मुगल शैली के कलाकारों ने अमीर हमजा और शाहनामे के चित्र बनाए बाबर इन पुस्तकों का बड़ा प्रेमी था। इस काम के लिए वह अपने साथ कला कार लाया था। ये कलाकार भारतीय कला से अनभिज्ञ थे, इस कारण उन्होंने सारे चित्र अपनी ही शैली में बनाए।

(2) रामायण, महाभारत तथा अन्य धार्मिक कथाओं के चित्र

जब मुगल तथा भारतीय चित्रकारों का परस्पर मेल हुआ और अकबर राजपूत रानी से विवाह किया तो उसको हिन्दू धर्म के नियमों तथा धार्मि पुस्तकों का ज्ञान हुआ तब उसने अपने शाही चित्रकारों से जो हिन्दू औ मुसलमान दोनों थे, रामायण महाभारत तथा अन्य धार्मिक पुस्तकों की कथाअ के चित्र बनवाए। हिन्दू चित्रकारों ने इन चित्रों के बनाने में बड़ी कला नि णता दिखाई है। इन चित्रों की टकनिक पृथक है, परन्तु फिर भी ये चि बहुत कुछ अजन्ता से मिलते जुलते हैं। मुगल शैली के कलाकारों ने इन सधारण ढंग से अजन्ता के नियमों के आधार पर बनाया है। इन चित्रों की रेखाएँ स्पष्ट तथा सुन्दर हैं। रंगों का प्रयोग यथाविधि किया गया है। चित्र देखने में बड़े सुन्दर मालूम होते हैं।

(3) ऐतिहासिक चित्र

इस समय के चित्रकारों ने इतिहास के भी चित्र बनाए हैं जो चित्रक के अमूल्य रत्न माने जाते हैं। इतिहास के चित्र बहुत अच्छे हैं जो भारत चित्रकला में एक नवीन अध्याय जोड़ते हैं। ये चित्र इतने सजीव हैं इनको देख कर आँखों के सामने युद्ध का पूरा दृश्य आ जाता है। ऐसा मा होता है कि चित्रकार युद्ध-स्थल में सेना के साथ जाते थे और युद्ध-दृश्य बन करते थे। इन चित्रकारों ने हाथी, ऊँट, बटेर, मुर्गे और तीतरों के युद्ध के चि

भी बड़े सुन्दर रूप में बनाए हैं। इस प्रकार के चित्र मुगल शैली की भारतीय चित्रकला को नवीन भेंट हैं।

(4) दरबारी जीवन, शिकार और युद्ध के चित्र

इस शैली का यह मुख्य विषय है। मुगल शैली राज्य दरबार में पली, इसलिए इन चित्रकारों ने अपने ही जीवन को चित्रों के द्वारा दिखाया है। पुरस्कार पाने के हेतु चित्रकारों ने उच्च पदाधिकारियों के जीवनों को चित्र द्वारा प्रदर्शित किया है।

पक्षियों, पेड़-पौधों और फूल फलों के चित्र

यह एक ऐसा बड़ा क्षेत्र है जिसमें चिड़ियाँ, जानवर, पेड़ पौधे, फूल और फलों के चित्र सम्मिलित हैं। मुगल शैली के चित्रकारों ने इनके चित्र बड़ी सुन्दरता से बनाए हैं। भारत में जितने प्रकार की चिड़ियाँ मिलती हैं प्रायः सभी का चित्रण किया गया है। चिड़ियों के चित्रों में सबसे ज्यादा श्रेय मोर को दिया गया है। ये कलाकार इस सुन्दर पक्षी को प्राकृतिक रंगों में बनाने में पूर्ण सफल हुए हैं। अधिकतर चिड़ियों को वाचाल और पंखों को बड़े सुन्दर ढंग से बनाया गया है जिससे इन चित्रों की सुंदरता में चार चाँद लग गये हैं।

पशु—इस शैली के चित्रकारों ने पशुओं के चित्रों का भी चित्रण किया है। इनमें मुख्यतः हाथी, ऊँट, घोड़ा, बैल, गाय, बकरी, शेर, चीता, गीदड़, लोमड़ी और हिरन हैं। इन पशुओं के चित्रों को बड़ी कुशलता से बनाया गया है। चित्रण में इनके सींगों और खुरों का विशेष ध्यान रखा गया है। इनको प्राकृतिक रूप दिया गया है। कुछ चित्र रंगीन भी बनाए गये हैं। इन चित्रों में वास्तविक रंगों का प्रयोग किया है। पशुओं के अंगों के झुकाव और घुमाव को बड़े अच्छे ढंग से चित्रित किया है।

पेड़—इस शैली के चित्रकारों ने पेड़ों के भी चित्र बड़े सुन्दर बनाए हैं। मसाला और पहाड़ी सभी वृक्षों को उनकी प्राकृतिक दशा में बनाया गया है। सम्राट जहाँगीर प्रति वर्ष अपने साथ कलाकारों को कश्मीर ले जाया करता था जिससे पहाड़ी वृक्षों के चित्रण का उन्हें अच्छा अभ्यास हो गया था। उन्होंने तना तथा डालियों की रचना में गति है। गाँठों का उभार बहुत ही सुन्दर है। ... कलाकारों ने ... का परिचय दिया है।

सम्राट जहाँगीर के समय में चित्रकारों का मुख्य विषय प्राकृतिक वस्तुओं का चित्रण करना था और सम्राट को स्वयं भी इस विषय से अति प्रेम था। जब कलाकारों का राज्य दरबार में सम्मान होने लगा तो उन्होंने भी अपनी कला-कुशलता दिखाकर कला को समृद्धिशाली बनाने का प्रयत्न किया। पत्तों की नसों में उनके घुमाव और नोकों में तो इन कलाकारों ने मानो जीवन ही डाल दिया है।

फूल—जहाँगीर को बचपन से ही पुष्पों से बड़ा प्रेम था। गुलाब के फूल ही से नूरजहाँ से इसके प्रेम का आरम्भ होता है। उसकी पत्नी सम्राज्ञी नूरजहाँ को भी फूल अधिक पसन्द थे। सम्राट जहाँगीर तथा नूरजहाँ के जो चित्र उपलब्ध हैं उनमें वह गुलाब का फूल सूँघते हुए बनाए गये हैं। ये चित्र बड़े सुन्दर हैं। इनसे यह प्रतीत होता है कि चित्रकारों ने फूलों के चित्रों को बनाने में भी बड़ी कुशलता दिखाई है। अजन्ता के चित्रों में जो स्थान कमल के पुष्प का मिला है वही स्थान मुगल शैली में गुलाब को है।

फल—मुगल आरम्भ से ही फलों के बड़े प्रेमी थे। जब बाबर भारत में आया तो वह अपने खाने के लिए जो फल भारत में नहीं मिलते थे काबुल से मँगवाया करता था। मुगल शैली के कलाकारों ने काबुल तथा भारत दोनों के फलों के चित्रों का चित्रण किया है और इनमें प्राकृतिक रंगों का प्रयोग किया गया है। ये रंग इन चित्रों को अधिक सुन्दर बनाते हैं।

कीड़े मकोड़े—मुगल शैली के चित्रकारों ने कीड़े मकोड़ों के चित्र भी बनाए हैं। ये इतने सुन्दर हैं कि असल का धोखा हो जाता है। इन चित्रों में मुख्य साँप, बिच्छू, मक्खी, भ्रमर, तितलियाँ आदि हैं।

चिड़ियों के चित्र बड़े सुन्दर हैं। इनमें बड़े चटकीले रंगों का प्रयोग हुआ है। ये चित्र इन रंगों से अधिक सुन्दर दिखाई देते हैं। इन जन्तुओं की बारीकियों को बड़े अच्छे और सही ढंग से बनाया गया है।

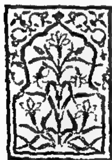
(6) मानवी चित्र

इस काल में मानवी चित्र जनता का मुख्य विषय था और इसीलिए चित्रकार इन चित्रों को बनाते थे। यह उन चित्रकारों का मुख्य विषय था जो राज्य चित्रकार नहीं थे। जनता के चित्रकार ऐसे चित्रों को अधिक बनाते थे जिनको सरकारी तथा जनता दोनों ही अपनायें। अधिकतर वह राज्य दरबार

से सम्बन्धित होते थे। इन चित्रों में वही पहनावा है जो उस समय के मनुष्य पहना करते थे। चित्रों में कपड़ों का वही रंग दिखाया है जिस रंग के कपड़े राज्याधिकारी पहना करते थे। इन चित्रों में चमकदार रंगों का प्रयोग हुआ है क्योंकि उस समय के सब लोग चमकदार रंगों के कपड़े पहना करते थे। यह चमकदार रंग दूर से बड़े अच्छे दिखाई पड़ते हैं।

मुगल शैली की कलाकृतियाँ

इन कलाकृतियों में सीधी खड़ी तथा पड़ी रेखाओं को प्रयोग में लाया गया है। इनको देखने से ऐसा मालूम होता है कि इन कलाकारों को इन रेखा कलाकृतियों का अच्छा ज्ञान था। कुछ कलाकृतियाँ पेड़ पत्ते, फल-फूल





चित्र 12—मुगल शैली की प्राकृतिक कलाकृतियाँ

और पशुओं की आकृतियों से भी बनाई गई हैं। इन आकृतियों की बनी हुई कलाकृतियों को हम प्राकृतिक कलाकृति के नाम से पुकारते हैं। कोने तथा बीच की कलाकृतियों में फूलों का प्रयोग किया गया है।

मुगल शैली की सबसे अच्छी ज्यामितिक कलाकृतियाँ हैं। ये बहुत ही उन्नत दशा में मिलती हैं। मुगल इमारतों पर कुरान की आयतें लिखी गई हैं जिनके लिखने में ज्यामितिक कलाकृतियों से बड़ी सहायता मिली है।

पत्र चित्राकृति (चित्र के नमूने) भी देखने को मिलते हैं जिनको देखकर हम यह कह सकते हैं कि मुगल शैली के चित्रकारों को इनका अच्छा अभ्यास था। कुछ मुगल काल के प्रासादों तथा भवनों में धरातल की कला

कृतियाँ (ऑन ओवर डिजाइन) मिलती हैं। इन कलाकृतियों की इकाइयाँ सराहनीय हैं।

प्राकृतिक कलाकृतियाँ इन कलाकारों ने अधिक संख्या में बनाई हैं। अकबर के समय की गाथाओं में इन कलाकृतियों का अधिक प्रयोग हुआ है। इन कलाकृतियों की इकाइयाँ मुख्यतः फल-फूल हैं।

जब सम्राट शाहजहाँ मुगल सिंहासन पर आरूढ़ था तब एक नई धारा उत्पन्न हुई जिसको 'दिल्ली की कलम' कहते हैं। यह आज तक प्रसिद्ध है। औरंगजेब के समय में चित्रकारी को राज्य दरबार से कोई प्रोत्साहन नहीं मिला, परन्तु फिर भी जनता के चित्रकारों ने अच्छे-अच्छे चित्र बनाए। चित्रकारों ने औरंगजेब के चित्र भी बनाए। जब औरंगजेब ने अहमदनगर और बीजापुर राज्यों को जीत लिया तो दिल्ली के चित्रकार इन राज्यों में जा बसे और वहाँ उन्होंने एक नवीन शैली को जन्म दिया जो दक्षिणी कलम के नाम से प्रसिद्ध है। कुछ कलाकार पटना चले गये और वहाँ पर उन्होंने मुगल शैली को सुरक्षित रक्खा। लखनऊ के नवाबों की सहायता में मुगल शैली 18 वीं शताब्दी के अन्त तक जीवित रही। इसके बाद इस शैली का अन्त हो गया। इससे स्पष्ट है कि मुगल शैली का जन्म तथा मरण दोनों ही मुगल राज्य के साथ-साथ हुए।

बाबर और हुमायूँ के समय के चित्र

मुगल शैली की नींव ईरानी शैली पर रखी गई थी। इस समय के चित्रों में निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

(1) आकृतियाँ के चित्र रिवाज के अनुसार।

(2) चित्रों की पृष्ठ भूमि (back ground) सुन्दर है।

(3) चित्रों में बारीकी अधिक है और सजावट का काम सुन्दर है।

(4) आकार स्वच्छ तथा सुन्दर है। धरातल को नियमानुसार रँगा गया है।

(5) रेखाएँ सुन्दर परन्तु गोलाई रहित हैं।

(6) वस्त्रों पर सुनहरा काम है जो देखने में बड़ा सुन्दर लगता है।

(7) पक्षी और वस्त्रों पर अच्छी अच्छी कलाकृतियाँ बनाई गई हैं। इनमें फूल पत्तियों की इकाइयों का अधिक प्रयोग किया गया है।

(8) पुरुष तथा स्त्रियों के चित्रों की सजावट सुन्दर की गई है।

(9) रेखाओं में भाव तथा जीवन है।

(10) इन चित्रों में छाया तथा प्रकाश के नियमों का कोई पालन नहीं किया गया है।

(11) मुखाकृतियों पर दो आँखें हैं।

(12) रंग चमकदार हैं।

अकबर के समय के चित्र

इस समय के चित्र पक्के और प्राकृतिक हैं। इनमें सजावट की कमी है। इन चित्रों के रंग रूप तथा भाव भारतीय हैं। कुछ चित्र ऐसे भी हैं जिनका विषय भारतीय नहीं है परन्तु इन चित्रों की टेकनिक लकीरें तथा रंग भारतीय है। इस समय के चित्रों में प्रकाश तथा छाया के नियमों का पूर्णरूप से पालन किया गया है। रेखाओं में गोलाई भी है। चित्रों का धरातल बहुत सुन्दर है। सजाने के लिए फलाकृतियों का प्रयोग किया गया है। प्राकृतिक वस्तुओं के चित्रण में दूरी के नियमों का पालन किया गया है। इनमें स? अनुपात का अभाव दिखाई देती है।

सम्राट अकबर के अन्तिम समय में सजावट का काम कम हो गया था ये चित्र सजीव हैं। वस्त्र और आभूषण भारतीय हैं। पर्दों में नाम ग्राम सेना और दरबार के वस्त्रों की भरमार है। एक चित्र 2 × 2 वर्गाकार रूप पर बना हुआ प्राप्त हुआ है जिसमें भारतीय जीवन अधिक है। इन चित्रों से ऐसा प्रतीत होता है कि चित्रों को कई कलाकारों ने मिलकर बनाया है।

जहाँगीर और नूरजहाँ के समय के चित्र

इस समय के जो चित्र हैं उनका विषय राज्य दरबार है। जनता में जीवन चित्रों द्वारा नहीं दिखाया गया है। इस समय की मुगल शैली अपने ही ढंग की है। अधिकतर चित्र प्राकृतिक हैं। इसमें मुख्यतः उद्यान के चित्र हैं। फूल फल और पत्तियों के चित्र अधिक हैं। शिकार के भी चित्र हैं। हाथी घोड़े पालतू तथा जंगली जानवरों के भी चित्र बनाए गए हैं। चित्रों में भद्दा दिखावा नहीं है। चित्रों के चौखटों पर फूल तथा पत्तों की कढ़ाई सजावट की गई है।

जहाँगीर के समय के चित्र अकबर के समय के चित्रों से अधिक सुन्दर और उत्तम जीवन है। इससे पता चलता है कि मुगल शैली जहाँगीर के समय में बड़ी उन्नत दशा में थी।

शाहजहाँ के समय के चित्र

दरबारी शिष्टाचार शाहजहाँ के काल में बहुत अधिक बढ़ गया था। शाहजहाँ ने इस ओर अधिक ध्यान नहीं दिया क्योंकि उनका अधिक ध्यान वास्तुकला की ओर था। इस काल के चित्रों में भी कुछ विशेषताएँ थीं। इस काल के चित्रों में बारीक काम अधिक था। इन बारीकियों का रेखाओं द्वारा दिखाया गया है। इन चित्रों में चमकीले रंगों का प्रयोग हुआ है। रंगों की चमक-दमक बहुत ही कम है। टकनिक में कमी आ गई थी। चित्रों में भावनाओं की कमी है। चित्र कुछ बेजान से प्रतीत होते हैं।

औरङ्गजेब के समय के चित्र

औरङ्गजेब के समय में मुगल शैली अनाथ जैसी हो गई थी। औरङ्गजेब धार्मिक पुरुष था, उसकी रुचि इस ओर तनिक भी नहीं थी। राज्य-कलाकार भी उदर पूर्ति के लिए इधर उधर जाने लगे थे। जनता के चित्रकारों ने जो चित्र बनाये वे उत्तम मुगल शैली का पुट था। जो चित्र सम्राट औरङ्गजेब के प्राप्त हुए हैं उनसे ज्ञात होता है कि मानव चित्रों में कोई दोष उत्पन्न नहीं हुए थे।

मुगल शैली के मानवी चित्रों की विशेषताएँ

मुगल शैली के मानवी चित्र बहुत अमूल्य रत्न हैं। इनका विषय भारतीय है। इस शैली के चित्रों के दो भाग हैं—

(1) ईरानी शैली के मानव चित्र।

(2) भारतीय मानव चित्र।

(1) ईरानी शैली के मानव चित्र—इन चित्रों को मुगल चित्रकार अपने साथ ईरान से लाए थे। ये चित्र ईरानी स्कूल आव आर्ट्स के हैं। इन चित्रों में -मान तथा छाया के नियमों का पालन नहीं हुआ है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि चित्र विदेशी हैं।

(2) भारतीय मानव चित्र—ये चित्र पारम्परिक मत जोन के रूप रखते हैं। इन चित्रों का प्रत्येक अंग भारतीय है। राजा-महाराजाओं, धनिक

और रंकों के चित्र भी चित्रित किए गये। इन चित्रों के वस्त्रों का रंग पम पीला है। इनकी आकृतियाँ बहुत अच्छी हैं।

ये चित्र टेक्निक से शून्य नहीं हैं इनको नियमानुसार बनाया गया है। ये चित्र इस बात का प्रमाण हैं कि इस काल के चित्रकारों को चित्रकला के नियमों का अच्छा ज्ञान था।

मुगल चित्र शैली के प्रसिद्ध चित्रकार

आईने अकबरी और जहाँगीर की आत्मकथा तुजुक जहाँगीरी से हमें मुगल चित्र शैली के चित्रकारों के विषय में पूरा रूप से ज्ञान हो जाता है। इन चित्रकारों का वर्णन निम्नलिखित है—

अकबर के समय के चित्रकार

(1) भगवती (2) दसवन्त (3) बसावन (4) अब्दुल समद (5) फारुख (6) निरिया (7) मरवन (8) मिस्कीन तथा (9) जगन्नाथ।

जहाँगीर तथा शाहजहाँ के समय के चित्रकार

इन दोनों सम्राटों के समय निम्नलिखित चित्रकार विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं —

(1) होनहार (2) समन्द (3) अनूप चितर (4) चितर मन (5) मनोहर सिंह (6) मन्सूर (7) मुहम्मद अफजल (8) मुहम्मद नादिर समरकन्दी (9) मीर हाशिम (10) फकीरुल्ला खाँ (11) धनशाह।

प्रश्न

1. मुगल शैली की इमारत ईरानी तथा राजस्थानी शैलियों की नींव पर बनी। इस पर अपनी राय दो।
2. मुगल शैली ने मुगल राज्य के साथ-साथ उन्नति की और जब मुगल राज्य मिटा तो यह शैली भी मिट गई। इस पर अपनी राय दो।
3. मुगल शैली का इतिहास लिखो।
4. मुगल शैली की विशेषताओं का वर्णन करो।
5. मुगल शैली के विषय क्या हैं? उनको लिखो।
6. मुगल शैली ने जहाँगीर के समय में बहुत उन्नति की। इस पर अपनी राय दो।

7 बाबर हुमायूँ, अकबर और जहाँगीर के समय में किन किन विषयों के चित्र बनाए गए ? उनकी विशेषताओं का वर्णन करो।

8 मुगल शैली के पतन के कारण लिखो।

9 मनुष्य के चित्र मुगल शैली की अच्छी देन हैं। इस पर अपनी राय दो।

10 मुगल शैली के मानवी चित्रों का वर्णन करो।

11 मुगल शैली की तुलना राजस्थानी शैली से करो।

12 मुगल शैली तथा पहाड़ी शैली की तुलना करो।

अध्याय 15

बूँदी, अवध, पटना तथा कम्पनी शैलियाँ

भारत म कुछ काल तक मुगल और राजपूत तथा उसकी सहायक शलियाँ रहा। 17 वी शताब्दी म मुगल शली का अन्त हुआ तथा 18 वी सदी म राजस्थानी शली की बूँदी शाखा की उन्नति हुई।

बूँदी शली

बूँदी शली राजस्थानी शली की एक शाखा है जिसकी उन्नति बूँदी म हो रही थी। इस रियासत के महाराज रामसिंह चित्रकला के बहुत बड़े प्रमी थे उन्हीं की प्रतिपालकता म स्थानिक राजस्थानी की शाखा बूँदी शली म एक नवीन लहर दौड़ गई। उनके यहाँ चित्रकारो का आदर की दृष्टि स देखा गया जिसके कारण मुगल दरबार के कुछ चित्रकार उनके यहाँ आये और इस प्रकार उनके दरबार के सकडो चित्र इन चित्रकारो ने बनाये। इसके अतिरिक्त पालतू तथा जगली पशु पक्षियो के स्वभाव आलेखन म भी बहुत विस्तृत काम हुआ।

बूँदी शली पर कम्पनी शली का प्रभाव

बूँदी एक छोटी सी रियासत थी और यह रियासत भी अँग्रेजो के प्रभाव म आगई जिसमे यहाँ एक अँग्रेज रजिडेन्ट रहने लगा। जान पड़ता है कि रेजिडेन्ट आदि अँग्रेजो के सम्पर्क के कारण बूँदी तथा कम्पनी शली का मिलाप हुआ और बूँदी शली के चित्रकारो ने कम्पनी शली की कुछ विशेष बात चुनकर उनको अपने चित्रो म अपनाया। अर्थात् कम्पनी शली ने जो काम यूरोपीय ढग पर किया उसको बूँदी शली के चित्रकारो ने अपनी शली को विस्तीर्ण करके पूरा किया। इस प्रकार भागते हुए मृग चिंघाडते हुए हाथी उड़ते हुए मयूर नाचते तथा लड़ते हुए मोर आदि के चित्रित हो रेखा चित्र बने।

बूंदी शैली के चित्रों का विषय

बूंदी शैली के चित्रों के निम्नलिखित विषय हैं —

(1) राज्य-दरबार के चित्र।
(2) जानवर तथा चिड़ियों के चित्र।
(3) महाराज रामसिंह के उत्सव आदि के चित्र।
(4) राग रागिनियों के चित्र।
(5) नायिकाओं के चित्र।

बूंदी शैली के विषय राजस्थानी शैली के विषयों के समान हैं।

बूंदी शैली के चित्रों की विशेषताएँ

बूंदी शैली के चित्रों की विशेषताएँ वही हैं जो राजस्थानी शैली की हैं।

अवध शैली

मुगल शैली के विषयों के चित्र दिल्ली तथा लखनऊ में बनते रहे, यदि यह कहा जाय कि यह मुगल शैली के चित्रों की प्रतिलिपि थे तो अधिक ठीक होगा। नवाब अवध के काल में जो चित्र शैली पली-बढ़ी उसका जन्म मुगल शैली के हाथों हुआ। अवध के नवाब चित्रकला के प्रेमी थे इस कारण दूर-दूर से भटक हुए मुगल दरबार के चित्रकार उनके पास पहुँच गये और उन्होंने मुगल शैली के आधार पर यहाँ चित्र बनाये।

चूंकि अवध लार्ड वेलजली के समय में अंग्रेजों के प्रभाव में आ गया था इस कारण अवध राज्य में सहायक प्रथा की नीति के अनुसार एक रेजीडेण्ट रहने लगा। अंग्रेजों की कम्पनी शैली तथा मुगल शैली के पतन रूप का यहाँ मिलाप हुआ, और जिसका फल अवध शैली के रूप में उत्पन्न हुआ।

अवध शैली के चित्रों का विषय

अवध शैली के चित्रों के विषय निम्नलिखित हैं —

(1) राज्य-दरबारी घटनाओं के चित्र।
(2) रानियों के चित्र।
(3) शिकार तथा युद्ध के चित्र।
(4) जानवर तथा चिड़ियों का सहायता के चित्र।
(5) मानव चित्र।

अवध शली के चित्रों की विशेषताए

जब हम अवध चित्र शली के चित्रों को ध्यानपूर्वक देखते हैं, तो हम इन चित्रों की विशेषताएं मुगल शली के पतन के चित्रों की विशेषताओं के समान दिखाई पडती हैं।

अवध शली के चित्रों की टैकनिक

इस शली के चित्रों की टैकनिक शून्य नहीं है। इनको नियमानुसार बनाया गया है जो इस बात का प्रमाण है कि इस काल के चित्रकारों को चित्रकला के सिद्धान्तों का अच्छा ज्ञान था।

पटना शली

दिल्ली तथा लखनऊ में जो चित्रकार चित्र बना रहे थे, वह मुगल शली की नकल थी। मुगल दरबार में जब चित्रकारों को मान प्राप्त न हुआ तो वे इधर उधर पास-पडोस की रियासतों में चले गये जहाँ उनको मान भी मिला तथा उनको पेट भरने के लिए रोटियाँ भी प्राप्त हुईं। इन्हीं चित्रकारों में से कुछ चित्रकार पटना में भी जा बसे और उन्होंने अपनी कला को यहाँ जीवित रक्खा।

पटना शली का जन्म

पटना शली का जन्म मुगल शली के पतन के कारण हुआ। इसकी इमारत मुगल शली की पतन बुनियादों पर रक्खी गई तथा इसकी इमारत का निर्माण मुगल चित्रकारों ने किया।

पटना शली के चित्रों का विषय

पटना शली के चित्रों का विषय निम्नलिखित प्रकार का है —

(1) महाजिनों के चित्र।
(2) देवी देवताओं तथा धार्मिक कथाओं के चित्र।
(3) दृश्य के चित्र।
(4) वास्तविक चित्रण।
(5) ऐतिहासिक चित्र।
(6) मानव चित्र।

इन विषयों के चित्रों पर पूर्ण रूप से मुगल शली की छाप है।

पटना शैली के चित्रों की विशेषताएँ

इस शैली के चित्रों की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं —

(1) आकृतियों के चित्रों में रिवाज की कमी कम दिखाई पड़ती है।
(2) चित्रों की पृष्ठ भूमि सुन्दर है।
(3) चित्रों में नक्काशी है।
(4) चित्रों में सजावट का काम अधिक है।
(5) आकार स्वच्छ हैं तथा सुन्दर भी।
(6) धरातल में नियमानुसार रंगों का प्रयोग कम हुआ है।
(7) ... के सिद्धान्त का पालन हुआ है।
(8) रेखाएँ सुन्दर तथा सजीव कम हैं।
(9) वस्त्रों पर सुनहरा काम भी है।
(10) पुरुषों तथा नारियों के चित्रों में सजावट सुन्दर विधि से हुई है।
(11) मुखाकृतियों पर दो आँख हैं।
(12) रंग चमकदार हैं।

कम्पनी शैली

अँग्रेज भारत में व्यापारी की हैसियत से आये। प्लासी के युद्ध के पश्चात् अंग्रेजी राज्य की नींव भारत में पड़ी। उनके साथ-साथ उनकी चित्रकला भी भारत में आई, जो भारतीय चित्रकला के इतिहास में कम्पनी शैली के नाम से प्रसिद्ध हुई।

कम्पनी शैली का प्रभाव

इस शैली पर कम्पनी शैली का कुछ थोड़ा सा प्रभाव पड़ा है, क्योंकि इस शैली के चित्रों पर हम कम्पनी शैली की कुछ विशेषताओं का भी प्रभाव देखते हैं।

कम्पनी शैली की उत्पत्ति

जिस समय कम्पनी शैली भारत में आई उस समय भारतीय चित्रकला का पतन आरम्भ हो चुका था। भारत के मुख्य-मुख्य नगरों में अंग्रेजी शिक्षा की संस्थाएँ खुल चुकी थीं और स्वयं पश्चिमी कला के सिद्धान्तों पर भारतीय छात्रों को शिक्षा दी जा रही थी। जिसका फल यह हुआ कि स्थान विशेषी

कला के प्रेमी बन गये और उनका ध्यान भारतीय चित्रकला की ओर से हट गया, परन्तु कुछ समय के पश्चात् इस विचार में परिवर्तन हुआ और चित्रकला के इतिहास में पुनरुत्थान काल का जन्म हुआ।

प्रश्न

1 बूँदी शैली पर पूर्ण रूप से प्रकाश डालो।
2 अवध शैली का पूर्ण परिचय दो।
3 पटना शैली का वर्णन अपने शब्दों में करो।
4 कम्पनी शैली का वर्णन करो।

अध्याय 16

भारतीय चित्रकला का पुनरुत्थान

बम्बई तथा कलकत्ता में अंग्रेजों के शिक्षण के लिए कुछ विद्यालय स्थापित किए गये। इन कला के विद्यालयों में पाश्चात्य कला की शिक्षा दी जाने लगी। इन विद्यालयों के मुख्य अध्यापकों ने इस विचार को ध्यान में रखकर इन शिक्षा केन्द्रों को स्थापित किया कि भारतीय चित्रकला व्यर्थ है और यूरोप की चित्रकला के सिद्धान्त श्रेष्ठ हैं।

पुनरुत्थान का जन्म

इन्हीं उच्च पदाधिकारियों में एक प्रो० ई० बी० हैवल थे। इन्होंने भारतीय चित्रकला का पूर्ण रूप से अध्ययन किया और इस बात को अपने विद्यार्थियों में फैलाया कि भारतीय चित्रकला ही सर्वश्रेष्ठ है। उन्होंने भारतीय चित्रकला पर अनेक पुस्तकें लिखी हैं जो माननीय हैं। इनके प्रमाणों को सब विद्वान मानते हैं और कुछ विद्वानों का कथन है कि यह महानुभाव भारतीय चित्रकला की नवीन जागृति के पिता हैं। पुनरुत्थान का अर्थ नवीन जागृति है।

पुनरुत्थान की उन्नति

"राजनैतिक स्वतन्त्रता का सम्बन्ध राष्ट्र की सृजनात्मक भावनाओं और उनकी अभिव्यक्ति के साथ जोड़ा जा सकता है। स्वदेशी आन्दोलन के साथ भारतीय चित्रकला का पुनरुत्थान हुआ। इसमें कोई सन्देह नहीं कि भारतीय कला का प्रारम्भिक रूप अत्यन्त उज्ज्वल था, परन्तु बहुत से कारणों से 18वीं सदी में ऐसे सृजनात्मक चित्रकार नहीं थे जो हमारी परम्परा की रक्षा कर सकते। पिछले पचास वर्षों में भारतीय चित्रकला का पुनरुत्थान हुआ है। इस नवीन धारा का नाम आधुनिक भारतीय चित्रकला दिया है।

स्वर्गीय अवनीन्द्रनाथ टैगोर और उनके कुछ चेलों द्वारा आधुनिक भारतीय कला का पुनरुत्थान हुआ। भारतीय चित्रकला के इतिहास में निस्सन्देह [illegible]

महत्वपूर्ण कदम है)। इस कथन का सत्य इतिहास तथा एस्थेटिक्स के दृष्टिकोण से सिद्ध किया जा सकता है। जैसे अजन्ता, बाघ, राजस्थानी चित्र चित्रित पाण्डुलिपियाँ—विशेषकर जैनियों, मुगलों और हिमालय के लोगों की। यह सत्य है कि ये पुनरुत्थानवादी चीनी, जापानी तथा यूरोपीय प्रभावों से पूर्ण रूप से मुक्त नहीं थे(पचास वर्षों से अधिक समय पूर्व आधुनिक भारतीय चित्रकला की नींव अवनीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा डाली गई। उनके देहान्त के पश्चात् उनके चेलों ने इस कार्य को अच्छे ढंग से किया। इन चेलों में सबसे अधिक प्रतिभाशाली थे नन्दलाल बसु थे जो कुछ समय पहले तक कवि ठाकुर के अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय (शान्ति निकेतन) में कला भवन के अध्यक्ष थे और जो अब भी परामर्शदाता के रूप में वहाँ रहते हैं।

भाग्यवश अन्य जातियों की ओर अपनी राष्ट्रीय परम्पराओं की इन कलाओं ने खोज की है, उन्हें अपनाया है, उन्हें सँवारा है और फिर उनका उपयोग किया है परन्तु वे सस्ती किस्म की टेक्नीक तथा चमत्कारों से प्रभावित नहीं हुए हैं।

पुनरुत्थान की उन्नति में श्री हैवल ने भी सहायता दी जो उस समय कलकत्ता आर्ट स्कूल के प्रधान थे। आपने भारतीय चित्रकला का पूर्ण रूप से अभ्यास किया और इस बात को अपने विद्यार्थियों में फैलाया कि भारतीय चित्रकला ही सर्वश्रेष्ठ है। उन्होंने भारतीय चित्रकला पर बहुत कुछ लिखा है जो माननीय है। इनके प्रमाणों को सब विद्वान मानते हैं और कुछ तो उनको आधुनिक चित्रकला की नवीन जागृति के पिता कहते हैं।

स्वर्गीय गगनेन्द्रनाथ ठाकुर जो अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के बड़े भाई थे उनका नाम भी भारतीय चित्रकला के इतिहास के पुनरुत्थान के लिए प्रसिद्ध है। इनकी कलाकृतियों के द्वारा भी भारतीय चित्रकला में जागृति उत्पन्न हुई।

स्वर्गीय कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने सन् 1925 ई० से चित्र बनाये और इस कार्य में इतने मगन हुए कि आधुनिक चित्रकारों में सर्व प्रथम उनका नाम लिया जाता है।

श्री नन्दलाल बसु तथा यामिनी राय ने भी इस जागृति की लहर में तेजी से भाग लिया।

श्री डी० पी० चौधरी ने जो मद्रास में गवर्नमेन्ट आर्ट स्कूल के प्रिंसिपल

है नगिण म चित्रकला म जागृति की लहर पैदा कर दी और पुनरुत्थान का प्रभाव वहाँ भी पड़ा।

श्री हालदार न जो कि स्वर्गीय श्री अवीन्द्रनाथ ठाकुर के चेले हैं पुनरुत्थान की लहर म मजो स भाग लिया।

स्वर्गीय अमृत शेर गिल न भी भारतीय चित्रकला के पुनरुत्थान म सहायता दी तथा आधुनिक भारतीय चित्रकला म जिस देह अमृत शेर गिल एक महत्वपूर्ण परिवतन लाई।

भारतीय कला के पुनरुत्थान का बम्बई स्कूल के कलाकारो पर कोई प्रभाव नही पड़ा। यामिनी तथा अमृत शेर गिल की चित्रकला न इन पर अपनी छाप की मुहर लगाई।

प्रश्न

1 भारतीय चित्रकला के पुनरुत्थान के विषय मे पूर्ण रूप से लिखो।

अध्याय 17

आधुनिक काल की चित्रकला के मुख्य स्कूल

भारत में कुछ काल तक मुगल और राजस्थानी शैलियाँ रहीं। 17वीं शताब्दी में मुगल शैली का और 18वीं शताब्दी में राजस्थानी शैली का अन्त हो गया।

दिल्ली और लखनऊ में जो चित्रकार चित्र बना रहे थे वह मुगल शैली की नकल थी। यदि यह कहा जाय कि वह मुगल शैली के चित्रों की प्रतिलिपि थे तो अधिक ठीक होगा। कुछ चित्रकार पटना में जा बसे थे और अपनी एक नई शैली में जिसको पटना शैली कहते थे चित्र बनाते थे। इस शैली का कुछ अंश पाश्चात्य शैली के अनुसार है। पटना शैली में कटुता है भावनाओं का अभाव है। इस शैली के चित्र बहुत हैं। इस समय राजस्थानी शैली अपनी अन्तिम घड़ियाँ पहाड़ी रियासतों में गिन रही थी। पाश्चात्य शैली के मेल से इसका सारा प्रभुत्व नष्ट हो गया और 19वीं शताब्दी के मध्य तक यह सदा के लिए सो गई। इस शैली के कुछ केन्द्र लाहौर और अमृतसर में थे।

बम्बई और कलकत्ता में कला शिक्षण के लिए कुछ विद्यालय स्थापित किये गये थे। इन कला के विद्यालयों में पाश्चात्य कला की शिक्षा दी जाने लगी। इन विद्यालयों के मुख्य अध्यापकों ने इस विचार को ध्यान में रखकर शिक्षा क्रम को स्थापित किया कि भारतीय चित्रकला व्यर्थ है और यूरोप की चित्रकला के सिद्धान्त अच्छे हैं।

इनके उच्च पदाधिकारियों में एक प्रो० ई० पी० हैवल थे। इन्होंने भारतीय चित्रकला का पूर्ण रूप से अभ्यास किया और इस बात को अपने विद्यार्थियों में फैलाया कि भारतीय चित्रकला ही सर्वश्रेष्ठ है। उन्होंने भारतीय चित्रकला पर बहुत कुछ लिखा है जो माननीय है। इनके प्रमाणों को सब विद्वान मानते हैं और कुछ विद्वानों का कथन है कि यह महानुभाव भारतीय चित्रकला की नवीन जागृति के पिता हैं।

इसके बाद यह प्रचार कि भारतीय चित्रकला में सब कुछ भरा पड़ा है अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने किया और अपने शिष्यों को भी प्रचार की प्रेरणा दी। इन सब महानुभावों के ही अथक परिश्रम से भारतीय चित्रकला की बहुत उन्नति हुई।

बंगाल स्कूल ऑव आर्ट के इन चित्रकारों ने वॉश टेकनिक का प्रयोग किया। वाश-टेक्नीक चित्रों में इन कलाकारों ने अजन्ता के चित्रों की सी रेखाओं का प्रयोग किया है, परन्तु इन चित्रों में वह बात न आ सकी जो अजन्ता के चित्रों में है। इनमें लोच, चमक और कोमलता के कारण चित्रों की टेकनिक में कुछ कमी आ गई है। कुछ भी क्यों न हो हमको इन चित्रकारों का आदर करना चाहिए क्योंकि इन्हीं के अथक प्रयत्नों से भारतीय चित्रकला आज अपने पूर्व स्थान को प्राप्त कर सकी है। इन्होंने भारतीय विद्यार्थियों को गलत मार्ग से हटाकर सही पथ पर डाल दिया है।

बंगाल स्कूल के और कई अन्य कलाकार हैं जिन्होंने इस कार्य में बड़ी सहायता की है। उनमें श्री गगनेन्द्र ठाकुर, [illegible], यामिनी राय और नन्दलाल के नाम उल्लेखनीय हैं।

नन्दलाल बसु इस समय के प्रसिद्ध चित्रकार हैं। श्री गगनेन्द्रनाथ ठाकुर के चित्रों में राजस्थानी और मुगल शैलियों की झलक है।

इस स्कूल ने एक बड़ा सराहनीय कार्य किया है कि कुछ चित्रकारों पर जो पाश्चात्य कला का भूत सवार था उसे उतार कर यह दर्शा दिया कि भारतीय चित्रकला सब श्रेष्ठ है।

बंगाल स्कूल आफ आर्ट के चित्र

ये चित्र कृत्रिम नहीं दिखाई देते। इनकी टेकनिक भारतीय है इनमें रंग भी भारतीय कला के आधार पर लगाये गये हैं। चित्रों में भाव प्रधान है जिससे इनकी सुन्दरता में चार चाँद लग गये हैं। विषय क्षेत्र विस्तृत है। इन चित्रकारों ने पुस्तकों की कथाओं के भी चित्र बनाए हैं जिनमें भारतीयता की झलक दिखाई देती है। इनके अतिरिक्त अन्य विषय भी इनके यहाँ देखने को मिलते हैं।

बम्बई स्कूल आफ आर्ट के चित्र

बंगाल स्कूल की धारा सारे देश में बिजली के समान दौड़ गई। बम्बई में भी भारतीय चित्रकला पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। गुजरात में

श्री० रविशंकर तथा कुछ अन्य चित्रकार एकत्रित हुए और उन्होंने गुजरात की सारी प्राचीन बातों को चित्रित किया। बम्बई के स्कूल के विद्यार्थियों ने भित्ति चित्रों में अपनी योग्यता बढ़ानी चाही, परन्तु वह इसमें सफल न हो सके। इनके चित्रों में भावनाओं की कमी है क्योंकि इसकी शैली पाश्चात्य शैली रही है। किसी ने स्वयं प्रयत्न भी नहीं किया। श्री चुगताई की गणना ऐसे चित्रकारों में है जिन के चित्रों में ईरानी शैली की झलक है।

इनके अतिरिक्त देश में निम्नलिखित आर्ट के स्कूल और हैं —

(1) बंगाल व बम्बई का मिला जुला स्कूल आव आर्ट।
(2) गुजरात का स्कूल आव आर्ट।
(3) लखनऊ स्कूल आव आर्ट।
(4) जयपुर स्कूल आव आर्ट।
(5) मद्रास स्कूल आव आर्ट।
(6) बंगाल स्कूल आव आर्ट।

इन स्कूलों में सम्बन्धित चित्रकार अपने-अपने दृष्टिकोणों से अपनी अपनी कलाओं की उन्नति कर रहे हैं।

प्रश्न

1 बंगाल स्कूल की कला की मुख्य विशेषताओं का वर्णन करो।
2 बम्बई स्कूल की कला में भारतीय जीवन नहीं है। इस पर अपनी राय दो।
3 बंगाल स्कूल ऑव आर्ट के विषय में पूर्ण रूप से लिखो।
4 बम्बई स्कूल आव आर्ट की चित्रकला की विशेषताओं पर प्रकाश डालो

अध्याय 18

आधुनिक भारतीय चित्रकला

श्री भूलाराम का देहान्त होने पर उत्तरी भारत में भारतीय चित्रकला की प्राचीन परम्परा का भी अन्त-सा हो जाता है। चित्रकला के विद्वानों का कथन है कि श्री भूलाराम का देहान्त सन् 1833 ई० में हुआ।

दक्षिण, औरंगजेब के समय से ही, चित्रकला का केन्द्र बन गया था। जब उत्तरी भारत में चित्रकला का पतन हुआ तब चित्रकार दक्षिण की ओर चले गये जहाँ उनकी कला का आदर हुआ। सन् 1848 ई० में दक्षिण भारत में त्रावणकोर के राजा श्री रवि वर्मा के उदय के साथ आधुनिक भारतीय चित्रकला का भी उदय कहा जाता है। रवि वर्मा ने अपने जीवन का कार्य प्राचीन भारतीय कला की उन परम्पराओं की उपेक्षा करते हुए आरम्भ किया जिनमें दक्षिण भारत के तत्कालीन मन्दिरों के भी कुछ चित्र रचना का मिलते है।

इस समय की चित्रकारी के विषय में अर्द्धेन्दु कुमार गंगुली के शब्द को पढ़िए। आप वर्तमान काल के एक प्रसिद्ध चित्रकार हैं।

सन् 1833 ई० में उत्तरी भारत में भारतीय चित्रकला की प्राचीन परम्परा के अन्तिम प्रतिनिधि भूलाराम की मृत्यु और सन् 1848 ई० में दक्षिण भारत में त्रावणकोर के राजा रवि वर्मा के उदय के साथ आधुनिक भारतीय चित्रकला के आधुनिक काल का उदय माना जाता है। रवि वर्मा ने अपने जीवन का कार्य प्राचीन भारतीय चित्रकला की उन परम्पराओं की उपेक्षा करते हुए आरम्भ किया जिनको दक्षिण भारत के तत्कालीन मन्दिरों के भित्ति चित्रों के अवशेषों में पाया जा सकता था। इस आधुनिक कलाकार ने उन परम्पराओं से सर्वथा मुँह मोड़ लिया और अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिए उसने परिश्रम के साथ पाश्चात्य चित्रकला की नैसर्गिक अभिव्यक्ति का अनुकरण करना आरम्भ किया। उसने [illegible] स्तर पर [illegible] के समान कार्यारम्भ किया और यूरोपियन स्टूडियोज की कला को अपनाया और

परम्परागत भारतीय चित्रकला के आदर्शों व विशेषताओं उसकी शैलियों और अभिव्यक्ति की कल्पनात्मक प्रणालियों की उपेक्षा की।'

जब राजा रवि वर्मा ने भारतीय गाथाओं की अभिव्यक्ति यूरोप से उधार ली गई चित्र भाषा में करना आरम्भ किया तो उन्हें यह विदित न था कि शताब्दियों पहले से इन गाथाओं की अभिव्यक्ति महान गुजराती, राजस्थानी तथा पहाड़ी चित्रकला शैलियों के अनुयायियों के द्वारा की जा चुकी है। इन अभिव्यक्तियों से लोग भली भाँति परिचय थे और वे उन्हें आदर तथा आनन्द की दृष्टि से देखते थे। दूसरी ओर विदेशी चित्रकला के अन्धानुकरण के साथ भारत अनुकरणकर्ता ने तत्कालीन यूरोपियन चित्रकला के सर्वोत्तम रूपों का परिचय उस रूप में न प्राप्त किया जिस रूप में वे अपने जन्म स्थान में प्राप्त थे। इस नये कलाकार ने कलात्मक अभिव्यक्ति की नई प्रणाली का तो अपनाया पर इससे लोगों को समकालीन अंग्रेजी फ्रेंच या डच चित्रकला का अध्ययन करके कला के प्रमाणित आदर्शों को अपनाने का अवसर न मिल सका। कलकत्ता में भारतीय पौराणिक गाथाओं को चित्रित करने वाले बंगाली कलाकारों के सम्मुख मूक नाट्य के रूप में भारतीय परम्परा का परिचय मिलता रहा। यद्यपि वे राजकीय स्कूल आव आर्ट से काफी प्रभावित थे परन्तु राजा रवि वर्मा ने कथाकलि और भरतनाट्यम द्वारा प्रस्तुत कलात्मक शैली से कोई लाभ न उठाया और अपने या अज्ञात पौराणिक नायक नायिकाओं की भव्य अभिव्यक्ति से मुँह मोड़ा। अतः उनके पौराणिक चित्रों की जो आलोचना हुई वह कठोर होते हुए भी औचित्यपूर्ण है। कुमार स्वामी के कथनानुसार पवित्र और पौराणिक विषयों को चित्रित करने में रवि वर्मा के गम्भीर भावों के अन्तर्गत नाटकीय निर्धारण के परा शक्ति का अभाव और भारतीयता की भावना का न होना है। गम्भीर या पौराणिक विषयों की गर्भित [illegible] के साथ अभिव्यक्ति न करना अक्षम्य दोष है। उनके चित्र [illegible] हैं जिन्हें पाश्चात्य चित्रकला का कोई भी विद्यार्थी आवश्यक शास्त्रीय [illegible] और भारतीय जीवन के सामान्य अध्ययन द्वारा अंकित कर सकता था।"

प्रायः दो पीढ़ियों तक भारतीय चित्रकला के क्षेत्र पर यूरोपियन चित्रकला का [illegible] विषय परिपाटी का छिछला अनुकरणात्मक यथार्थवाद का प्रभाव रहा। इस चुनौती का उत्तर बंगाल के कलाकार थे डा० अवनीन्द्रनाथ टाकुर। उन्होंने

सन् 1866 ई० के लगभग अपनी आवाज उठाई। उस समय तक कलकत्ता के गवर्नमेंट स्कूल ऑफ आर्ट के प्रिंसिपल और गवर्नमेंट आर्ट गैलरी के क्यूरेटर हैवेल साहब ने भी भारतीय चित्रकला की परम्पराओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया था और कलकत्ता आर्ट गैलरी में प्रदर्शित दूसरी और तीसरी श्रेणी के यूरोपीय चित्रों को हटाकर उनके स्थान पर उन्होंने मुगल और राजस्थानी चित्रकला के सर्वोत्तम भारतीय चित्रों को रखा था।

प्राचीन भारत तथा अन्य एशियाई देशों की अपनी चित्रकला का अध्ययन करने के बाद अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने उसे आधुनिक भारत की आवश्यकताओं के अनुकूल बनाना आरम्भ किया। वस्तुतः भारतीय चित्रकला की परम्परा के अनेक सूत्र जो कालान्तर में गुम हो गये थे बौद्ध चित्रकला के चीनी व जापानी कलाकारों की कृतियों में पुनः प्राप्त कर लिये गये। अवनीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा संगृहीत चीनी और जापानी चित्रों द्वारा उन्हें अवगमित तत्त्वों की प्राप्ति हुई जिनकी सहायता से उन्होंने आधुनिक भारतीय चित्रकला की शैली का गठन कर डाला लेकिन उनकी नवीन शैली के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तत्त्व यूरोप से आये। उन्होंने पाश्चात्य चित्रकला के विभिन्न स्कूलों का व्यापक और विवेचनात्मक अध्ययन करना आरम्भ किया। वहाँ के कलाकारों के अंकन और रंगों के सम्मिश्रण के सिद्धान्तों को अपनाया तथा इसी प्रकार के अन्य विवरणों का ग्रहण किया जिनको उन्होंने आधुनिक भारतीय चित्रकला के लिए बिना उसके आधारभूत रूप को बदले हितकर समझा। यह समझना भूल होगा कि अवनीन्द्रनाथ ठाकुर भारत में प्राचीन कला रूपों के पुनरुद्धारक मात्र थे। वे प्राचीन कला रूपों को दुहराते नहीं, लेकिन सामर्थ्य के साथ भारतीय कला के आधारभूत मूल सिद्धान्तों की खोज करते हैं और उनका नई दिशाओं में विकास करते हैं।

मुगलकालीन लघु चित्रों की सर्वोत्कृष्ट विशेषताओं को अपनाकर उन्होंने उस मरणासन्न शैली को नया जीवन दिया जो प्रायः आधी शताब्दी से प्राचीन पद्धतियों का दुहरान तक ही सीमित रह गई थी। अवनीन्द्रनाथ की कला में कल्पना शक्ति विषयों के चुनाव और शैलियों की इतनी विविधता है कि उनकी कला-कृतियों का सर्वग्राही दृष्टि बिन्दुओं की एक प्रमुख विशेषता के अन्तर्गत वर्गीकरण नहीं किया जा सकता और उनकी कृतियों पर कोई एक आम अखिल

परम्परागत भारतीय चित्रकला के आदर्शों व विशेषताओं, उसकी शैलियों और अभिव्यक्ति की कलात्मक प्रणालियों की उपेक्षा की।'

जब राजा रवि वर्मा ने भारतीय गाथाओं की अभिव्यक्ति यूरोप से उधार ली गई चित्र भाषा में करना आरम्भ किया तो उन्हें यह विदित न था कि शताब्दियों पहले से इन गाथाओं की अभिव्यक्ति महान गुजराती, राजस्थानी तथा पहाड़ी चित्रकला शैलियों के अनुयायियों के द्वारा की जा चुकी है। इन अभिव्यक्तियों से लोग भली भाँति परिचित थे और वे उन्हें आदर तथा आनन्द की दृष्टि से देखते थे। दूसरी ओर विदेशी चित्रकला के अन्धानुकरण के साथ साथ अनुकरणकर्ताओं ने तत्कालीन यूरोपियन चित्रकला के सर्वोत्तम रूपों का परिचय उस रूप में न प्राप्त किया जिस रूप में वे अपने जन्म स्थान में ज्ञात थे। इस नये कलाकार ने कलात्मक अभिव्यक्ति की नई प्रणाली को जो अपनाया पर इससे लोगों को समकालीन अंग्रेजी, फ्रेंच या डच चित्रकला का अध्ययन करके कला के प्रमाणित आदर्शों को अपनाने का अवसर न मिल सका। कलकत्ता में भारतीय पौराणिक गाथाओं को चित्रित करने वाले बंगाली कलाकारों के सम्पूर्ण मूक नाट्य के रूप में भारतीय परम्परा का परिचय मिलता रहा। यद्यपि वे राजकीय स्कूल आफ आर्ट से काफी प्रभावित थे परन्तु राजा रवि वर्मा ने यथार्थवादिता और भारतनाट्यम द्वारा प्रस्तुत कल्पना किया से कोई लाभ न उठाया और जाने या अनजाने पौराणिक नायक नायिकाओं की भव्य अभिव्यक्ति से मुँह मोड़ा। अतः उनके पौराणिक चित्रों की जो आलोचना हुई वह कठोर होते हुए भी औचित्यपूर्ण है। कुमार स्वामी के कथनानुसार "पवित्र और पौराणिक विषयों को चित्रित करने में रवि वर्मा के गम्भीर दोषों के अन्तर्गत नाटकीय निर्धारण, कल्पना शक्ति का अभाव और भारतीयता की भावना का न होना है। गम्भीर या पौराणिक विषयों की समुचित भव्यता के साथ अभिव्यक्ति न करना अक्षम्य दोष है। उनके चित्र ऐसे हैं जिन्हें पाश्चात्य चित्रकला का कोई भी विद्यार्थी आवश्यक शास्त्रीय के पठन और भारतीय जीवन के सामान्य अध्ययन द्वारा अङ्कित कर सकता था।"

प्राय दो पीढ़ियों तक भारतीय चित्रकला के क्षेत्र पर यूरोपियन चित्रकला की एक विशेष परिपाटी, की छिछली अनुकरणात्मक यथार्थवाद का प्रभाव रहा। इस मुहीम के नेता कलाकार थे डा० अवनीन्द्रनाथ ठाकुर। उन्होंने

सन् 1866 ई० के लगभग अपनी आवाज उठाई। उस समय तक कलकत्ता के गवर्नमेंट स्कूल आव आर्ट के प्रिंसिपल और गवर्नमेंट आर्ट गैलरी के क्यूरेटर हैवेल साहब ने भी भारतीय चित्रकला की परम्पराओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया था और कलकत्ता आर्ट गैलरी में प्रदर्शित दूसरी और तीसरी श्रेणी के यूरोपीय चित्रों को हटाकर उनके स्थान पर उन्होंने मुगल और राजस्थानी चित्रशैली के सर्वोत्तम भारतीय चित्रों को रखा था।

प्राचीन भारत तथा अन्य एशियाई देशों की अपनी चित्रकला का अध्ययन करने के बाद अवनीन्द्रनाथ टैगोर ने उसे आधुनिक भारत की आवश्यकताओं के अनुकूल बनाना आरम्भ किया। वस्तुतः भारतीय चित्रकला की परम्परा के अनेक सूत्र जो कालान्तर में गुम हो गये थे बौद्ध चित्रकला के चीनी व जापानी कलाकारों की कृतियों में पुनः प्राप्त कर लिये गये। अवनीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा संगृहीत चीनी और जापानी चित्रों द्वारा उसे अपरिमित तत्वों की प्राप्ति हुई जिनकी सहायता से उन्होंने आधुनिक भारतीय चित्रकला की शैली का गठन कर डाला। लेकिन उनकी नवीन शैली के सबसे अधिक महत्वपूर्ण तत्व यूरोप से आए। उन्होंने योरोपियन चित्रकला के विभिन्न स्कूलों का व्यापक और विश्लेषणात्मक अध्ययन करना आरम्भ किया। वहीं के कलाकारों के अंकन और रंगों के सम्मिश्रण के सिद्धान्तों को अपनाया तथा इसी प्रकार के अन्य विवरणों का ग्रहण किया जिनको उन्होंने आधुनिक भारतीय चित्रकला के लिए बिना उसके आधारभूत रूप को नष्ट किए हितकर समझा। यह समझना भूल होगी कि अवनीन्द्रनाथ टैगोर भारत के प्राचीन कला रूपों के पुनरुद्धारक मात्र थे। वे प्राचीन कला रूपों का दुहराना नहीं, लेकिन साहस के साथ भारतीय कला के आधारभूत कुछ सिद्धान्तों को ग्रहण करते हैं और उनका नई दिशाओं में विकास करते हैं।

मुगलकालीन लघु चित्रों की सर्वोत्कृष्ट विशेषताओं को अपनाकर उन्होंने उस सशक्त शैली को नया जीवन दिया जो प्रायः आधी शताब्दी से प्राचीन पद्धतियों का अनुकरण मात्र ही सीमित रह गई थी। अवनीन्द्रनाथ की कला में कल्पना शक्ति विषयों के चुनाव और शैलियों की इतनी विविधता है कि उनकी कला-कृतियों को सरसरी दृष्टि से किन्हीं की एक प्रमुख विशेषता के अन्तर्गत वर्गीकृत नहीं किया जा सकता और उनकी कृतियों पर कोई एक आम लेबिल

रंगों समझना प्रायः असम्भव है। यह प्रायः असम्भव सा प्रतीत होता है कि मेघदूत, उमर खय्याम और ऋतुजव तथा गणेश जननी और अन्तिम यात्रा जैसे एक दूसरे से सर्वथा विपरीत शैली, कल्पना शक्ति, स्थानीयता और वातावरण में अङ्कित चित्र एक ही कलाकार की कृतियाँ हैं। उनके चित्रों की जो सस्ती तिरंगी प्रतिलिपियाँ प्राप्य हैं उनके द्वारा रेखाओं के उस सूक्ष्म सौन्दर्य और रंगों के मिश्रण का रहस्यमय आनन्द कदापि व्यक्त नहीं हो पाता जो मूल चित्रों में मिलता है। उनकी कला शिक्षा की यह विशेषता होती है कि वे अपने किसी भी विद्यार्थी को अपनी शैली से प्रभावित होने या उसका अनुकरण करते देखकर उसे डाँट धमका देते हैं और समझाते हैं कि प्रत्येक को अपना अपना मार्ग पृथक् बनाना चाहिए जो उसकी चित्त-वृत्ति एवं उसकी क्षमताओं के अनुकूल हो।

अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के मेधावी शिष्य नन्दलाल बसु ने मध्ययुगीन शिल्प कला की सर्वोत्तम कृतियों की ओर ध्यान दिया और उनमें ऐसी शैलियों और कलारूपों को ढूँढ निकाला जिनका उपयोग उन्होंने शिव सम्बन्धी गाथाओं के चित्रण के क्षेत्र में प्रचुरता से किया और ऐसे नये कलारूपों का आविष्कार किया जो प्राचीन भारतीय शिल्प-कला के प्रतिरूप मात्र नहीं हैं। उन्होंने अपने गुरु के समान मुगल शैली के प्रयोग को नहीं अपनाया तथापि भारतीय कला के सर्वोत्तम रूपों में जो कुछ महान है उसे उन्होंने नवीन उच्चताओं तक पहुँचाया। शिव की अभिव्यक्ति द्वारा स्पष्ट हो जाता है कि शिव गाथाओं के सम्बन्ध में उनकी धारणा वस्तुतः अलौकिक है और उस लौकिक स्तर से बहुत दूर है जो काँगड़ा चित्र शैली के लघु चित्रों में निहित है और जिसका आधार सुपरिचित प्रेम कथाएँ हैं। उनका महादेव का चित्र लोक-कथाओं के नायक का चित्र नहीं है न वह किसी सम्प्रदाय विशेष के उपास्य देव का चित्र है, वह तो महान आधारभूत सत्यों का प्रतीकात्मक चित्रण है। यह उन शिव का चित्र है जो प्रकृति की विध्वंसात्मक शक्ति के अवतार हैं, जो ध्यान योगी हैं जो शान्ति और सद्इच्छा की मूर्ति हैं अथवा जो भारतीय जातीय आदर्शों के समन्वय स्वरूप हैं। चित्रकार नन्दलाल ने मानव आकृति के अङ्कन की प्राचीन भारतीय परिपाटी को नया रूप देते हुए उसमें चीन की उस कला का समावेश किया है जिसके अन्तर्गत सबल रेखाओं द्वारा आकृतियों का संकेत किया जाता है

और पाश्चात्य चित्र-गृहों में प्रयुक्त माडलों में छायाओं का अवलम्बन नहीं लिया है। रथीन्द्र चक्रवर्ती, जो इस समय कलकत्ता के गवर्नमेण्ट स्कूल ऑव आर्ट के प्रिंसिपल हैं कुछ समय तक फ्रांस में रह चुके हैं और अपनी निजी पद्धति को उन्होंने नवीनतम फ्रांसीसी चित्रकला के अध्ययन द्वारा विकसित किया है। फ्रेंच इम्प्रेशनिस्ट शैली पर चित्रित उनके कुछ नैसर्गिक चित्रों से यह सिद्ध हो जाता है कि भारतीय कलाकारों में यूरोपियन पद्धतियों को अपनाकर सफलता प्राप्त करने की उतनी ही क्षमता है जितनी परम्पराओं को अपनाकर सफल होने में।

बंगाल के कुछ प्रतिभाशाली चित्रकारों ने अवनीन्द्रनाथ ठाकुर की कला परम्परा से सम्बन्ध स्थापित किए बिना भी आधुनिक भारतीय चित्रकला के विकास में योगदान दिया है। इनमें से सबसे अधिक प्रतिनिधि चित्रकार गगनेन्द्रनाथ ठाकुर हैं जो साहसिक आधुनिकता से युक्त एक एक्सप्रेशनिस्ट चित्रकार हैं। उन्होंने बाद को छाया और प्रकाश के विश्लेषण की स्वतन्त्र पद्धति को विकसित करके क्यूबिस्ट कला की एक नई शैली को जन्म दिया और पाश्चात्य क्यूबिस्टों का अनुकरण किए बिना ही छाया और प्रकाश के मेल से पूर्ण भारतीय दुनिया का अंकन किया।

अवनीन्द्रनाथ की परम्परा से बाहर के दो अन्य कलाकार हैं—(1) सुनयनी देवी, और (2) यामिनी राय, जिन्होंने बंगाल की लोक-कला की परम्पराओं और पट चित्रकारी का लाभ उठाया है और उनके आधार पर नये प्रयोग किए हैं, यद्यपि इन कलाकारों ने प्राचीन बुनियादी basic पद्धतियों के प्रति प्रायः अन्ध श्रद्धा प्रदर्शित की है। सुनयनी देवी की दुनिया में जो बंगाल की प्राचीन लोक कला की परम्परा के अन्तर्गत आती है भाव भाषा की बड़ी गहराई और गम्भीर आध्यात्मिक अनुभूतियों का समावेश है। इनमें यामिनी राय की कृतियों के समान प्राचीन पद्धतियों की चतुराईपूर्ण किन्तु यन्त्रवत् पुनरावृत्ति नहीं है। यामिनी राय की इन आवृत्तिमूलक दुनिया में ऊपरी सजावट का आकर्षण तो है पर कोई नया स्पन्दन या नई भावना नहीं है।

कुछ लोगों ने प्राचीन भारतीय भित्ति चित्रों की परम्परा को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया है। इन लोगों ने शैली तथा अभिव्यक्ति की प्रणालियों

सम्बन्धी प्रयोग किए हैं। प्रतिस्पर्धा और विरोध के बीच फजी और रहमान ने सोलोमन द्वारा आरम्भ किए गये बम्बई आर्ट स्कूल के कलाकारों को चुनौती दी। रहमान द्वारा चित्रित नई दिल्ली असम्बली के भित्ति चित्र प्रगत्यात्मक सौन्दर्य से युक्त हैं यद्यपि उनमें शक्ति और गाम्भीर्य की कुछ कमी है।

स्कूल आव आर्ट भित्ति चित्र जो स्कूल ऑव आर्ट के विद्यार्थियों द्वारा बम्बई गवर्नमेण्ट हाउस में बनाए गये हैं बोझिल और यत्नसाध्य दिखाई देने वाले मन्द चित्र हैं। उनमें अभिव्यक्ति की कोई नवीन शक्ति प्रदर्शित नहीं होती न उनमें नवीनता की झलक है। वे केवल अजन्ता के चित्रों की नकल हैं। इन भारतीय भित्ति चित्रों की तुलना में लन्दन के इण्डिया हाउस में अवनीन्द्र नाथ ठाकुर के अनुयायी रणदा उकील, सुधांशु राय तथा एल० एम० सेन द्वारा अङ्कित भित्ति चित्रों में प्राचीन परम्परा को नवीनता प्रदान करने में उल्लेखनीय सफलता मिली है। नन्दलाल बसु द्वारा बड़ौदा में अङ्कित भित्ति चित्र एक समान उच्च कोटि के नहीं हैं फिर भी वे संयमित और सूक्ष्म सौन्दर्य के नमूने हैं और उनमें भित्ति चित्रों की आवश्यक विशेषता मौजूद है अर्थात् बिना टैकनिक का प्रदर्शन किए सरल ढंग में एक कथा को प्रस्तुत करना।

श्री रविशंकर रावल के साहसिक नेतृत्व में और उनकी उत्साहप्रद प्रेरणा से कार्य करने वाले अहमदाबाद ग्रुप के कलाकारों ने बंगाल के सहयोगी कलाकारों का अनुकरण किए बिना अपने नये मार्ग का निर्माण करने का प्रयत्न किया है। अभी इस ग्रुप द्वारा इतना समन्वयात्मक कार्य नहीं किया जा सका है कि उससे किसी नवीन परम्परा का जन्म हो सके रविन् रसिकलाल पारीख वाई० के० शुक्ल और सोमलाल शाह जैसे कलाकारों की कृतियाँ वास्तव में सर्वोत्तम कला के उदाहरणों के रूप में उपस्थित की जा सकती हैं।

बम्बई कला केन्द्र। ये अनेक चित्रकार हैं जिन्होंने स्पष्टतः भारतीय कला धारा का परित्याग किया है—यूरोप की यथार्थवादी प्रणाली और शैली को अन्तर्राष्ट्रीय आदान प्रदान के माध्यम के रूप में अपनाया है। इनमें से कुछ ने नव विश्व धारा को सफलता और सरलता के साथ अपनाया है, मानो वह स्वयं उनका अपना माध्यम हो। पश्चिमी प्रणालियों के इन अनुयायियों में एन० एम० केलकर, टी० पी० जाग, पी० ए० मानी, वी० डी० चिंचालकर और के० के० हेब्बर के प्रयत्न प्रशंसनीय हैं। हेब्बर की पश्चिमी चित्रकला शैली में

ता सफलता मिली ही है भारतीय शैली में कलाकृतियों की अभिव्यक्ति से भी उन्होंने मुँह नहीं मोड़ा और उन्होंने कलाभिव्यक्ति के दोनों परस्पर विरोधी माध्यमों के समन्वय का प्रयत्न किया है।

अनेक ऐसे विशिष्ट कलाकारों का नाम भी उल्लेखनीय है जिन्होंने यूरोप की आधुनिक कला शैलियों को पूर्णतः अपनाया है। सीलोन के जार्ज कीट और बंगाल की शीला ऑडेन इसी श्रेणी के कलाकार हैं। अमृता शेर गिल को भी इसी श्रेणी में माना जा सकता है। इस दृष्टिकोण से दिल्ली के शैलोज मुखर्जी ने प्रायः फ्रांसीसी इम्प्रेशनिस्ट शैली में भारतीय विषयों को प्रस्तुत किया है। उनकी कुछ नवीनतम कलाकृतियों में राजपूत दृश्यों और प्रकरणों को व्यक्त किया गया है यद्यपि राजपूत शैली नहीं अपनाई गई।

इसी सम्बन्ध में सुसंगठित कलकत्ता ग्रुप की ओर हमारा ध्यान अनिवार्यतः आकर्षित हो जाता है। इस ग्रुप के कलाकार पूर्णतः आधुनिक दृष्टिकोण के हैं। इनमें सुभो टैगोर, रथीन मित्र, गोपाल घोष, प्राणकृष्ण पाल और प्रदोषदास गुप्त के नाम उल्लेखनीय हैं। ये लोग प्रकृतिवादी और अन्य सामान्य विचारधाराओं से प्रतिकूल मत रखते हुए उन कुछ यूरोपियन पोस्ट इम्प्रेशनिस्ट कलाकारों के साथ हैं जो प्रकृति के मधुर और यथावत् चित्रणों से मुँह मोड़कर उनकी आत्मनिष्ठ अभिव्यक्ति या विकृतिपूर्ण चित्रण पर विश्वास करते हैं, जिससे प्रकृति के विशाल सम्पन्न यथावत चित्रण से दूर हटकर मनानुकूल भावात्मक अभिव्यक्ति की जा सके। इस मत के कलाकार जिन तीन बातों को पकड़ कर चलते हैं वे हैं—विकृति, आत्मनिष्ठ अभिव्यक्ति और अर्थ-भावहीन रंगों का मनमाना सम्मिश्रण। उनकी कृतियों की दूसरी विशेषता है सामान्य विषयों और वस्तुओं का चुनाव और भावुक, धार्मिक या पौराणिक अथवा भारतीय सांस्कृतिक परम्परा से सम्बन्धित विषयों से बचाव। कलकत्ता ग्रुप के विरोध का महत्वपूर्ण और दूसरा भाग यह है कि कला की भारतीय अभिव्यक्ति जैसी कोई चीज नहीं है। यह ग्रुप ऐसी किसी अभिव्यक्ति को या राष्ट्रीय आधार पर विभिन्न शैली का स्वीकार नहीं करता। इन्हीं विचारों को रखने वालों में जार्ज कीट, अमृता शेर गिल, शैलोज मुखर्जी, प्राणनाथ मागो तथा बहुत अन्य कलाकार हैं। इनका कहना है कि कला नवीन सांस्कृतिक राष्ट्रीयता के क्षेत्र से ऊपर है और वस्तुतः वह अन्तर्राष्ट्रीय

और सार्वभौम हैं। कला की बुनियादी भाषा वे रेखाएँ और रंग हैं जिन्हें प्रत्येक जाति राष्ट्र और देश द्वारा समझा जा सके। अतः इस वर्ग के आधुनिक कलाकार परम्परागत भारतीय कलाभिव्यक्ति का साहसपूर्वक तिरस्कार करते हैं और भारत की सर्वोत्तम कलाकृतियों की ओर वे प्रेरणा के लिए नहीं देखना चाहते। अपने इस विचित्र तर्क के साथ वे जान-बूझ कर यूरोप से आई हुई विश्वकला भाषा को अपनाते हैं परन्तु साथ ही यह कहा जा सकता है कि भारतीय और एशियाई संस्कृति के मूल सिद्धान्तों की सम्भावनाओं का अन्त नहीं हो गया है। पूर्व और पश्चिम एवं नवीन और प्राचीन में जो कुछ सर्वोत्तम है उसके अनिवार्य समन्वय द्वारा कला के क्षेत्र में भारत का अभिनव योगदान यदि अधिक नहीं तो कम से कम उतना तो हो ही सकता है जितना उसने स्वर्णिम अतीत में था।

प्रश्न

1 आधुनिक भारतीय चित्रकला की मुख्य मुख्य बातों का वर्णन करो।

2 अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने भारतीय चित्रकला को पतन से बचाया। इस पर अपनी राय दो।

अध्याय 19

भारतीय चित्रकला के कुछ चित्रकार

जब हम कला का अध्ययन करते हैं तो हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम उन कलाकारों के विषय में जानें जो कलारूप गगन के चमकदार सितारे हैं जिनके प्रयत्नों से कला उन्नति-पथ पर चल रही है। इस समय भारत में चित्रकला के छः मुख्य केन्द्र हैं जहां कला की उन्नति के लिए कलाकार प्रयत्न कर रहे हैं। इन कला-केन्द्रों के नाम इस प्रकार हैं—

(1) बंगाल स्कूल आॅव आर्ट (2) बम्बई स्कूल आॅव आर्ट, (3) बंगाल व बम्बई स्कूलों का मिला जुला स्कूल आॅव आर्ट (4) गुजरात स्कूल आॅव आर्ट, (5) लखनऊ स्कूल आॅव आर्ट और (6) जयपुर स्कूल आॅव आर्ट।

सब स्कूलों के कलाकार विविध विषयों पर अपनी कला का प्रदर्शन कर रहे हैं। इससे जनता को बड़ा लाभ पहुँचेगा और प्रत्येक स्कूल की कला का पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो जायगा।

(1) बंगाल स्कूल आॅव आर्ट

जिस समय बम्बई स्कूल के चित्रकार यह समझने लगे कि भारतीय चित्रकला में कुछ नहीं है और वह बिल्कुल शून्य है इसकी ओर ध्यान देना अपना समय नष्ट करना है, धीरे धीरे इस विचार की उन्नति होने लगी और चित्रकारों ने विदेशी चित्रों को अपनाया। जब इस विचार का विस्तार बहुत बढ़ गया तो कुछ चित्रकारों ने इसके विरुद्ध आवाज उठाई और भारतीय चित्रकला के गुण गाये। उन चित्रकारों में अवनीन्द्रनाथ ठाकुर का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है।

स्वर्गीय अवनीन्द्रनाथ ठाकुर—अवनीन्द्रनाथ ठाकुर भारत के सर्वोच्च कोटि के चित्रकार थे। उनकी कला का सब ही आदर करते हैं। बहुत ही कम ऐसे चित्रकार हैं जो अपने चित्रों के विषय में निपुण हैं। आपने कला को जो कुछ

लिया उसका उद्धार भारत के प्रसिद्ध कवि तथा महान चित्रकार रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शब्दों में पढ़िये। जब मैं यह सोचता हूं कि बंगाल में सबसे अधिक सम्मान का अधिकारी कौन है तो मेरे सामने पहला नाम अवनीन्द्रनाथ ठाकुर का आता है। उन्होंने देश को आत्महनन के पाप से बचा लिया। उन्होंने उसे पतन और ग्लानि के गहरे गर्त से निकालकर वह सम्मानपूर्ण स्थान दिलाया जिसका वह अधिकारी था। अब तक मानवता ने जो श्रेष्ठता प्राप्त की है और उसमें भारत की जो देन है उन्होंने उसको अच्छी तरह दिखाया है। उन्होंने देश की कला में चेतना को पुनः जाग्रत कर एक नवीन युग को आरम्भ किया, उन्हीं से भारत ने अपने विस्मृत अतीत के गौरव का नवीन पाठ पढ़ा है। इस प्रकार अपनी कला कृतियों से उन्होंने अपनी जन्मभूमि को एक गर्व और गौरव का स्थान दिलाया है।'

भारत के धूमिल क्षितिज पर अवनीन्द्रनाथ ठाकुर का उदय एक ऐसे प्रकाश के रूप में हुआ जिसने न केवल देश को कला की जोत दी बल्कि विदेशी दासता और संस्कृति के आक्रमणों से त्रस्त व्यस्त और धूमिल भारत की कला आत्मा को पहचानने की दृष्टि और सृजन तथा उत्थान की गौरवशाली प्रेरणा भी दी। भारत में स्वदेशी आन्दोलन से पहले हर ओर अंग्रेजियत छाई हुई थी। भारत की कला पर भी विदेशी कला का बड़ा प्रभाव पड़ा था। राष्ट्र की भावना के साथ-साथ भारत की चित्रकला जाग उठी। चित्रकला के क्षेत्र में इसका भारी प्रभाव पड़ा। अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने चित्रों में भारतीय भावनाओं को भर दिया। उनके चित्रों ने देश के निवासियों पर जादू जैसा प्रभाव डाल दिया। इनके चित्रों में प्राचीन अजन्ता एलोरा राजपूत मुगल कांगड़ा आदि की झलक ही दिखाई नहीं बल्कि इनके चित्रों में एक नवीन ताजगी भरी है। इनके चित्रों में न पूर्व की शैलियों की नकल है और न यूरोप की शैलियों का समन्वय ही गई है। यह कहना उचित होगा कि इनसे भारत कला की परम्परा का नवीन रूपान्तर कला की आत्मा का नवीन जागरण कल्पनाओं का नवीन निर्माण और भाव गम्भीरता की अभिनवता बन जाय। इस प्रकार भारत की चित्रकला का एक नया जन्म अवनीन्द्र ठाकुर के द्वारा हुआ।

आपके चित्रों में विरहणी भी पतिहारिन वियोगिनी नायिकायें, ध्यान

मग्ना मुग्धा पुजारिणी, प्रेयसी मयाल युवती पहाड़िन एक युवती, सखियाँ, द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर फाहियान एण्ड्रूज कापालिक नर्तक दम्पति अजा शाह जहाँ औरंगजेब रेगिस्तान में मछुआ बालक मयूर हिरण, बुढ़िया भक्त कबरा बन्दर और एक अरब माँझी के चित्र भारतीय कला के अमूल्य रत्न हैं।

कला क्षेत्र में श्री अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने मन की गहराइयों और कल्पनाओं को रंग और रेखाओं का अवलम्बन लेकर पन्नों पर अंकित किया है। तूलिका की एक नई भाषा को जन्म दिया है। चित्र की एक नई परिभाषा प्रस्तुत की और इस प्रकार कला की नई भूमिका को जन्म दिया और अन्तर्मन की सूक्ष्मता को ही उसकी सारी गहराइयों के साथ रूप देने का प्रयास किया। आधुनिकतम कैमरे का लेंस भी चेहरे की उन बारीकियों को नहीं दिखाता है जिन चेहरे की रेखाओं को इन्होंने अपने चित्रों में दिखाया है।

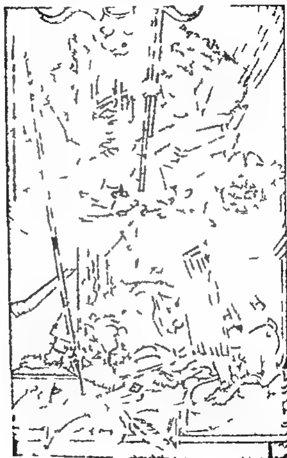
इस महान् चित्रकार की बारीकियों को विदेशी कलाकारों ने भी अपनाया है। आपने अध्ययन के साथ ही साथ रूप रंग आदि की बहुत खोज की है। परिणाम यह हुआ कि इन पिछले पचास वर्षों में भारतीय चित्रकला की रचना कल्पना रूप सज्जा अंग भाव सहगर्भ आदि सभी कुछ बदल गये और दूर पश्चिम के कलापारखी तक भारतीय चित्रकला का लोहा मानते हैं।

आप वृद्ध हो जाने पर भी जवान दिखाई देते थे। यह एक महान कलाकार की पहिचान है। आपकी कृतियों को सभी स्कूलों के कलाकार आदर की दृष्टि से देखते हैं।

नन्दलाल बसु—नन्दलाल बसु का कथन है कि "निजी संग्रहों में चित्रों की रक्षा का कुछ भरोसा नहीं। राष्ट्रीय संग्रह ही वस्तुतः उचित है। कलकत्ते में दो प्रमुख व्यक्ति चित्र प्रेमी थे, पर चित्रों का संग्रह करते रहे और डिब्बों में बन्द रहे। चित्रकार के लिए अपने चित्रों का पृथक् करना बड़ा दुखदायी होता है। यदि राष्ट्र के प्रतिनिधि मेरे चित्रों के विषय में उचित रीति से मुझे लिखते या कहते तो राष्ट्रीय संग्रहालय में उन्हें रखने का मेरा सपना पूरा हो जाता। चित्रों का मूल्य लेना मेरे लिए आनन्द का कारण नहीं। पर चित्रों की कुछ अनधिकृत प्रतिलिपियाँ बना ली हैं, उनके विषय में मुझसे पूछ लेते तो अच्छा था।" नन्दलाल बसु के चित्रों को देखकर श्री

चि० 10

वासुदेवशरण अग्रवाल ने इस प्रकार लिखा है मुझे याद है श्री नन्दलाल वसु द्वारा अंकित तप करती हुई पार्वती का पहले ही दिन की चित्र प्रदर्शनी



चित्र 13—नन्दलाल बसु द्वारा तैयार किया गया दुर्गा का चित्र

में लगाकर मैं गदगद हो गया था। उसकी स्मृति मेरे मन में इतनी ... इस चित्र में मुझे कालिदास कृत कुमार सम्भव के पांचवें सर्ग का

पार्वती के साक्षात् दर्शन मिले। अपने जीवन के तीस वर्षों में कालिदास की तपोनिष्ठ पार्वती का एक उज्ज्वल चित्र मेरे मन में भर गया था, आज भी वह अमर है। उस चित्र में पार्वती नहीं भारतीय संस्कृति स्वयं मूर्तिमती दिखाई देती है। वह संस्कृति विजयामयी है। चित्र में पार्वती पर्वतराज हिमालय के शिखरों के मध्य खड़ी है। पिता की अमर-गोद उन्हें प्राण शक्ति का दान करती हुई प्रतीत होती है। शिखरों के साथ उनका धूसर वर्ण एकाकार हो गया है। संकल्प की वज्रमयी दृढ़ता शिलाखण्डों में उनके चारों ओर साकार हो उठी है। अखण्ड समाधि—यही प्राण की एक मात्र साधना है। हृदय के पास रखे हुए हाथ में हरी दूब की एक पवित्री पहने हैं। श्वेत देह में वह हरित बिन्दु ही प्राण का सिमटा हुआ रूप जान पड़ता है। आप चित्रकार और शिल्पी संस्कृति के भावों को मूर्त रूप प्रदान किया करते हैं।

इनके चित्र अजन्ता चित्रों के समान सजीव हैं। उदाहरणार्थ दुर्गा का चित्र यहाँ दिया जाता है।

यामिनी राय—यामिनी राय की कला शैली उनके समस्त व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति है। वे कहते हैं कि "मैं गाँव का मनुष्य हूँ। बेलिया तोड़ गाँव में मेरा जन्म हुआ। कलकत्ता में आकर चालाकी सीख गया हूँ। वह गाँव की सीख तो चली गई। मेरे यहाँ विषय नहीं, चित्र का महत्व है। रंग और तूलिका का मेल है। यह चित्र अपनी रेखा एवं नवीन वातावरण उत्पन्न करेगा। मेरे पास एक ही राग है और एक ही मनोवृत्ति है। उसी को मैं चित्र का मुख्य विषय मानता हूँ। मेरी तस्वीर में कोई सजावट नहीं, टेकनिक नहीं बारीकी नहीं बस यह है जिसका मैं प्रेमी हूँ।'

'सच तो यह है कि पूरब और पश्चिम के बीच में रूप का कोई समझौता हो नहीं सकता। यह दो पागल हो उठे हैं। यहाँ लोग भ्रम को ज्ञान कहते हुए नाच नचाते। भारतीय कृति में नवजागरण और ओतप्रोत हो नहीं सकते यह विचार समाज में गुरु का सम्मिश्रण जमा है। हमारे मन में, रहन-सहन में, भोजन वसन में भारतीय स्वर की रचना होगी तभी हमारी संस्कृति व्यक्त होगी, और तभी हम मनुष्य कहलाने योग्य होंगे।'

कला की शिक्षा और आधार के विषय में यामिनी राय ने भारतीय शिल्प कला का समर्थन इस प्रकार किया है जैसे बच्चा माता की बोली सीखता है।

यामिनी राय कहते हैं : 'तस्वीर का पैसा जब मुझे कोई देता है तो मैं समझता हूं कि यह मेरी सजा है और मेरे नसीब में कुछ गड़बड़ है।'



चित्र 14—यामिनी राय की चित्रकारी का नमूना

श्री यामिनीराय की चित्रकारी का एक नमूना उदाहरणार्थ दिया जाता है।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर—श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर को भारत का बच्चा-बच्चा

जानता है। आप एक प्रसिद्ध कवि तथा कलाकार थे। आपने अपने चित्रों के विषय में जो कुछ लिखा है वह नीचे उद्धृत है।



चित्र 15—रवीन्द्रनाथ ठाकुर की चित्रकारी का नमूना

आप का कथन है "ललित कला सभी कलाओं में समाविष्ट है। मुझे ज्ञात होता है कि कला क्षेत्र में केवल रेखाएं और रंग कोई सत्य नहीं रखते हैं। चित्रों में भी उनका दर्शाया जाना आवश्यक होता है। उनका अन्तिम उद्देश्य किसी बाह्य तथा आन्तरिक कल्पना का चित्रण या प्रतिरूपण नहीं होना वरन् उनका प्रभाव रंग तथा मानसिक समझना का विकास होता है जो हमारे इन्द्रियों द्वारा हमारी कल्पना का ज्ञान होता है।

समस्त रेखाएं हमारी कल्पना के स्वातन्त्र्य में बाधक बनती हैं क्योंकि उनको मैं सीमित कर देता हूँ। मुझे इस बात में रुचि नहीं है कि रेखाएं किस प्रकार प्राण और बन्धन ग्रहण करती हैं कैसे उनके परस्पर सम्बन्ध

म विभिन्न अथ परिलक्षित होने हैं उम व सकेतों की भाषा म बोलने लगती हैं।

रचनाओं की पाण्डुलिपियों म प्राय काट-कूट और संशोधन की रेखाएँ रहा करती हैं मानो वे एकान्त अमलमनाए हो जो सौन्दय और सामजस्य के सिद्धान्तों के विरुद्ध मौज ले रही है। मानो व कोई अमिट अभिशाप लेकर उठ खडी हुई हैं। व समस्याओं का जन्म देती हैं और इसीलिए महान कलाकार विश्वकर्मा के रचना-कौशल का विषय बन जाता है।

कुछ रेखाए राग की अभिव्यक्ति करती हैं कुछ शान्त करुण की कुछ रेखाओं म ऐसा हास्य मुखरित हो जाता था जो किसी मुखाकृति की उपमा न रखता था।

जहाँ तक मेरे चित्रों का सम्बन्ध है मेरे चित्रों के मूल म कोई सीखी हुई कल्पना नहीं है। व किसी परम्परा या जानबूझ कर किय गये प्रयत्नों का प्रतिफल नहीं है। उनका जन्म तो हुआ है अनुपात की सहजात प्रवृत्ति से। रेखाओं और रगों के सामजस्यपूर्ण संधान म मेरी रुचि और प्रसन्नता है।

(2) बम्बई स्कूल ऑव आर्ट

जिस समय राजस्थानी पहाडी तथा मुगल शैलियों का पतन हो रहा था कुछ कलाकारों न बम्बई म आर्ट स्कूल खोला। इसके विद्यार्थियों ने भित्ति चित्रों म विशेष योग्यता प्राप्त करनी चाही परन्तु उसम असफल रहे। इस स्कूल के कलाकारों ने अजन्ता के चित्रों की विशेषताओं को अपने दृष्टिकोण म नहीं रखा। इनके चित्रों म भारतीय भावनाएँ नहीं हैं। य चित्रकार आरम्भ से ही पाश्चात्य शैलियों के प्रभाव रहे।

रवि वर्मा—रवि वर्मा ने अपने जीवन का काम प्राचीन भारतीय चित्रकला की उन परम्पराओं की उपेक्षा द्वारा एक आरम्भ किया जो दक्षिण भारत के तजौर मन्दिरों के भित्ति चित्रों म कुछ अंशों म पाई जाती थी। उन्होंने भारतीय कला की इस मान्यता से मुह मोडा और यूरोप की चित्रकला की शैलियों को अपनाना आरम्भ किया। उन्होंने अपनी परम्परागत भारतीय चित्रकला के आदर्शों एव विशेषताओं को छोडकर अपनी शैली और अभिव्यक्ति यूरोप म ढाल ली। उस यह विदित न था कि कलाकारों द्वारा म कथाओं की अभिव्यक्ति मध्ययुग गुजराती राजस्थानी तथा पहाडी चित्रकला

भावों व अनुभावों के द्वारा की जा सकी है। इस अभिव्यक्ति से लोग भली भाँति परिचित थे और वे उन्हें आदर तथा प्रसन्नता की दृष्टि से देखते थे दूसरी ओर विदेशी चित्रकला के अंधानुकरण के साथ-साथ अनुकरणवर्ती न तत्कालीन यूरोपियन चित्रकला के सर्वोत्तम रूपों का परिचय उस रूप में न प्राप्त किया जिस रूप में वे अपने जन्मस्थान में पाते थे। रवि वर्मा को यूरोपियन कला का अध्ययन का अवसर नहीं मिल सका।

रवि वर्मा स्त्री और पौराणिक रूप का ही चित्रण कर सके। सीता से लेकर सरस्वती तक उनकी सब देवियाँ महाराष्ट्रीय रूप की हैं। पुरुष चित्रों में भी महाराष्ट्रीय रूप हैं। आधुनिक चित्रकला के उत्थान में रवि वर्मा के चित्र घर-घर पहुँच गये। जनता रूप की कला पिपासा की ओर भी उभरी परन्तु उस पिपासा की परितृप्ति न हो सकी। रवि वर्मा ने अपने पूर्व चित्रकारों की शैली को अपनाया। रवि वर्मा ने श्रीकृष्ण आदि देवता और देवियों के चित्र बनाते समय भारतीय रंगों का प्रयोग नहीं किया।

जब श्री अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के चित्र जनता के सम्मुख आये तब जनता ने रवि वर्मा के चित्रों का आदर नहीं किया।

अमृत शेरगिल—अमृत शेरगिल को बचपन से ही चित्रकला का शौक था परन्तु सन् 1929 ई० में वह अपने माता पिता के साथ पेरिस चली गई। वहाँ उनकी चित्रकला की शिक्षा भी हुई। आपने पेरिस में नियमित शिक्षा ग्रहण की। कुछ काल तक स्वतन्त्र रूप से आत्म में ही काम किया जहाँ नाम मात्र तक इनके चित्रों को पुरस्कार मिलते रहे। उस समय स्वयं चित्रों की आकृतियाँ धारणा के आधार पर थे मौलिकता का उस समय उनको बिल्कुल ध्यान न था।

सन् 1934 में वह फिर भारत आई और उस समय वह विशुद्ध रूप से कल्पना के सहारे काम कर रही थी।

आप कहती हैं "मैं व्यक्तिवादिनी हूँ, और अपनी नई टेकनिक का विकास कर रही हूँ जो परिभाषी दृष्टि से स्वतन्त्र पर अनिवार्यतः भारतीय शैली नहीं है परिन्तु उसकी आत्मा बुनियादी तौर पर भारतीय है। रूप और रंग की भारतीय सार्थकता द्वारा मैं भारत को विशेषतः भारत के गरीब मानव का ऐसा रूप पर चित्रित करना चाहती हूँ जो केवल भावुकतापूर्ण रुचि से बहुत ऊँचा स्तर है।

जार्ज कीट—आप इस समय लङ्का में रह रहे हैं। आप एक अच्छे चित्रकार हैं। आपके चित्रों का रंग रूप ढाँचा सब विदेशी है। इस कारण कुछ विद्वान आपकी गिनती कला के दूसरे स्कूल में करते हैं।

शीला आडन—आप सिन्धी दुनिया की शौकीन हैं। आपके चित्रों में सिन्धी रंग रूप तथा भावना है। अब आप उस शैली के चित्र बनाती हैं जो श्री यामिनी राय का मुख्य विषय है।



शनज मुखर्जी—आप इस समय दिल्ली में रहते हैं। आपके चित्रों में फ्रांसीसी इम्प्रेशनिस्ट शैली की झलक दिखाई देती है। आपने भारतीय विषयों को भी प्रस्तुत किया है। आपने कुछ नवीन कलाकृतियों में राजपूत दृश्यों को बहुत अच्छे ढंग से बनाया है यद्यपि राजपूत शैली को नहीं अपनाया गया है।

प्राणनाथ मागव—आप एक अच्छे कलाकार हैं। आपके चित्रों में भारतीय तथा विदेशी शैली दोनों का रंग पाया जाता है। इनके चित्र बहुत सुन्दर हैं। अब आप अपने चित्रों में भारतीय भावनाओं को अधिक स्थान दे रहे हैं।

चित्र १ शीला आडन की चित्रकारी का नमूना

विशेषताएँ—इस स्कूल के कलाकार तीन बातों को मानते हैं—विकृत आकार, अभिव्यक्ति और अलंकार चमत्कार

वर्णों का मनमाना सम्मिश्रण। उनकी कृतियों की दूसरी विशेषता है सामान्य विषयों और माडलों का चुनाव और भावुक धार्मिक या पौराणिक अथवा भारतीय सांस्कृतिक परम्परा से सम्बन्धित विषयों से बचाव।

गुजरात स्कूल ऑव आर्ट

रविशंकर रावल के साहसिक नेतृत्व में उनकी उत्साहप्रद प्रेरणा से काम करने वाले अहमदाबाद दल के कलाकारों ने बिना बंगाल के सहयोगी कलाकारों का अनुकरण किए अपने नए मार्गों का निर्माण करने का प्रयत्न किया। अभी तक इस दल द्वारा इतना समन्वयात्मक कार्य नहीं किया जा सका है कि किसी नवीन परम्परा का जन्म हो सके। लेकिन रसिकलाल पारीख, वाई० के० शुक्ल और सोमलाल शाह जैसे कलाकारों की कृतियाँ वास्तव में सर्वोच्च कला के उदाहरण के रूप में उपस्थित की जा सकती हैं।

रसिकलाल—आप गुजरात स्कूल के उच्चकोटि के चित्रकार गिने जाते हैं। इनका विषय भारतीय है।

रविशंकर—आप गुजरात स्कूल के अच्छे कलाकार हैं। आप अपने शिष्यों को भारतीय विषयों का चित्रण करने की शिक्षा देते हैं। आप जो भी चित्र बनाते हैं वह गुजरात के कीमती सोना माने जाते हैं। आप एक नवीन शैली की खोज में हैं।

वाई० के० शुक्ल—आपकी गणना भी गुजराती कला के स्कूल में की जाती है। आप भी एक नवीन मार्ग ढूँढ निकालने में व्यस्त दिखते हैं।

सोमलाल शाह—आपके चित्रों में पुरानी शैली की छाप दिखाई देती है।

लखनऊ स्कूल ऑव आर्ट

यह उत्तर प्रदेश का सबसे प्रमुख चित्रकला शिक्षण-केन्द्र है। इस विद्यालय में कई उच्चकोटि के कलाकार हैं जिनमें मुख्यतः श्री एल० एम० सेन और श्री बीरेश्वर सेन के नाम उल्लेखनीय हैं।

स्वर्गीय एल० एम० सेन—जिस प्रकार बंगाल प्रान्त श्री अवनीन्द्रनाथ ठाकुर पर गर्व करता है उसी प्रकार उत्तर प्रदेश श्री एल० एम० सेन पर। आपके चित्रों में वही विशेषताएँ हैं जो श्री ठाकुर के चित्रों में पाई जाती हैं।

आप लखनऊ स्कूल ऑव आर्ट के प्रधानाध्यापक हैं और कला के अच्छे विद्वान हैं। आपके चित्र न केवल भारत में ही नहीं बल्कि लन्दन में भी अच्छी

दृष्टि से देख जाते हैं। आप भारत की शैलियों के अतिरिक्त इच फ्रांसीसी, तिब्बती चीनी आदि शैलियों के भी ज्ञाता हैं। आपके चित्रों में भारतीय रंग रूप तथा भावनाएँ हैं।

श्री वीरेश्वर सेन—आप भी गवर्नमेण्ट स्कूल आव आर्ट में हैं। आर्ट तथा आर्ट्स स्कूलों में ही आप एक अच्छे चित्रकार हैं। यदि आपको उत्तर प्रदेश का नन्दलाल वसु कहा जाय तो अनुचित न होगा।

असित कुमार हलदर—आप बोस और टगोर के सर्वप्रथम शिष्यों में गिने जाते हैं। आपके चित्रों को सब सम्मान की दृष्टि से देखते हैं। भारत के धूमिल क्षितिज पर श्री हलदर का उदय एक नए नक्षत्र के रूप में हुआ जिसने केवल रूप को ही कला रूप प्रदान नहीं किए अपितु विदेशी शासन और सांस्कृतिक आक्रमणों से अस्त-व्यस्त और दलित रूप की कला आत्मा को पहचानने की दृष्टि और पूजन तथा सम्मान की गौरवास्पद प्रेरणा भी दी।

आपके चित्रों में न पूरब की शैलियों की छाप है न यूरोप की शैलियों का प्रतिबिम्ब ही दिखाई देता है। उनकी शैली में भारत की कला की परम्परा का प्रतिबिम्ब ही दिखाई देता है। यह है उनकी भारत की कला की परम्परा का नवीन रूपान्तर कला आत्मा का नवीन आविष्कार सूक्ष्मताओं का नवीन निर्माण और भाव तथा सम्भावना। इस प्रकार भारतीय चित्रकला के नवीन जन्म उत्तर प्रदेश में आपका हाथ रहा।

कला के संसार में आपने हृदय की गहराइयों और कल्पनाओं को रंग तथा रेखाओं के सहारे कागज पर उतारा तूलिका से। एक नवीन भाषा को जन्म दिया। भारत के इस चित्रकार की चित्रकला में सूक्ष्मता है उसको सभी कलाकार अच्छी दृष्टि से देखते हैं। आपने अध्ययन के साथ ही साथ रूप रंग तथा छाया की खोज में भी बहुत प्रयत्न किया जिसके परिणामस्वरूप उनकी कल्पना खूब समृद्ध है।

श्री मूलाराम निगम—आपकी गणना उत्तर प्रदेश के अच्छे कलाकारों में है। आपके चित्र प्राचीन कला के हैं।

श्री जयशान्तिसिंह—आपको चित्रकला की प्राचीन शैली का अभ्यास है। आपके चित्रों में प्राचीन काल का दिग्दर्शन है।

श्री डा० एन० मजूमदार—आप एक विद्यालय के प्रिंसिपल हैं। आप

कला के अच्छे विद्वान हैं और आपके चित्रों में भारतीय चित्रकला की शैली का प्रतिबिम्ब दिखाई देता है।

श्री वी० पी० वर्मा—आप एक अच्छे चित्रकार हैं। आपके चित्र नवीन ढंग के होते हैं।

श्री के० राय—आप उत्तर प्रदेश के होनहार चित्रकार हैं। आपके चित्र बड़े सुन्दर होते हैं।

सुधीर रंजन खास्तगीर—सुधीर रंजन खास्तगीर का जन्म बंगाल में हुआ और आपने कला का अध्ययन शान्ति निकेतन में स्वर्गीय अवनीन्द्रनाथ ठाकुर की छाया में किया। इस प्रकार आप स्वर्गीय अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के चेले हैं।

समय के परिवर्तन के कारण आप बंगाल से चले गये और दिल्ली तथा मैसूर के आर्ट स्कूलों की कलाओं को देखते हुए आप उत्तर प्रदेश में रहने लगे और दून कालिज देहरादून में कई वर्षों तक रहे। अब आप स्वर्गीय श्री एल० एम० सेन के स्थान पर लखनऊ आर्ट एण्ड क्राफ्ट स्कूल के प्रिंसिपल हैं।

सुधीर रंजन खास्तगीर बंगाल स्कूल के एक अच्छे कलाकार हैं। जो कुछ उन्होंने अपने गुरु से सीखा उसको अच्छे ढंग से अपने चित्रों के द्वारा प्रकट कर रहे हैं। आपके चित्रों की कुछ विशेषताएँ हैं जो कि हम स्वर्गीय अवनीन्द्रनाथ ठाकुर जी के चित्रों में देखते हैं परन्तु गुरु के समान आपके चित्रों में परिपक्वपन उत्पन्न नहीं हुआ। चित्रों की रचनाओं में नवीनता की छाप है। भारतीय चित्र शैलियों के अतिरिक्त आपको विदेशी शैलियों का भी अच्छा ज्ञान है।

जयपुर स्कूल ऑफ आर्ट

जयपुर राजस्थानी शैली का एक केन्द्र रहा है। यहाँ के चित्रकारों ने बड़ी कुशलता से चित्र बनाए। यहाँ एक कला स्कूल भी है जहाँ के कलाकार कला की उन्नति में बड़ी सहायता दे रहे हैं। इस स्कूल के कलाकारों के विषय में यहाँ कुछ बताया जाता है।

श्री आर० एन० रावत—आपके चित्र जयपुर स्कूल ऑफ आर्ट की चित्रशालाओं में लगे हुए हैं।

श्री रामेश्वरनाथ पारीक—आपकी भी गणना इस स्कूल में ही होती है। आपके चित्रों की विशेषताएँ इसी स्कूल से मिलती हैं।

श्री आई० के० शुक्ल—आप इस स्कूल के उच्च कोटि के चित्रकार हैं।

आपके चित्रों को देखकर प्रतीत होता है कि मृत प्राय राजस्थानी शैली फिर से जाग उठी।

श्री एस० एन० दे—आप जयपुर आर्ट कॉलिज के वाइस प्रिंसिपल हैं। आप एक अच्छे चित्रकार तथा लेखक हैं। आपको कला का अच्छा ज्ञान है और भारतीय शैलियों के अच्छे विद्वान हैं। आपके चित्र बहुत सुन्दर होते हैं और उनमें नवीनता की झलक है।

मद्रास स्कूल ऑव आर्ट

मद्रास स्कूल में श्री डा० पी० चौधरी का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। आप स्वर्गीय अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के चेले हैं। आपने कला अध्ययन शान्ति निकेतन में किया। फिर समय के परिवर्तन में आप मद्रास चले गए और आप अभी तक प्रिंसिपल की हैसियत से मद्रास स्कूल आर्ट आर्ट में काम कर रहे हैं।

आपके चित्रों की रचनाएं सजीव हैं तथा उनमें नवीनता की छाप है। आपके चित्रों की टेकनिक भारतीय है और भारतीय भावनाओं से पूर्ण है। आपने अपने गुरु की शैली की आँखें मूंदकर कापी नहीं की है बल्कि आपने एक नवीन शैली को जन्म दिया है। आप के चित्रों का निरीक्षण देखकर यह धोखा हो जाता है कि कहीं ये चित्र स्वर्गीय अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के हाथों द्वारा अंकित नहीं हैं।

आप अच्छे चित्रकार हैं और साथ ही साथ अच्छे मूर्तिकार भी हैं। दक्षिण भारत में प्रतिभाशाली युवा कलाकारों को उन्नति का श्रेय उन्हें प्राप्त है।

दिल्ली स्कूल आव आर्ट

दिल्ली स्कूल के चित्रकारों में स्वर्गीय शारदा उकिल बहुत ही प्रसिद्ध है। इनके पौराणिक कथाओं के चित्र बहुत ही सुन्दर हैं जिनका हम आज भी महत्वपूर्ण दृष्टि से देखते हैं।

सुधीर सरकार—आप स्वर्गीय शारदा उकिल के चेले हैं और अपने गुरु की टेकनिक का अब भी अनुकरण कर रहे हैं। इनके चित्रों में मौलिकता नहीं है।

रणतनु उकिल—आप युवा कलाकारों में सबसे अच्छे हैं। अपने पिता की टेकनीक का अनुकरण कर रहे हैं। अभी आपका कोई अपना मार्ग नया है।

बी० सान्याल—आप भी एक अच्छे चित्रकार हैं। आपने [illegible]

नवीनता की छाप दिखाई पड़ती है। अच्छे चित्रकार के नाते आपके चित्रों की रेखाओं में सजीवता है।

बीरेन दे—आप एक होनहार चित्रकार हैं। आपके चित्रों की रेखाओं में गति है, और वे सुन्दर दिखाई पड़ते हैं।

प्रश्न

1 बंगाल स्कूल के कुछ चित्रकारों का वर्णन करो।
2 बम्बई स्कूल के कलाकारों का वर्णन करो।
3 बंगाल तथा बम्बई स्कूलों के मिले-जुले स्कूलों के कलाकारों के नाम लिखो तथा उनकी कला की विशेषताओं का वर्णन करो।
4 जयपुर स्कूल आव आर्ट के मुख्य चित्रकारों का वर्णन करो।
5 लखनऊ के आर्ट स्कूल के किन्हीं चार चित्रकारों के चित्रों का वर्णन करो।
6 गुजरात स्कूल के चित्रकारों के नाम बताओ तथा उनके चित्रों की विशेषताओं का भी वर्णन करो।

अध्याय 20

भारतीय कला की नवीन कृतियाँ

भारतीय कला की नवीन कृतियों के बारे में श्री ए० एस० रमन के शब्द इस प्रकार हैं— भारतीय चित्रकला की नवीन कृतियों पर तीन प्रभाव विशेष रूप से परिलक्षित हैं—(1) बंगाल स्कूल (2) पेरिस स्कूल, और (3) लोक कला।"

बंगाल स्कूल किसी क्षेत्र या माध्यम का प्रतिनिधित्व नहीं करता क्योंकि इसके अनुयायी देश भर में पाये जाते हैं और उन्होंने वाश टेम्परा पेस्टल तथा तैल आदि सभी माध्यमों को अपनाया है। प्रश्न यह उठता है कि क्या यह स्कूल है?

श्री अवनीन्द्रनाथ ठाकुर और श्री ई० बी० हेवल जैसे उच्च कलाकारों ने कलकत्ता में एक नवीन कला स्कूल का आरम्भ किया जिसका उद्देश्य पाश्चात्य विशिष्टताओं के विरुद्ध प्रतिक्रियास्वरूप भारत के अतीत गौरव का पुनरुद्धार करना था। पुनरुद्धार आन्दोलन की जिसकी तुलना आनन्द कुमारस्वामी ने प्रि-रैफेलाइट्स से की है कलात्मक आधार ही बंगाल स्कूल में है। लेकिन भारत के प्राचीन गौरव का पुनरुद्धार केवल अतीत के कुशल कलाचार्यों की बाह्य विशेषताओं की पुनरावृत्ति मात्र से न होगा। यद्यपि यही बंगाल स्कूल के अधिकांश कलाकारों ने किया लेकिन कुछ उल्लेखनीय अपवाद भी पाए जाते हैं। उदाहरणार्थ विनोद बिहारी मुखर्जी डी० यद्रा बी० सी० गुरारी के० श० धीरेन्द्रनाथ वर्मा कृपालसिंह शिखावत बी० एन० जिज्जा तथा कुछ और अन्य कलाकार जानते हैं कि वे किधर हैं और क्या कह रहे हैं? उनकी कला-दुनिया में इस आन्दोलन के प्रवर्तकों द्वारा विशेष रूप से निश्चित अपार्थिव कल्पना शक्ति और सर्वज्ञान परिपूर्ण कला न होकर पाई जाती है।

जब किसी कलाकार को किसी कृति की नई कल्पना के प्रति सजगता होता है और अपनी भाषा में उसे उतारना होता है तो उसके समकालीनों की दृष्टि में

ऐसी कृति का बुद्धि ग्राह्य न होना स्वाभाविक ही है। इतिहास में इस बात के अनेक उदाहरण हैं। पिकासो का उदाहरण नवीनतम है। "क्या यह भी कला है?" विश्व के जीवित कलाकारों में एक सबसे अधिक मौलिक कलाकार की आलोचना करते हुए चलेंज के रूप में लोगों ने उपयुक्त शब्द कहे हैं।



चित्र 17—भारत की नवीन कलाकृति

भारत में अमृत शेर-गिल की कला को चलेंज देते हुए प्राय इसी प्रकार की आलोचना तब की गई थी जबकि उनके पूर्व और पश्चिम की कला के एक नवीन समन्वय की सम्भावनाओं की कल्पना की थी। अमृत शेरगिल के कला रूपों की सादगी में गॉगुइन और मोदिग्लियानी की प्रतिच्छाया पाई जा सकती है। रंगों की योजना, समुचित संतुलन और इनसे अधिक वह सादगी और भावव्यंजना जिनका ओर शेरगिल की कृतियों को देखकर सबसे अधिक ध्यान जाता है भारत की परम्परा के अनुरूप ही अच्छा प्रतिनिधि है जिसमें कि कोमलता और गम्भीरता का संगम। अगर विजयराघवन ने पार सामन्त भारत का रहस्यवाद में प्रभावित किया और पचारम्भाइम ने विरण्डान्त

माध्यम का भौतिकवाद से ला अमृता शेरगिल ने परिमित माध्यम पर रोमान्टिक प्रतिबिम्ब में डाला जो बहुत ही अच्छा है।

'शैलज मुखर्जी, जार्ज कीट और कृष्ण कुमार हेब्बर ने भी पेरिस स्कूल से बहुत कुछ सीखा है। दी स्टूडियो, लन्दन के शब्दों में, शैलज मुखर्जी भारत के सबसे अधिक परिपक्व कलाकारों में हैं। इनके चित्रों में नीले, हरे, पीले रंगों का प्रयोग हुआ है। इनकी कोई भी कृति कल्पना मात्र नहीं है बल्कि उनका अपना उद्देश्य है।'

कृष्ण और गोपियाँ, राग रागिनियाँ और नायिकाएं आदि जो पहाड़ी तथा राजस्थानी शैली से कुछ मिल रहे हैं, जार्ज कीट के यहाँ इनका नया रूप मिलता है।

हेब्बर की विशेष क्षमता है। आकार और अनुपात की शिक्षा में ये गुण ऐसे हैं जिन्होंने पेरिस में उस समय उत्साह उत्पन्न कर दिया था। यह कहना उचित नहीं कि हेब्बर पर अब भी अमृता शेरगिल की कला की झलक है।

अन्य अर्वाचीन कलाकारों में कुछ हैं गोपाल घोष, शिवक्स चावडा, एन० एस० बेन्द्रे, के० सी० एस० पनीक्कर, गुप्त और धनराज भगत। इनके चित्रों में पेरिस का सा उत्साह है। उनकी उंगलियों द्वारा निर्मित भारत में वही प्रामाणिकता है जो हम अतीत की महान् कला-कृति में पाते हैं।

यामिनी राय प्राचीनतावादियों के सम्भाव्य नेता हैं। आपने बंगाल स्कूल की महान परिपाटी के साथ अपने कलाकार जीवन का आरम्भ किया।

मीना आइन जो बच्चों की अच्छी लगनेवाली कला की दिशा में बढ़ीं, उनका स्थान अमृता शेरगिल आदि महिला कलाकारों में सर्वोच्च है। मीना आइन की चित्रकृतियों का आधार खिलौने होते हैं। आजकल आइन बच्चों के लिए पौराणिक गाथा चित्रों के निर्माण में व्यस्त हैं।

प्राचीनतावादी अन्य कलाकारों के नाम इस प्रकार हैं—पी० एल० नृसिंहमूर्ति और के० श्रीनिवासुलु। आपने आन्ध्र लोककला के कलारूपों का सहारा लेकर अपने कुछ सर्वोत्तम चित्र प्रस्तुत किये हैं। इनके अतिरिक्त देश भर में अनेक प्रयोगशील कलाकार हैं जो नये मार्गों की खोज में संलग्न हैं। इन कलाकारों की कृतियों के प्रारम्भिक सिंहावलोकन से हमें उनमें पेरिस का झिलमिलाता प्रतिबिम्ब मिलेगा। यदि हम उनकी गहराई में निरीक्षण

करें तो स्पष्ट प्रतीत हो जायगा कि पूर्व और पश्चिम पृथक हैं। शैली की दृष्टि से पूर्व और पश्चिम अनन्य एक हो चुके हैं।

प्रश्न

1 भारतीय चित्रकला की नवीन प्रवृत्तियों के बारे में जो तुम जानते हो लिखो।

2 बंगाल स्कूल ऑव आर्ट की विशेषताओं का वर्णन करो।

3 बम्बई स्कूल ऑव आर्ट क्यों उन्नति नहीं कर सका?

4 पेरिस स्कूल ऑव आर्ट ने चित्रकला को क्या दिया?

अध्याय 21

भारतीय चित्रकला पर विदेशी प्रभाव

भारतीय चित्रकला पर विदेशी प्रभाव के विषय में श्री० नगेन्द्र भट्टाचार्य के शब्द इस प्रकार हैं— आर्यों के आगमन से पूर्व की सिन्धु-तटवर्ती सभ्यता का सम्बन्ध सुमेरिया और बेबीलोन से रहा यद्यपि इसका भली भाँति निर्णय नहीं हो पाया है कि किस सभ्यता का किस पर अधिक प्रभाव पड़ा ? फिर भारत के बाहर से आर्यों का आगमन हुआ। हम जिस भारतीय सभ्यता के नाम से जानते हैं वह इन्हीं विदेशों से आये आर्य जनों की अपनी सभ्यता थी। इस आर्य सभ्यता को भारतीय भूमि और जलवायु ने अपनी परिपाक शक्ति द्वारा पुष्ट करके बनाया। तत्पश्चात् 326 ई० पू० यूनानी सम्राट सिकन्दर का भारत पर आक्रमण हुआ। इसके साथ ही यूनानी संस्कृति का प्रवेश भी भारत में हुआ। भारतीय व यूनानी संस्कृतियों के संगम से गांधार भास्कर्य का उदय हुआ। इस नवीन शैली की 5 6 शताब्दियों के समय की अपेक्षा थी। गुप्त काल की कला और भास्कर्य में इन नाना धाराओं की सुसामञ्जस्यपूर्ण परिणति दिखाई देती है। 500 ई० पू० फारस निवासियों ने उत्तर भारत पर अपने साम्राज्य का विस्तार किया। उस समय तथा उसके पश्चात् मौर्य काल के भारतीय भास्कर्य में फारसी भास्कर्य का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित है। वस्तुतः अशोक के स्तम्भ शीर्षों को देखने पर उनमें यूनानी भास्कर्य की शिल्प-कला स्पष्ट परिलक्षित है। यह कहना कठिन है कि यूनानी कलाकारों ने भारतीय राजाओं के आदेश से इन शीर्षों का निर्माण किया था अथवा भारतीय कलाकारों ने यूनानियों से कला की शिक्षा प्राप्त कर इन्हें बनाया था। इसके पश्चात् समय काल विशेषतः गांधार, मथुरा और वाराणसी के कलाकारों ने इस पद्धति से मूर्ति निर्माण किया। बाद की शताब्दी में मथुरा और अमरावती के भास्कर्य धारा ने विभिन्न प्रकार का सामञ्जस्य करके उस पूर्ण भारतीय प्रकार

किया। लेकिन यूनानी और ईरानी भास्कर्य उड़ीसा के चन्द्रगिरि, रानीनूर गुहा तथा साँची के तोरण शीर्ष प्राय 2000 वर्ष प्राचीन हैं। खण्डगिरि की रानी नूर गुफा में संगीत सभा और नृत्य के दृश्यों में तथा हाथ-वादकों की मूर्तियों में और स्वर्ग गुफा के वेदिका में उत्कीर्ण पशुमान सिंहनियों की मूर्तियों में ईरानी कला का प्रभाव पूर्णतया विद्यमान है। ये मूर्तियाँ साँची के तोरण शीर्ष में भी पाई जाती हैं और इसी प्रभाव का प्रमाण हैं।

इन सब विभिन्न वैदेशिक प्रभावों को आत्मसात् करके कला के क्षेत्र में गुप्त काल ने अपने श्रेष्ठ निजत्व की स्थापना की। गुप्त काल के भास्कर्य एवं अजन्ता भित्तिचित्रों में गुह्मगार विदेशी धारा का कुछ प्रभाव है लेकिन वह मन्द क्षीण होता हुआ भारतीय धारा में आत्मसात् हो रहा था। गुप्त परवर्ती कला में भारत व चीन के सांस्कृतिक संपर्क व आदान प्रदान का युग आया। चीनी कलाकारों के साथ भारत का यह परिचय एकान्त और स्वाभाविक था।

फिर क्रमशः भारत में आर्य संस्कृति की धारा बन्द चली। ईसा की 12वीं शताब्दी में नव जागृत समन्वित मुस्लिम संस्कृति ने उस आक्रान्त कर दिया। भारत पर मुहम्मद गोरी के आक्रमण हुए। इन आक्रमणों से उत्तर भारत के समस्त विहार और ग्रंथागार ध्वंस हो गए। अत आर्य संस्कृति एवं नवोदित इस्लामी संस्कृति के मिलन से भारत में एक श्रेष्ठतर संस्कृति की स्थापना की संभावना कुछ समय के लिए नष्टप्राय हो गई।

मुगल शासन काल के प्रथम भाग में फारस की चित्रकला का आदर विशेष था लेकिन जहाँगीर ने हिन्दू कलाकारों का भी आदरपूर्वक संरक्षण किया। फलस्वरूप राजपूत हिन्दू तथा फारसी शैलियों के सम्मिलन से मुगल चित्रशैली का सूत्रपात हुआ। क्रमशः कालान्तर में इस नवजात शैली ने मुगल कला राजपूत कला शैली भारतीय कला और 17वीं से 19वीं शताब्दी तक की विभिन्न पहाड़ी कला शैलियों को विविध सजावटों से समृद्ध किया। 17वीं शताब्दी के प्रथम भाग में भारत में यूरोपियनों का प्रवेश हुआ। उनके साथ साथ यूरोपीय चित्रकला का पदार्पण भी भारत में हुआ। सन् 1650 ई० में निर्मित [illegible] के दीवान ए आम में निर्मित चित्रों पर इटालियन पच्चीकारी कला की जो उच्च सम्मान दिया वह आज भी दर्शकों को मुग्ध कर रहा है। शाहजहाँ के बाद मुगल कला पर यूरोपीय प्रभाव बढ़ता गया।

प्रभाव के अन्तर्गत पमपसिटव दिग्गान का चम्पा के अन्तर्गत पजण्ट की पद्धति का प्रभाव भी देखा जाता है लेकिन यह प्रभाव दीर्घस्थायी नहीं रह सका।

लगभग आज से प्राय सौ साल पूर्व यूरोपीय कला की शिक्षा प्राप्त राजा रवि वर्मा का कला क्षेत्र में पदार्पण हुआ। पाश्चात्य प्रणाली से केवल प्रभाव मात्र ग्रहण न करके उसका पूर्णत अनुकरण किया और वाशलेपन रीति तथा परिप्रेक्ष्य प्रभृति सहित पाश्चात्य पद्धतियों को ग्रहण किया गया। यह एक नूतन युग की सूचना थी। भारतीय कला में अब विषय वस्तु प्रकाशन अन्य पद्धति का प्रवेश हुआ। प्राय इसी समय कलकत्ता लाहौर मद्रास और बम्बई में भारतीय छात्रों की शिक्षा के लिए अंग्रेज कलाकारों की देख रेख में कला विद्यालय स्थापित किए गये। समस्त भारत में लगभग यूरोपीय चित्राङ्कन की चर्चा आरम्भ हुई और देशी चित्रकला क्षीण और उपेक्षित होकर कुम्हारों और राज मजदूरों तक ही सीमित रह गई।

20वीं शताब्दी के प्रथम भाग में कलकत्ता आर्ट स्कूल के अध्यक्ष श्री हैवल भारतीय चित्रकला के कुछ नमूने देख कर मुग्ध हो गये। उन्होंने भारतीय कलाकार श्री अवनीन्द्रनाथ ठाकुर का ध्यान उस ओर आकर्षित किया। श्री अवनीन्द्रनाथ ने इटली के चित्रकार श्री गिलहार्डी से निसर्ग प्रतिकृति और तैल चित्राङ्कन की शिक्षा पाई थी। हैवल द्वारा उत्साह पाकर उन्होंने इसी पद्धति के अनुसार राधाकृष्ण के चित्रों का अङ्कन किया। लगभग अनेक परीक्षणों के बाद श्री अवनीन्द्रनाथ ने इसी चित्राङ्कन शैली को पुनर्जीवित किया। श्री अवनीन्द्रनाथ की चित्रशैली का विश्लेषण करने पर उनके मूल में गिलहार्डी की छाप बहुत कुछ मिलती है। फिर भी भारतीय परम्परा और टाइकन', ओकाकुरा आदि जापानियों की वाश पद्धति के प्रभाव को समन्वित करते हुए अवनीन्द्रनाथ ने नवीन भारतीय चित्रशैली का प्रवर्तन किया। इस भाँति भारतीय कला को लोगों ने तुरन्त ही स्वीकार नहीं कर लिया। कारण यह था कि प्रायः आधी शताब्दी में पाश्चात्य कला इस देश की भूमि पर दृढ़ जड़ें पकड़ कर जमी हुई थी। बम्बई और कलकत्ता उसके प्रधान केन्द्र थे। पाश्चात्य चित्रकला यथार्थवादी थी और इसके प्रभाव से अभिभूत लोग पूर्व की भावात्मक चित्रकला को व्यंग्य विद्रूप की दृष्टि से देखने लगे, परन्तु इस समय देश में भारतीय कला के महान् पोषक, प्रवासी, माडर्न रिव्यू और

विशाल भारत के संस्थापक श्री रामानन्द चटर्जी ने शिक्षित वर्ग के व्यंग विद्रूपों की परवाह न करके नवीन भारतीय शैली का समर्थन किया और उसके प्रचार में जुट गये। क्रमशः मद्रास, कलकत्ता, जयपुर मछलीपट्टम लखनऊ प्रभृति केन्द्रों में इस नवोन्मिष भारतीय शैली के अनुयायी कुशल कलाकारों की देख रेख में कला की शिक्षा का कार्य आरम्भ हुआ। केवल बम्बई और कलकत्ते में कुछ कलाकार ऐसे रह गए जिन्होंने यूरोपीय कला शिक्षा की परिचालना में पाश्चात्य कला के प्रति अपने अनुराग को अक्षुण्ण रखा। पर नवीन भारतीय शैली की चर्चा व रसानुभूति भारतीय शिक्षित वर्ग का फैशन बन गया। श्री अवनीन्द्रनाथ ठाकुर, नन्दलाल बसु अब्दुर रहमान चुगताई, असित कुमार हाल्दार, देवीप्रसाद, शारदाचरण आदि इस नवीन शैली के स्तम्भ थे। इन्होंने प्राच्य व पाश्चात्य तथा अन्य ज्ञात अज्ञात, देशी विदेशी प्रभावों व शैलियों को यथावसरानुसार ग्रहण कर अपनी अंकन पद्धति को समृद्ध किया। इस दल के प्रथम व प्रधान विद्रोही श्री गगनेन्द्रनाथ ठाकुर ने पिकासो प्रवर्तित क्यूबिज्म को सम्पूर्ण नूतन और रोमान्टिक रूप देकर एक अपूर्व चित्र-माला की सृष्टि की। पुराणों के विग्रहों विश्वमोहक क्यूबिज्म को उन्होंने बंगाल के बाउलों का अंगरखा पहना कर हाथ में इकतारा देकर उसको सर्वथा अपनी चीज बना कर विकसित किया।

श्री गगनेन्द्रनाथ के वाटरकलर दृश्य चित्र भी विन्सी वाटरकलर पर आधारित हैं। तत्पश्चात् रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने एक ही समय भारतीय कला के क्षेत्र में दो धाराओं का प्रवर्तन किया। यामिनी राय की शिक्षा-पद्धति का विश्लेषण करने पर मूल में यह पाया जाता है कि पहले उन्होंने पाश्चात्य ढंग की शिक्षा पाई, फिर नवीन भारतीय शैली की ओर अन्त में ग्रामीण लोगों ने उन्हें प्रभावित करके पूर्णतः अपनी ओर खींच लिया। कुछ यूरोपियन इम्प्रेश-निज्म व पोस्ट इम्प्रेशनिज्म का प्रभाव भी उन्होंने ग्रहण किया। इन सब सम्मिलित प्रभावों से एक अपूर्व चित्र शैली की सृष्टि हुई। श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर का प्रकार सर्वथा भिन्न है। उनके मूल में टेक्निक शिक्षा प्रायः एकदम नहीं है। वह अत्यन्त सुसंस्कृत परिवार में जन्मे थे और काव्य ही उनका क्षेत्र था। वह बहुमुखी कलाकार थे। अतः वर्ण व रेखा सभी में उन्होंने आत्माभिव्यक्ति की खोज और एक अभिनव चित्र सज्जा से देश के कला

भण्डार को समृद्ध किया। पाश्चात्य चित्र पद्धति का बोलबाला था, पर उ
उन्होंने सर्वथा अपनी निजी शैली का विकास किया।

तत्पश्चात् अर्वाचीन कलाकारों के बीच अग्रगण्य कलाकार अमृत शेरगिल का पदार्पण हुआ। अमृत शेरगिल के सम्बन्ध में एक बात कह देनी जरूरी है कि अब तक जिन समस्त भारतीय कलाकारों ने भारत की कला को समृ किया था उनकी शिक्षा व उनका दृष्टिकोण सर्वतोभावेन भारतीय था। अमृ शेरगिल ने अपनी हंगेरियन माता के साहचर्य और फ्रांसीसी आर्ट स्कूल की शिक्षा के कारण सम्पूर्णतः पाश्चात्य प्रभाव को ग्रहण किया। उन्होंने पहले पोस्ट इम्प्रेशनिज्म के प्रभाव में नये प्रयोगों का आरम्भ किया। बाद को भारतीय राजपूत व मुगल चित्र शैलियों तथा अजन्ता के चित्रों के प्रभाव में उनके नूतन प्रयोग आरम्भ हुए। उनके अनेक चित्र सम्पूर्णतः मुगल व राजपूत चित्र के नवीन तैल चित्र संस्करण हैं। अन्तिम रूप से कहीं तो उनके चित्रों को देखकर ऐसा लगता है मानो इन चित्रों का निर्माता विदेश से प्रभावित कोई भारतीय कलाकार नहीं बल्कि यह किसी विदेशी शिल्पी का ही भारतीयकरण है।

बम्बई के कलाकार समुदाय में पेस्तन जी बोमनजी, पीथावाला, हलदनकर प्रभृति पाश्चात्य रियलिस्टिक धारा के पोषक हैं। तत्पश्चात् 10 वर्ष बाद नूतन धारा का प्रचलन हुआ। उसके प्रवर्तक प्रो० लगहैकर हैं। अन्य धाराओं के प्रेरणा स्रोत हैं पिकासो की शैली। उधर बंगाल में नवीन धारा के कलाकार मनोज मुखर्जी मातीस से प्रभावित हुए। गोपाल घोष चीनी कला शैली से प्रभावित हैं। अन्य परवर्ती कलाकारों ने अन्य अनेक देशों की कला शैली से प्रेरणा प्राप्त किया किन्तु ऐसा लगता है मानो अभी किसी को कोई दिशा नहीं मिल पाया है। अदूरदर्शी आलोचक अब जब भी किसी की कृति में कुछ बेढंगा ऊल-जलूल या अगम्य तत्व देखते हैं तो वाह-वाह करते हुए उसे आधुनिक कला के अन्तर्गत मान लेते हैं। यह विचारणीय है कि इन दिनों दुनिया के प ग्यिन नाना परीक्षणों के फलस्वरूप जिस नूतन धारा की सृष्टि होती है, वह जातीय कला धारा को स्पष्ट करती है। किन्तु परिश्रम से घबराने वाले प्रमादियों के दल को आश्रय देकर उनके द्वारा होने वाले छद्मन्याय को सहारा देने से जातीय कला व संस्कृति का कल्याण न होगा।

आवागमन के साधनों की सुगमता के कारण आज

मध्य का पक्षपात लुप्त हो चला है। किसी भी देश की कला की परम्परा को सभी बाहरी प्रभावों से बचाए रखने की चेष्टा करना व्यर्थ का प्रयत्न है। हमने जैसे अतीत काल में विभिन्न देशों से आने वाले प्रभावों को आत्मसात् करके उसे अपना बना लिया था, उसी प्रकार वर्तमान प्रभावों को ग्रहण करने के लिए भी हमें तैयार रहना होगा। अतीत व वर्तमान एवं देश विदेश के मणि चुन लेकर अपनी परम्परा के रत्नहार का निर्माण करने में हमें विमुख नहीं होना है किन्तु इस कार्य के लिए जिस श्रद्धा, परिश्रम और धैर्य की अपेक्षा है उसकी उपेक्षा करके प्रमाद से उत्पन्न कला को अपनाकर हम कल्याण की ओर न बढ़ सकेंगे।

प्रश्न

1 भारतीय कला पर विदेशी प्रभाव पड़ा अथवा नहीं? इस पर अपनी राय दो।

यूनानी चित्रकला का भारतीय चित्रकला पर प्रभाव पड़ा या नहीं? इस पर अपनी राय दो।

मुगल शैली ने भारतीय चित्रकला पर क्या प्रभाव डाला? इस पर अपनी राय दो।

अध्याय 22

कला साधना

कला साधना पर भारत के प्रसिद्ध कलाकारों ने अपनी अपनी राय प्रकट की है। यहाँ कुछ कलाकारों की सम्मतियाँ उन्हीं के शब्दों में लिखना आवश्यक है ताकि उनको भली प्रकार समझा जा सके।

(1) राजपूत चित्रों के दृश्य पट एकदम भारतीय हैं। उनमें राजपूताना की छोटी छोटी पहाड़ियाँ अथवा तुषाराच्छादित हिमाचल के तुङ्ग शृङ्ग बराबर दिखाई पड़ते हैं। उनका व्यवहार लगातार प्रारम्भिक इटालियन ढङ्ग से लिया गया है। उनमें सारस तथा पुष्करिणी और भारतीय वृक्ष बराबर अङ्कित किए गये हैं। पानी के लिए कुण्डली सदृश चिह्न और सरोवरों तथा पुष्करिणियों के चौकोर किनारे उनकी निजी विशेषताएँ हैं।

राजपूत चित्रों का माप न बड़ा होता है। दीवारों पर चित्रित अथवा कागज पर अङ्कित चित्रों में प्रायः मानव आकृति मूर्तियों का अभाव नहीं है। मुगल चित्रों में दीवारों पर अङ्कित चित्र बहुत ही कम हैं। कागज पर बने हुए चित्र सब छोटे होते हैं।"

—आनन्दकुमार स्वामी

(2) शिल्प सृष्टि के समय पुराने शिल्पियों ने जो रीतियाँ बनाई हैं उनका अनुशीलन और अभ्यास आवश्यक होता है क्योंकि इस प्रकार की शिक्षा से अपने मन का भाव सरलता से प्रकट करना सहज होता है। स्वयं उन शैलियों का आविष्कार करने के लिए बहुत समय साध्य है। अच्छी शिल्प सृष्टि देखकर शिल्पी केवल प्रेरणा ही नहीं पाता साहस भी पाता है। अच्छा शिल्पी प्राचीन चित्रों में केवल इङ्गित मात्र ग्रहण करता है। फिर परम्परागत शिल्प सृष्टि में पुराने शिल्पी कहाँ तक अपने मनोभाव प्रकट कर सके हैं इसकी सीमा भी समझ में आ जाती है। शिल्पी को अपनी रचना के समय देश काल पात्र का ध्यान रखना चाहिए। केवल सीखने के समय ही पुराने चित्रों का

रानि का निर्माण करना चाहिए । स्वकीय चित्र बनाते समय उनका अनुकरण त्वादिनाय है क्योंकि व चित्र अपने युग के देश, काल और पात्र की सीमा से न्युष्ट थे।'

—नन्दलाल बसु

(3) यदि कोई ग्राम निवासी लुव्र के चित्रालय की बात नहीं जानता या कोई अग्रज लन्दन की नेशनल गैलरी से अपरिचित है तो वह अपने समाज में संस्कारहीन गिना जाता है, परन्तु इस भारत का दुर्भाग्य ही कहना चाहिए कि भारतवासी कलाधामों की चर्चा करना केवल निठल्ले बेकार और आराम तलब मनुष्यों का ही काम समझ बैठे हैं।"

—रविशङ्कर रावल

(4) 'नन्दलाल के परवर्ती शिल्पियों में अत्याधुनिक यूरोपीय चित्र की छाप का प्रभाव प्रायः सुनने को मिलता है, किन्तु अत्याधुनिक यूरोपीय चित्र के आन्दोलन एब्स्ट्रैक्ट आर्ट, सररियलिज्म इत्यादि द्वारा हमारे शिल्पी प्रभावान्वित हुए हैं या नहीं इनकी आलोचना करते हुए एक मनोरंजक सत्य का स्मरण करना चाहिए। हम नवीनतम यूरोपीय शिल्प की जो विशेषता हम मिलती है समस्त प्राच्य शिल्प संस्कृति के साथ उसका अद्भुत मेल है। तथाकथित अत्याधुनिक यूरोपीय मनवाद में यह साम्य सूत्र ही स्पष्ट है। यूरोपीय चित्रकार दृश्य मान्य प्रधान रूप के प्रति आकृष्ट हो रहे हैं वस्तु के रूप की अपेक्षा उसका गुण ही प्राधान्य पा रहा है जिसे हम एब्स्ट्रैक्ट आर्ट अथवा अरूप शिल्प कहा करते हैं, उसका मूल तत्व है वस्तु विशेष गुण का ज्ञापन। यूरोपीय चित्र संस्कृति में यह परिवर्तन प्रत्यक्ष रूप में प्राच्य संस्कृति के संस्पर्श में आने पर ही घटित हुआ है। विभिन्न शिल्प संस्कृतियों का सम्यक् ज्ञान न होने के कारण कभी-कभी कुछ आलोचक इन चित्रों में यूरोपीय प्रभाव की बातें सोचा करते हैं। वस्तुतः यह धारणा भ्रान्त है।"

—विनोद बिहारी मुखर्जी

(5) मैं व्यक्तिवादिनी हूँ और अपनी नई टकनिक का विकास कर रही हूँ जो रूढ़िवादी दृष्टि से देखने पर अनिवार्यतः भारतीय शैली तो नहीं है लेकिन उसकी आत्मा बुनियादी तौर पर भारतीय है। रूप और रंगों की अनन्त सामञ्जस्यता द्वारा मैं भारत का विशेषतः भारत के निर्धन मानव को उस स्तर पर चित्रित करने में सफल हूँ जो केवल भावुकतापूर्ण रुचि से कहीं ऊँचा स्तर है।'

—अमृत शेरगिल

(6) चित्रकारी के क्षेत्र की मेरी यह निशा रही है। ऊमर को उमर बनाने में मुझे निस्सीम आनन्द प्राप्त होता रहा है और प्राय मैंने अपने मुख्य और तत्कालीन कार्य सहित रचना के बजाय इस कार्य की ओर अधिक ध्यान और समय दिया है।

रचनाओं की पाण्डुलिपियों में प्राय काट-कूट और संशोधन की रेखाएँ रहा करती हैं मानो वे एकान्त असंलग्नताएँ हों जो सौन्दर्य और सामञ्जस्य के सिद्धान्तों के विरुद्ध मोर्चा ले रही हों मानो कोई अमिट अभिशाप ले कर उठ खड़ी हुई हों। ये समस्याओं को जन्म देती हैं और इसीलिए महान कलाकार विश्वकर्मा के रचना कौशल का विषय बन जाता है।'

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

(7) मेरी कला इतने सरल या चाहे कहो साधारण धरातल पर है कि जो समाज आयेगा वही उसे पसन्द करेगा। जैसे बच्चा हो उसे सब कोई गोदी में लेते हैं। ऐसी मेरी कला है। (पम्प की ओर इशारा करते हुए उन्होंने कहा) पम्प मेरा गुरु है।" —यामिनी राय

(8) राजस्थानी शैली मुख्यतः आलङ्कारिक है। कांगड़ा शैली भावप्रधान है, भावों का चित्रण और उनके द्वारा रस-सृजन उसका प्रधान उद्देश्य है। राजस्थानी चित्रों में रेखाएँ भावानुसार प्रवाहित नहीं होतीं। कांगड़ा शैली की रेखाओं के विपरीत ये कठोर हैं। पहाड़ी रेखा की कोमलता उनमें बहुत कम है। पहाड़ी शैली की रेखाएँ भावानुवर्तिनी होकर आई हैं और कठोर से कोमल होती गई हैं उनमें सर्वत्र एक जीवन प्रवाह और स्पन्द है। मुगल आकारों का परित्याग राजस्थानी शैली की अपनी विशेषता है। राजस्थानी शैली का रंग विधान साधारण और अनाकर्षक है। कांगड़ा शैली का रंग विधान कोमल और सामञ्जस्यपूर्ण है। इसमें मुगल शैली के रंग विधान का प्रभाव है। स्थान स्थान पर छाया और प्रकाश का प्रयोग हुआ है।

—एम० के० वर्मा

प्रश्न

1 कला साधना के विषय में तुमने जिन कलाकारों की राय पढ़ी है, उसका वर्णन करो।

अध्याय 23

कुछ अन्य शैलियाँ

वर्तमान काल में कुछ अन्य शैलियाँ भी प्रचलित हैं जिनके चित्र आधुनिक चित्रकार अधिक संख्या में बना रहे हैं। यहाँ पर केवल दो शैलियों पर प्रकाश डाला जाता है।

लिथोग्राफ

इस कला शैली का वर्णन श्री रमेन्द्रनाथ चक्रवर्ती, जो कलकत्ता कला विद्यालय के प्रधानाध्यक्ष हैं और कला की विभिन्न शैलियों में बड़े दक्ष हैं, इस प्रकार करते हैं—

मुद्रित कला की अभिव्यक्ति के रूप में कलात्मक प्रस्तर लेखन को वस्तुतः भारत में स्वीकार नहीं किया गया है। वास्तव में बहुत कम ऐसे लोग हैं जिन्हें मूल चित्रों के संग्रह में रुचि है। कभी-कभी चित्रों के ऊँचे दाम देखकर भी वे क्षुब्ध हो जाते हैं और उनकी आलोचना यह होती है कि कलाकार केवल धनाढ्यों को चित्र बेचना ही पसन्द करते हैं, यद्यपि बहुत-से अच्छे चित्र कम मूल्य पर भी प्राप्य हैं। केवल मूल चित्र अल्प मूल्य पर भी मिल सकते हैं यदि उनकी माँग हो। इस प्रकार के चित्र पत्थरों पर रंगीन खड़िया और स्याही से अंकित किए जाते हैं। कलाकार की स्वच्छ रेखा में सावधानी से लगन होने पर यह खड़िया अथवा स्याही के चित्र स्वच्छ जैसे ही प्रतीत होते हैं। बारीकी से जाँच करने के बाद केवल कुछ आलेखों को रख लिया जाता है और अन्य नष्ट कर दिए जाते हैं। प्रत्येक आलेख पर कलाकार के हस्ताक्षर होते हैं और क्रम संख्या डाल दी जाती है। प्रत्येक रंग के लिए अलग अलग पत्थरों का प्रयोग करके रंगीन प्रस्तर आलेख भी तैयार किए जाते हैं।

भारतीय प्रस्तर आलेख कला यद्यपि सर्वप्रिय नहीं है, फिर भी यह सभी स्थिति तक पहुँच चुकी है कि अत्यन्त अंकित सर्वोत्तम नमूनों के समकक्ष उसे रखा

जा सकता है। इस कला के आरम्भ के लिए हमें 30 वर्ष पहले जाना होगा जब कि अवनीन्द्रनाथ टाकुर ने पूर्वी कला के पुनरुद्धार का आन्दोलन आरम्भ किया था। उस समय इक रंग व बहु रंगे मूल चित्रों की प्रतिलिपियाँ कलाकारों द्वारा स्वयं ही तैयार की जाती थीं। अवनीन्द्रनाथ, गगनेन्द्रनाथ और नन्दलाल बसु के चित्रों की अनेक प्रतिलिपियों को उस समय की प्रदर्शनियों में देखा जा सकता था। बाद में यामिनी राय ने कुछ अत्यन्त सुन्दर पत्थर आलेख्य तैयार किये। मुझे सुरेन कार द्वारा तैयार किए कुछ इकरंग व बहुरंग प्रस्तर आलेखों का भी स्मरण आ रहा है। ये आलेख्य उच्च कोटि की कला के नमूने थे और इन्हें कलाकार ने स्वयं ही आरम्भ से अन्त तक शान्ति निकेतन में रहकर तैयार किया था। मैं उन दिनों उनका सहकारी था। हमने साथ मिलकर अनेक प्रतिलिपियाँ तैयार कीं। कई अवसरों पर हम उन्हें मासिक पत्रों में प्रकाशनार्थ भी भेजते थे और वहाँ से उन्हें वापस लौटाने का कष्ट कोई भी न करता था। सम्पादक गण शायद यह सोचते थे कि उनके सम्मानित पत्र में छप जाने के बाद उनका कोई विशेष मूल्य नहीं रह गया है। इस प्रकार लापरवाही के कारण और अन्य माँग न होने से प्रस्तर आलेख्य कला बहुत मन्द गति से आगे बढ़ी और स्वयं कलाकारों को यह आभास आरम्भ में न हो सका कि उनकी कला में सम्भावनाएँ हैं और आजीविका के लिए गंभीरतापूर्वक इसके अभ्यास से क्या परिणाम प्राप्त हो सकते हैं? आज मैं कुछ साहस के साथ कह सकता हूँ कि हम लोगों के बीच में कुछ ऐसे कलाकार हैं और उनमें कुछ नवयुवक विद्यार्थी भी हैं जिन्होंने वास्तव में अच्छे प्रस्तर आलेख्य तैयार किए हैं और आगे भी तैयार कर सकते हैं और जिनको संसार में अन्य देशों के सर्वोत्तम प्रस्तर आलेखों के समकक्ष रखा जा सकता है। लेकिन शायद यह बात लोगों को आसानी से स्वीकार नहीं क्योंकि प्रथम तो इस मूल प्रतिलिपि की कोई चिन्ता नहीं करता दूसरे इस विषय पर हमारे यहाँ कोई लिखित साहित्य या गम्भीर विचारधारा नहीं है।

सन् 1946-47 में जब मैं पेरिस और लन्दन में कुछ आधुनिक भारतीय चित्रों को लेकर गया तो मैंने प्रस्तर आलेख्य कला के कुछ नमूने भी ले लिए जिन्हें मैंने भारत भर में एकत्र किया था। और सुन्दर प्रस्तर आलेख्य मुझे बम्बई, शान्ति निकेतन, कलकत्ता और दिल्ली में मिले थे। मैंने देखा कि वहाँ कला पारखियों ने जिनमें कुछ विश्वविद्यालयों के विशेष ख्यातनामा कलाकार भी थे

हमारे आदर्शों को सम्मान की दृष्टि से देखा और यह जान कर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ कि प्रस्तर आलेख कला का हमारे देश में इतना विकास हो चुका है और इस कला में हमारे कलाकार पूर्ण कुशल हैं।

आलोचक तथा कला प्रिय जनता के द्वारा हम यह याद दिलाया जा रहा है कि कलाकृतियाँ सस्ते दामों में, जिन्हें कोई भी सामान्य साधन वाला व्यक्ति ले सके, उपलब्ध होनी चाहिए। लेकिन आज तो दशा यह है कि पुस्तक रूप में प्रकाशित विशेष सुन्दर प्रतिलिपियाँ भी जिनका मूल्य काफी कम होता है लोगों का ध्यान आकर्षित नहीं कर पातीं। मैंने कुछ ऐसे लोगों से इस सम्बन्ध में बातें कीं जो अपनी कलात्मक अभिरुचि पर गर्व करते हैं। पर मैंने देखा कि ऐसी पुस्तकों का आदर करने वाली दृष्टि से वे शून्य थे। उनमें अधिकांश तो यह भी नहीं जानते थे कि प्रस्तर आलेख और एचिंग या वुडकट में क्या अन्तर है।

कलात्मक प्रस्तर आलेख मूल चित्रों के समान ही सुन्दर होता है। इस प्रकार के आलेख मूल आलेख या प्रतिलिपि कहे जाते हैं। हमारी सार्वजनिक या निजी संस्थाएँ इन मूल प्रतिलिपियों या आलेखों द्वारा सस्ते मूल्यों में सजाई जा सकती हैं। किसी सस्ते सार्वजनिक भवन, पुस्तकालय, निजी अध्ययन कक्ष आदि में इन चित्रों को टंगा हुआ देखकर हर किसी को प्रसन्नता होगी। इससे संस्कृति, सभ्यता और सुन्दर अभिरुचि का सबक मिलता है और हमारी विक्षुब्ध चित्त-वृत्ति को भी शान्ति मिलती है।

वुडकट

इस कला शैली के बारे में श्री प्रभाकर माचवे ने इस प्रकार लिखा है—लकड़ी का गुम्फ या रिलीफ (उभार) काम के अनेक प्रकारों में एक मुद्रण सुलभ प्रकार है 'वुडकट'। किताबों की छपाई में प्रारम्भ में यूरोप में इसका चलन कहानियों अथवा कविताओं के अलंकरण के रूप में विशेष रूप से किया गया। ईसा की पन्द्रहवीं शताब्दी से यह कला चली आ रही है। यह साधारणतः चेरी, पाइन, बीच, सेब, नाशपाती आदि पेड़ों की लकड़ी के टुकड़ों में से काट-छाँट कर बनाए जाते थे। इनमें जिन रेखाओं को स्याही लगाकर दबाव से चित्रित करना होता था वे ही उभारी जाती थीं या फिर काले धरातल में श्वेत रेखाओं में भी ये चित्र बनाए जाते थे। आरम्भ में इस माध्यम से चित्र

का केवल ढाँचा या रूपरेखा मात्र प्रस्तुत की जाती थी। अब काले और सफेद टुकड़ों की बनावट में कई प्रकार के कलात्मक चित्र प्रस्तुत किए जाने लगे हैं। लकड़ी के गुटके पर लिनोलियम नामक नरम रबर जैसे पदार्थ चिपकाकर भी खुदाई में कलाकृतियाँ और चित्र बनाए जाते हैं। यह 20वीं शताब्दी की कला है अपेक्षाकृत सरल भी है परन्तु लिनोलियम पर लकड़ी जैसा महीन काम नहीं किया जा सकता।

वुडकट के प्राचीन चित्रकार हैं एल० क्यूरेट। 16वीं शताब्दी के बाद यह कला विशेष लोकप्रिय नहीं रही परन्तु 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में पाल गॉगिन ने इसका उपयोग अलंकरणमय चित्रों की दृष्टि से शुरू किया जो अब भी कई कलाकार कर रहे हैं। यूरोप और अमेरिका में एचिङ्ग तथा लिथोग्राफी का भी प्रयोग विशेष बढ़ा, परन्तु पर्चे ईश्तहार और मजिल्दों के वुडकट आज तक भी बहुत प्रचलित हैं।

इन वुडकटों के कई गुटके भिन्न भिन्न रंगों के बनाकर उनसे रंगीन चित्र भी बनाए जा सकते हैं। सत्रहवीं तथा अठारहवीं शताब्दी में इटली से चिआरस्कूरो नाम से काले सफेद और हल्के भूरे रंग के गुटकों से बड़े-बड़े प्रसिद्ध चित्रों की प्रतिकृतियाँ प्रस्तुत की जाती थीं। बाद में विभिन्न रंगों का भी प्रयोग होने लगा। 18वीं और 19वीं शताब्दियों में जापान में विख्यात अभिनेताओं के विभिन्न रूपों के चित्रणों तथा दृश्यों के लिए भी वुडकट बहुत प्रचलित थे। चीन में वुडकट प्राचीन काल से चले आते हैं परन्तु अब अलङ्कृत लिपि के रूप में हो जाने से उनकी कलात्मकता बहुत घटिया हो गई है। परन्तु कई रंगों के वुडकटों का एक साथ जितना अच्छा और सूक्ष्म प्रयोग जापान में होता है उतना यूरोप में नहीं होता। इन चित्रों का प्रभाव वानगाग, गॉगिन और विसलर जैसे इम्प्रैशनिज्म के प्रथम आचार्यों पर भी बहुत अधिक पड़ा है।

वुडकट में जहाँ सीधी सादी और सपाट रेखाओं तथा धरातलों का ही सतुलन विशेष होता है वहाँ नक्श में खोदने के काम में और भी बारीकियाँ आ सकती हैं। इसमें कला के माध्यम के द्रव्य की पूरी पूरी प्रयोजनीयता रखी जाती है। इस तरह काम में अधिक सूक्ष्मता और कोमलता की अधिक सम्भावनाएँ रहती हैं। अतएव नवीन चित्रकारों में यह अधिक प्रचलित और

प्रिय बना है। एक प्रकार की कृत्रिम-लकड़ी (सिंथेटिक फाइबर वुड) इस काम में अधिक उपयोगी है।

इस प्रकार की काठ-खुदाई से आरम्भ करके ताम्र या अन्य धातुओं के पत्रों पर एचिंग, अक्वाटिन्ट, ड्राइप्वाइन्ट, मेज्जोटिंट, रेशम पर सेरिग्राफ आदि कई प्रकार अब कला के रूप में पश्चिम में चल पड़े हैं, यद्यपि भारत में वे सब अभी इतने विकसित नहीं हुए हैं। भारत में वैसे देहाती छपाई के साधन के रूप में लकड़ी के ठप्पे और उनके फूल, बेल बूटों के छापे यद्यपि बहुत पुराने हैं फिर भी नये रूप में वुडकट कला भारत में बहुत ही आधुनिक और प्रायः अविकसित अवस्था में ही है। बंगाल में सर्वश्री विश्वबन्धु बसु, रमेन्द्रनाथ चक्रवर्ती, मनीष डे, सुधीर खास्तगीर, प्रभात नियोगी, परितोष सेन, सफन्न घोषाल, अमित हलधर, सरोज मुखोपाध्याय, चित्त प्रसाद आदि ने इस माध्यम को विशेष रूप में अपनाया है।

इनमें श्री रमेन्द्र चक्रवर्ती बहुत ही सफल रूप से इस कला को अभिव्यक्त करते रहे। कलकत्ते में सन् 1941 में जो ग्राफिक कलाओं का प्रदर्शन हुआ उसके विषय में एक कला समीक्षक ने नवम्बर 1941 के माडर्न रिव्यू में लिखा था— "रंगीन काठ-खुदाई सरल और नौसिखुए का काम नहीं है क्योंकि उसमें न केवल रेखा पर बहुत अधिकार आवश्यक होता है वरन उसमें एक सम्पूर्ण प्रभाव को समन्वित रूप में प्रस्तुत करने की शक्ति आवश्यक होती है। विशेषतः यह कला इसलिए और कठिन है कि इसमें रंगों की सीमाएँ स्पष्ट हैं, जिनसे बाद भी एक आवश्यक कलात्मक पूर्णता अभिव्यंजित होनी है।"

बम्बई की चित्रशाला में यद्यपि विदेशी प्रभाव पर्याप्त मात्रा में है, आधुनिक और विज्ञापन कला के भी विशेष प्रयोग हुए हैं तथापि किसी ने इस माध्यम को विशेष रूप से अपनाया हो ऐसे उदाहरण बहुत थोड़े हैं। कुछ छुट-पुट प्रयोग चित्रकार एन० एस० बेन्द्रे, मनोहर जोशी, मालवणकर, धारूरकर, दाण्डेकर, डी० जी० आचरेकर, देउस्कर, भागी, कमल जोशी तथा भोलानाथ ध्यान ने भी किए हैं। ध्यान के कुछ चित्र उन्हीं के द्वारा सम्पादित दीपावली नामक मासिक के एक अंक में देखने को मिलते हैं। गुजरात के कनु देसाई, सोमालाल शाह, चावड़ा, गोस्वामी आदि ने लिनोकट तथा अन्य प्रकार के एक नवरंगी युक्त वुडकट के योग्य चित्र उपस्थित अवश्य

किये हैं परन्तु वहाँ भी अलंकरणमयी गोल रेखा पर अधिक जोर देने से कोण-वाली रचना का महत्व विशेष नहीं रहा। भारत के मध्य प्रदेश राजस्थान मालवा तथा उत्तर प्रदेश और पार्वत्य प्रदेशों में वुडकट का वही प्राचीन यानी कपड़ा छापने के छापों में अधिक कोई बड़ा प्रयोग शायद ही हुआ हो, यद्यपि दिल्ली लखनऊ और पटना आदि में कुछ व्यापारिक कलाकार इस कला रूप को अधिकाधिक अपनाने लगे हैं और इसके प्रति प्रेम बढ़ता जा रहा है।

वुडकट की कला में कुछ कठिनाइयाँ अथवा सीमाएँ बहुत स्पष्ट हैं। उनमें सब प्रकार के विषयों तथा वातावरण का चित्रण सम्भव नहीं होता। रेखाओं में एक दूसरे से स्वतन्त्र और दूर दूर रहने के कारण उनमें एक प्रकार की स्वाभाविक प्रवाह की मायता नहीं आ पाती। उसके अंकन में पर्याप्त समय और कुशलता की आवश्यकता होती है अतः उस सरलता से सभी चित्रकार अपना नहीं पाते बल्कि चित्र और अन्य शिल्प के बीच की कड़ी जोड़ने वाली यह अद्भुत सम्भावनाओं से भरा एक बहुत ही मनोरंजक कला होती है।

लोक कला

लोक कला की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि उसकी जड़ें देश की धरती में गहरी घुसी रहती हैं। सच्चा कलाकार जब लोक कला की किसी भी कृति को देखता है उसकी अन्तर्वीणा बज उठती है। अब यह उसका काम है कि वह लोक कला से प्राप्त प्रेरणा का कैसे उपयोग करता है।

शैलियाँ अनेक हैं—प्राचीन तथा नवीन। विद्यालय में कला शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् जब एक कलाकार समाज में उपस्थित होता है और विस्तृत रूप से अपने चारों ओर के जीवन का अध्ययन करता है तब उसे यह निश्चय करना होता है कि उसकी तूलिका किस दिशा में चले किस शैली को अधिक महत्व दे रेखाओं और रंगों को कैसे साधू में रखते हुए किस प्रकार अपने अनुभव की अभिव्यक्ति करे। किसी विशेष अनुभूति के लिए कभी कभी कोई विशेष शैली अधिक उपयोगी सिद्ध होती है परन्तु यथार्थ तो यह है कि प्रत्येक अनुभूति अपने साथ नवीन शैली लाती है।

प्रश्न

1 चित्रकला की नवीन शैलियों के नाम लिखो और किसी एक शैली का वर्णन करो।
2 वुडकट शैली का वर्णन करो।
3 लोक कला शैली की विशेषताओं का वर्णन करो।
4 लिथोग्राफ शैली का वर्णन करो।

अध्याय 24

भारतीय कला का अनुशील

कला सौन्दय को प्र यग करन का साधन है। प्रत्येक कलात्मक रचन सौन्य व श्री का निवास रहता है।

कहा जाता है कि आनन्द के अनुभव के लिए विश्वकर्ता न सृष्टि की रचन की। वह स्वय हमस तृप्त है। कला तथा साहित्य भी रसानुभव का एक अत्यन्त प्रिय द्वार है। कला क अक म पोषित समाज को सृष्टि सम्बन्धी श्री प्राण और रस का अपूर्व अनुभव प्राप्त होता है।

भारतीय कला का भूमापन

जहाँ नई रचना का भाव रहता है वही विषय का विक्रम विद्यमान है भूमापन की ही वन्नि सना विक्रमण है। कल्पना के लोक म नए-नए भाव की सृष्टि करना राष्ट्रीय चिन्तन का उत्थान पक्ष है। स्थापत्य, शिल्प चित्र आदि इनके अनक रूप—सुधर्मा सभा म देवों की तरह प्रत्यक्ष दशन दने लगत हैं औ उनक समन्वय म चित्रकला का भवन जगमगान लगता है। कला की लिपि म आविष्कार कलाविदों की उत्कृष्ट साधना का परिणाम होता है।

भारतीय कला का अलकरण

भारतीय कला म सौन्य विधान क लिए अनक अलंकरणों का प्रयो हुआ है। सजावट के बिना कला सम्भ्रान्त नही बनती। लताओ और वृक्ष वनस्पतियो न कला क स्वरूप को अनक प्रकार स सवारन म सहायता दी है

भारतीय कला म लोक सपुजन

भारतीय कला क उत्तर विकास पर लोक क सर्वाङ्गीण जीवन का प्रति बिम्ब पड़ा है। हमारा भारतीय चित्रकला जीवन का समग्र चित्र प्रस्तुत करत

। कला की ही सहायता से हम लोक विश्वरूपी जीवन को समझने का साधन प्राप्त करते हैं। पत्र और पुष्पों से तो भारतीय कला के अनेक अलंकरण और अभिप्रायों की सृष्टि हुई है। भारतीय चित्रकला की उपकरण सामग्री में नाना प्रकार के आभूषणों तथा नेपथ्य को भी अच्छा स्थान प्राप्त हुआ है।

भारतीय कला और साहित्य

'भारतवर्ष में साहित्य ने कला के रूप को समृद्ध भी किया है तथा कला ने साहित्य की व्याख्या की है। कला के उदाहरण में जो अर्थ मूक रूप से स्थित है वह साहित्य की भाषा और शब्दावली से सजीव होकर अपना अर्थ देता। जिस प्रसंग में कला तथा साहित्य इस प्रकार मिल जाते हैं वहाँ रसानुभव कभी विचित्र होता है। यह कहना अत्युक्ति न होगा कि भारतीय कला एक प्रकार से साहित्य की ही मार्मिक व्याख्या है। कला के मिश्र ज्ञान के बिना साहित्यिक अध्ययन अधूरा और साहित्य की सूक्ष्म जानकारी के बिना कला की समीक्षा संकुचित रह जाती है क्योंकि कला तथा साहित्य दोनों का समान भाव से योजक रस तत्त्व एक ही है।

भारतीय चित्रकला की विशेषताओं के विषय में प्रो० एस० के० वर्मा के निम्नलिखित शब्द हैं—

'भारत की चित्रकला चित्रकार के लिए पवित्र साधना है, उसकी रस व्यंजना का अलौकिक आनन्द है। यूरोप के चित्रकारों तथा साधारण जनता के लिए वह एक दम लौकिक है, उसकी सौंदर्य लिप्सा का एक उपकरण तथा मनोरंजन का अङ्ग बनाई जाती है।

भारतीय चित्रकला भारत के चित्रकार के लिए प्रकाशन होने के कारण काल्पनिक है। भारतीय चित्रों में अलंकारिकता का स्थान है। सत्य के साथ उसमें सुन्दरता भी है। भारतीय चित्रकला में उपमाओं का प्रयोग इसका एक उदाहरण है। इसमें आँखें कमल की पखुड़ी के समान कमर सिंह की भाँति बताई जाती है।

भारतीय कला में दृश्यों को जान जान चित्र मिलेंगे। इसका दृश्य वर्णन काल्पनिक होता है। भारतीय चित्रकार दृश्य रचना एक विशेष दृष्टि बिन्दु से न करके अनेक अन्य बिन्दुओं से दृश्य का मूल घूम फिर कर दृश्य-र करता है।

भारतीय चित्रकला की सबसे बड़ी विशेषता उसकी रेखायें है। इनमें भाव है तथा वे सब शक्तिमान होती है। इन्हीं के द्वारा प्रत्येक मुद्रा को अच्छे ढङ्ग से अङ्कित किया गया है जिनमें एक प्रकार की सूक्ष्मता बनी रहती है।

भारतीय चित्रकला का रंग विधान सादा है। रंग लेप के समान चढ़ाये जाते हैं तथा उनमें छाया प्रकाश के नियमों का भी पालन होता है। स्थायी गोलाई भी उत्पन्न की जाती है।

भारतीय चित्रकला का धर्म से अभिन्न सम्बन्ध है।

प्रश्न

1 भारतीय चित्रकला के अनुशीलन का वर्णन करो।
2 भारतीय चित्रकला की विशेषताओं का वर्णन अपने शब्दों में करो।

